Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946
94251-01132

Supported by:
Kisaan Helpline
+91-7415538151

मध्य भारत कृषक भारती

READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com
ISSN-2582-5976

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

वर्ष-21 अंक-5 | ग्वालियर, अगस्त 2026 | मूल्य 30 रुपए

किसान भाईयों एवं बहनों

सतर्क रहें-सावधान रहें

यदि कोई आपको नक्ली बीज खाद या कीटनाशक बेचने का प्रयास करे तो उसकी सूचना तुरंत दें

किसान कॉल सेंटर

टोल फ्री नंबर

1800-180-1551

प्रातः 6:00 बजे से रात्रि 10:00 बजे तक

याद रखें - आपकी शिकायत ही आपकी फसल की रक्षा है

किसान कॉल सेंटर

1800-180-1551 (6 AM - 10 PM)

स्कैन कर हमें फॉलो करें

सौजन्य से: मध्य भारत कृषक भारती द्वारा जनहित में जारी

साइबर अपराधियों पर लगे शिकंजा

संयुक्त राष्ट्र की एक चौंकाने वाली रिपोर्ट के अनुसार साल 2025 में एशिया प्रशांत क्षेत्र के नागरिकों को साइबर ठगी और ऑनलाइन धोखाधड़ी के जरिये साइबर अपराधियों ने 114 अरब डॉलर तक का नुकसान पहुंचाया है। यानी साइबर अपराधियों ने भौगोलिक सीमाओं को तोड़कर एक समानांतर आर्थिक साम्राज्य खड़ा कर दिया है। दरअसल, आधुनिक तकनीक का दुरुपयोग करके साइबर अपराधी डिजिटल अरेस्ट, डीपफेक, क्रिप्टोकरेंसी व फर्जी निवेश के प्रलोभन तथा विदेशों में नौकरी के सब्जबाग दिखाकर लोगों को लूट रहे हैं। भारत भी इस संकट से अछूता नहीं है। गाहे-बगाहे बुजुर्गों व सेवानिवृत्त अधिकारियों की जीवन-भर की जमा पूंजी लूटने के मामले भारत में प्रकाश में आते रहते हैं। साथ ही इसे कड़ी सजा वाले एक अलग अपराध के तौर पर घोषित किया जाए। निश्चित रूप से डिजिटल अरेस्ट के बढ़ते अपराधों के चलते ऐसे मामलों में गंभीरता से विचार करने की जरूरत है। दरअसल, डिजिटल अरेस्ट में अपराधी ऑडियो व वीडियो कॉल के जरिये पुलिस, अन्य जांच एजेंसियों के अधिकारी, अदालत के कर्मचारी तथा सरकारी अधिकारी बनकर पीड़ितों को इतना आतंकित करते हैं कि वे भयभीत होकर अपनी जीवनभर की जमा पूंजी लुटवा बैठते हैं। बीते साल भी अंबाला के एक ऐसे ही जोड़े के पत्र के आधार पर कोर्ट ने स्वतः संज्ञान लिया था। हाल में संसद में प्रस्तुत आंकड़ों के अनुसार साल 2024 में भारतीयों ने विभिन्न साइबर धोखाधड़ी के मामलों में 22,845 करोड़ रुपये गंवा दिए। इस दौरान साइबर अपराध की करीब 22 लाख घटनाएं सामने आई थीं। ऐसे में जरूरी हो जाता है कि इस तरह के अपराधों से निपटने के लिये किए जा रहे बहुआयामी प्रयासों को एक मजबूत कानूनी ढांचा प्रदान किया जाए।

दरअसल, पुरानी पीढ़ी डिजिटल दुनिया की जटिलताओं और प्रलोभनों से इन अपराधियों के बुने जाल में फंस जाती है। यही वजह है कि सुप्रीम कोर्ट ने सुझाव दिया है कि आपराधिक कानूनों में 'डिजिटल अरेस्ट' को औपचारिक रूप से परिभाषित किया जाए।

निश्चित रूप से साइबर अपराध अब कभी-कभार होने वाली घटनाएं नहीं रह गई हैं। आज यह लगातार परेशान करने वाली हकीकत है। दरअसल, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और ऑटोमेशन की सहायता से साइबर अपराधी नित नये और जटिल तरीकों से लोगों के बैंक खातों में सेंध लगाने का काम कर रहे हैं। इस संकट से निपटने में हमारी बैंकिंग व्यवस्था व नियामक वित्तीय अनुशासन बनाने वाली संस्थाएं कामयाब नहीं हो पा रही हैं। जैसे-जैसे प्रवर्तन एजेंसियां व पुलिस साइबर अपराधियों पर शिकंजा कसने की कोशिश में नई तकनीकों का उपयोग करते हैं, साइबर अपराधी नये तौर-तरीकों के जरिये और आगे निकल जाते हैं।

NMEO योजना से किसान बेसाहू राम की खेती को मिली नई दिशा

किसानों की आय में वृद्धि तथा तिलहनी फसलों के उत्पादन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कृषि विभाग द्वारा राष्ट्रीय खाद्य तेल मिशन-ऑयल पाम एवं तिलहन (NMEO) योजना का प्रभावी क्रियान्वयन किया जा रहा है। योजना के तहत किसानों को उन्नत बीज, आधुनिक कृषि तकनीकों की जानकारी एवं समय-समय पर तकनीकी मार्गदर्शन उपलब्ध कराया जा रहा है, जिससे किसानों को बेहतर उत्पादन की दिशा में सकारात्मक परिणाम मिल रहे हैं।

सरगुजा जिले के ग्राम ईरगवां निवासी किसान बेसाहू राम ने कृषि विभाग से संपर्क कर NMEO योजना का लाभ लिया। विभाग द्वारा उन्हें 40 किलोग्राम उन्नत किस्म का मूंगफली बीज निःशुल्क उपलब्ध कराया गया, जिसे उन्होंने अपनी एक एकड़ कृषि भूमि में बोया है। बेसाहू राम ने बताया कि ग्राम कृषि विस्तार अधिकारी के मार्गदर्शन में खेत की समुचित तैयारी, वैज्ञानिक तरीके से बुवाई तथा फसल प्रबंधन किया गया। आधुनिक कृषि पद्धतियों को अपनाने से बीज का अंकुरण उत्कृष्ट हुआ है और फसल की बढ़वार भी संतोषजनक है। वर्तमान स्थिति को देखते हुए इस वर्ष मूंगफली की अच्छी पैदावार होने की पूरी संभावना है, जिससे उनकी आय में उल्लेखनीय वृद्धि की उम्मीद है।

सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)	मुंगावली (म.प्र.)	उड़ीसा
रामप्रकाश रघुवंशी	भगवानदास चौबे	समीर रंजन नायक
98272-78063	96854-88453	70422-31678
***	बलिया (उ.प्र.)	***
नरसिंहपुर (म.प्र.)	आर.एन. चौबे-94535-77732	हापुड़ (उ.प्र.)
नवीन शुक्ला: 89894-36330	पश्चिम बंगाल राजेश नायक-98831-57482	मयंक गौड़: 83848-66823

Online मंगाएं साहित्य

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 20 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 21 से 30 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है। -संपादक

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मध्य भारत कृषक भारती

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें 0751-4070802

▪ वार्षिक ₹ 400 ▪ द्विवार्षिक ₹ 750 ▪ पंचवार्षिक ₹ 1800

▪ वर्ष 21 ▪ अंक 05 ग्वालियर, अगस्त 2026 मूल्य ₹ 30/-

: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक

राजू गुर्जर (MJC)

94251-01132

94245-22090

❖

प्रसार/मार्केटिंग टीम

डी.के. बरार

91791-85002, 70247-93010

महेश अहिरवार: 94251-48365

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया
कृषि विश्वविद्यालय
***
डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव
(Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन
महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
***
डॉ. आर.के.एस. तोमर
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि.
ग्वालियर (म.प्र.)
***
डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण),
डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले
विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)
***
डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा उद्यान महाविद्यालय,
नूरसराय (नालन्दा), बिहार कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर
***
डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि
विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
***
डॉ. विश्वनाथ सिंह कंसाना
कृषि वैज्ञानिक (कृषि प्रसार)
कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)
***
तपस्या तिवारी पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और
कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि
और प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
***
बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस
हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)
***
श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542
***
डॉ. मोहब्बत सिंह जमरा (असिस्टेंट प्रोफेसर)
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन
महाविद्यालय, महू, (म.प्र.)

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- बुवाई से पहले बीज का उपचार... 07
- एल नीनो और मानसून- भारतीय कृषि की चिंता 08
- ब्रॉयलर ब्रीडर फार्म का वैज्ञानिक प्रबंधन... 09
- गोवंशीय पशुओं में होने वाली एक टगिया रोग 10
- संरक्षित खेती 11
- पशुओं में निदान परीक्षण 12
- मक्का में रेज्ड बेड (उठी हुई क्यारी) विधि के प्रमुख लाभ 13
- कृषि में कृत्रिम बुद्धिमत्ता: एआई से स्मार्ट खेती की ओर 14
- कम लागत में प्रोटीन की आपूर्ति (पशु चारे का यूरिया उपचार) 15
- सूअर के बच्चों (पिगलेट्स) की देखभाल, पोषण और सफल.. 16
- किसानों की आय दोगुनी करने में कृषि विस्तार सेवाओं की भूमिका 17
- 18% प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट (प्लांट-बेस्ड):... 18
- जॉब लॉस कवर: आपकी फाइनेंशियल स्थिरता की सुरक्षा 19
- गोवंशीय पशुओं में थिलेरिया रोग 20
- गर्भकालीन विश्राम, दुग्ध उत्पादन में विस्तार 21
- तेज़ वृद्धि, बेहतर आय का नया साधन... 22

उत्तर प्रदेश

- भविष्य की खाद्य प्रणालियां एवं खाद्य परिवर्तन में .. 23
- गेहूं: समस्या या समाधान? स्वास्थ्य पर... 24
- फलों एवं सब्जियों के उप-उत्पादों का उपयोग 25
- प्रीसिर्जन कृषि और आधुनिक तकनीकों .. 26
- फल एवं सब्जी फसलों का कटाई उपरांत प्रबंधन: .. 27
- बुंदेलखंड की मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी.. 28
- मृदा संरक्षण की दिशा में आईसीएआर... 29
- डायरेक्ट सीडेड राइस... 30
- जैविक खेती: सतत कृषि की ओर... 31
- डिजिटल खेती, स्मार्ट किसान:... 32
- बकरी प्रबंधन का महत्व एवं सामान्य देखभाल 33
- भारत में जल संकट की वर्तमान स्थिति 34

राजस्थान

- शिमला मिर्च में एकीकृत कीट एवं रोग प्रबंधन 35
- वृक्षायुर्वेद श्रृंखला-उपवनक्रिया:... 36
- मिर्च में लगने वाले प्रमुख रोग एवं उनका समेकित प्रबंधन 37

नई दिल्ली

- फलों एवं सब्जियों के कटाई-पश्चात प्रबंधन .. 38

झारखण्ड

- मिनी ऑयल एक्सपेलर: 39

हरियाणा

- फसल अवशेष प्रबंधन:... 40
- सरसों में स्केलेरोटिनिया स्टेम रॉट का आणविक .. 41
- केंचुआ खाद उत्पादन से बदली खेती की तस्वीर:... 42
- व्यावसायिक स्वास्थ्य एवं व्यावसायिक जोखिम 43

बिहार

- बिहार में मखाना की खेती:... 44

उत्तराखण्ड

- जलवायु-स्मार्ट उद्यानिकी:... 45

हिमाचल प्रदेश

- मोरिंगा: पोषक तत्वों से भरपूर एवं स्वास्थ्यवर्धक सब्जी 46
- सब्जी उत्पादन के लिए ड्रोन तकनीक 47

जम्मू कश्मीर

- कालमेघ की वैज्ञानिक खेती:... 48

प्रधानमंत्री की सेशेल्स यात्रा में भारत-सेशेल्स के बीच कृषि सहयोग पर हुआ अहम समझौता

जलवायु परिवर्तन और खाद्य सुरक्षा की चुनौतियों से निपटने पर फोकस

नई दिल्ली। प्रधानमंत्री की सेशेल्स गणराज्य की आधिकारिक यात्रा के दौरान भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) और सेशेल्स के मत्स्य पालन, कृषि एवं नीली अर्थव्यवस्था मंत्रालय के कृषि विभाग के बीच कृषि अनुसंधान और शिक्षा के क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने के लिए एक समझौता ज्ञापन (एमओयू) पर हस्ताक्षर किए गए। इस समझौते का उद्देश्य दोनों देशों के बीच कृषि अनुसंधान, शिक्षा, क्षमता निर्माण और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण को नई गति देना है।

संयुक्त अनुसंधान और प्रौद्योगिकी साझाकरण पर रहेगा जोर

समझौता ज्ञापन के तहत दोनों देश संयुक्त अनुसंधान कार्यक्रमों को बढ़ावा देंगे। इसके साथ ही वैज्ञानिकों, शोधकर्ताओं और छात्रों के आदान-प्रदान, उन्नत कृषि प्रौद्योगिकियों के साझा उपयोग तथा सर्वोत्तम कृषि प्रणालियों को अपनाने के लिए सहयोग बढ़ाया जाएगा। समझौते के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए दोनों पक्षों ने वर्ष 2026 से 2031 तक की पंचवर्षीय कार्ययोजना पर भी हस्ताक्षर किए। इस कार्ययोजना में जलवायु-अनुकूल कृषि, बागवानी, फसलोत्तर प्रबंधन, पशुधन विकास तथा टिकाऊ खाद्य और पोषण सुरक्षा जैसे प्रमुख क्षेत्रों को प्राथमिकता दी गई है। इस सहयोग का उद्देश्य संस्थागत संबंधों को मजबूत करना, कृषि उत्पादकता बढ़ाना, तकनीकी क्षमता का विकास करना तथा जलवायु परिवर्तन और खाद्य सुरक्षा जैसी उभरती चुनौतियों का प्रभावी समाधान तैयार करना है। साथ ही सतत कृषि विकास को भी बढ़ावा दिया जाएगा।

वैश्विक कृषि सहयोग का विस्तार कर रहा है आईसीएआर

आईसीएआर विश्वभर के साझेदार संस्थानों के साथ 100 से अधिक समझौता ज्ञापनों के माध्यम से भारत की वैश्विक कृषि साझेदारी का लगातार विस्तार कर रहा है। सेशेल्स के साथ यह नया समझौता ग्लोबल साउथ के देशों के साथ भारत की भागीदारी को और मजबूत करेगा तथा सतत कृषि, नवाचार और वैश्विक खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को बढ़ावा देने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम माना जा रहा है।

सहकारी सप्ताह के अंतर्गत राज्य स्तरीय सहकारी प्रदर्शनी का शुभारंभ

भोपाल। सहकारिता मंत्रालय, भारत सरकार की स्थापना के पाँच वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में आयोजित सहकारी सप्ताह के अंतर्गत मध्यप्रदेश राज्य सहकारी संघ मर्यादित, भोपाल द्वारा आयोजित तीन दिवसीय राज्य स्तरीय सहकारी प्रदर्शनी का शुभारंभ सहकारिता, खेल एवं युवा कल्याण मंत्री विश्वास कैलाश सारंग ने किया। कार्यक्रम का शुभारंभ दीप प्रज्वलन के साथ हुआ। मंत्री श्री सारंग ने फीता काटकर प्रदर्शनी का विधिवत उद्घाटन किया तथा विभिन्न सहकारी संस्थाओं, राष्ट्रीय सहकारी संगठनों, शासकीय विभागों, महिला स्व-सहायता समूहों एवं उत्पादक संगठनों द्वारा लगाए गए स्टॉलों का अवलोकन किया। उन्होंने प्रदर्शित उत्पादों, नवाचारों एवं सेवाओं की जानकारी प्राप्त कर प्रतिनिधियों से संवाद किया।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885

अमित राय
मैं. माँ उर्वरक केन्द्र
रसायनिक एवं जैविक खाद बीज एवं दवाई के विक्रेता

पताः भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)
03/2025-26

बैंक सखी ने बदली गांव की तस्वीर : घर-घर पहुंचीं बैंकिंग सेवाएं

जबलपुर। कभी पेंशन निकालने या बैंक का छोटा-सा काम कराने के लिए ग्रामीणों को कई किलोमीटर दूर शाखा तक जाना पड़ता था। घंटों लाइन में लगने के बाद भी पूरा दिन निकल जाता था। अब गांव में ही बायोमैट्रिक मशीन पर अंगूठा लगाते ही कुछ मिनटों में बैंकिंग सेवाएं मिल रही हैं। यह बदलाव राज्य ग्रामीण आजीविका मिशन (एसआरएलएम) की बैंक सखियों की बदौलत आया है। बैंक सखियां न सिर्फ ग्रामीणों को बैंकिंग सुविधाएं उपलब्ध करा रही हैं, बल्कि स्वयं सहायता समूहों की महिलाओं को ऋण उपलब्ध कराने और उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त बनाने में भी अहम भूमिका निभा रही हैं। जिले के 78 गांवों में अलग-अलग बैंकों से जुड़ी बैंक सखियां सेवाएं दे रही हैं। इनमें बड़खेरी गांव की क्षमा ठाकुर बैंक सखी के साथ कम्युनिटी रिसोर्स पर्सन के रूप में भी महिलाओं को जागरूक कर रही हैं।

बैंक से मिला तकनीकी प्रशिक्षण

कुछ वर्ष पहले तक क्षमा ठाकुर भी एक सामान्य गृहिणी थीं। बैंक से जुड़े कामों के लिए उन्हें परिवार के अन्य सदस्यों पर निर्भर रहना पड़ता था। स्वयं सहायता समूह से जुड़ने के बाद उनकी जिंदगी बदली। उनकी सक्रियता को देखते हुए आजीविका मिशन ने उन्हें बैंक सखी के रूप में चयनित किया। इंडियन बैंक के सहयोग से उन्हें माइक्रो एटीएम, आधार आधारित भुगतान प्रणाली, डिजिटल बैंकिंग और वित्तीय साक्षरता का प्रशिक्षण दिया गया।

गांव में ही मिल रही बैंकिंग सुविधा

प्रशिक्षण के बाद क्षमा ठाकुर इंडियन बैंक से जुड़कर ग्रामीणों को नकदी निकासी, जमा, बैलेंस जांच और अन्य बैंकिंग सेवाएं गांव में ही उपलब्ध करा रही हैं। इसका सबसे अधिक लाभ बुजुर्गों, दिव्यांगों, महिलाओं और दूरदराज के ग्रामीणों को मिल रहा है। जिन लोगों का पूरा दिन बैंक जाने में खर्च हो जाता था, उनका काम अब कुछ ही मिनटों में पूरा हो जाता है। शुरुआत में लोगों को डिजिटल लेन-देन और फिंगरप्रिंट आधारित बैंकिंग पर भरोसा नहीं था, लेकिन लगातार जागरूकता और सफल लेन-देन के बाद ग्रामीणों का विश्वास बढ़ा। अब अधिकांश लोग बिना झिझक डिजिटल माध्यम से बैंकिंग सेवाओं का उपयोग कर रहे हैं।

शकरकंद रोपण पद्धति का खेत जाकर प्रशिक्षण दिया

शिवपुरी। शिवपुरी जिला उद्यानिकी फसलों की खेती प्रतिवर्ष प्रगाति कर रहा है। जिले इस समय मुख्य रूप से टमाटर, शिमला मिर्च, प्याज, लहसुन, कद्दू की खेती के साथ कृषकों का रूझान शकरकंद की खेती की ओर बढ़ रहा है। इस समय जिलें में इसका कुल रकबा 360 हेक्टेयर के आस-पास है कृषि विज्ञान केन्द्र, प्रमुख डॉ. पुनीत कुमार ने बताया की विगत वर्षो में जिले के क्षेत्र भ्रमण के दौरान देखा गया है की शकरकंद के खेतों में अधिक वर्षा की स्थिति में कंद सडन एवं फफूंदजानित बीमारियों का प्रकोप देखा गया है। इस समस्या के दृष्टिगत इस वर्ष खरीफ में शकरकंद की विभिन्न रोपण पद्धतियों के संबधं में केन्द्र उद्यानिकी वैज्ञानिक डॉ प्रशान्त कुमार गुप्ता द्वारा कृषकों के बीच जाकर उन्हें समूह में प्रशिक्षित की जा रहा है एवं कृषको के प्रक्षेत्र पर रोपण पद्धतियों का प्रदर्शन भी कराया जा रहा है। विगत दिवस इसी क्रम में कोलरस विकास खण्ड के किलावनी एवं चंदौरिया ग्राम इस तरह के प्रशिक्षण आयोजित की गये ताकि जिले के कृषको के खेतों पर जल भराव की स्थिति में शकरकंद की फसल को बचाया जा सके। केन्द्र के इस प्रयास में जिले का उद्यानिकी विभाग एवं सृजन संस्था का भी सहयोग मिल रहा है।

12/2025-26

बुवाई से पहले बीज का उपचार नहीं किया तो कॉलर रॉट व फफूंद जनित रोगों की आशंका, उत्पादन भी 15 से 25% हो सकता है कम : एक्सपर्ट सिन्हा

हेमन्त कुमार सिन्हा
कृषि वैज्ञानिक

बीजोपचार फसल का पहला सुरक्षा कवच है। जिस तरह इंसान बीमारी से बचाव के लिए टीका लगवाता है, उसी तरह बीज को बुवाई से पहले बीजोपचार देने से वह शुरुआती कीटों और फफूंदजनित रोगों से सुरक्षित रहता है। स्वस्थ बीज ही स्वस्थ पौधे और बेहतर उत्पादन की नींव है।÷ यदि बीज उपचार नहीं किया गया तो फसल में कॉलर रॉट, रूट रॉट, फफूंदजनित रोग तथा शुरुआती अवस्था में कीटों का प्रकोप बढ़ सकता है। इससे उत्पादन में 15 से 25 प्रतिशत तक कमी आ सकती है। विशेषज्ञों के अनुसार, बीजोपचार करने से बीज का अंकुरण अच्छा होता है, पौधों की प्रारंभिक वृद्धि बेहतर होती है तथा रोगों से सुरक्षा मिलती है। बीजोपचार के लिए रासायनिक एवं जैविक दोनों प्रकार के उपचार उपलब्ध हैं। फसल के अनुसार उचित दवा का चयन कर बीजोपचार करना चाहिए।

बीज उपचार नहीं करने पर क्या नुकसान?

बीजोपचार नहीं करने पर खरीफ फसलों में औसतन 15 से 25 प्रतिशत तक उत्पादन घट सकता है। यदि खेत में पहले से ही फफूंदजनित रोग मौजूद हों, तो नुकसान और अधिक हो सकता है। उपचारित बीजों में 14 से 25 प्रतिशत तक अधिक अंकुरण देखा गया है तथा स्वस्थ पौध तैयार होते हैं। यदि बीज में कीट, रोग या खरपतवार के बीज मिले हों तो उपचार करने से उनका प्रभाव कम किया जा सकता है।

किस फसल के बीज में कौन-से रोगों की आशंका, इसका क्या है उपचार

फसल	प्रमुख रोग	कैसे करें उपचार
उड़द	कॉलर रॉट	प्रति किलोग्राम बीज में 75त्न थायरम 2 ग्राम
सोयाबीन	कॉलर रॉट	प्रति किलोग्राम बीज में 3 ग्राम थायरम
मूंगफली	जड़ गलन	प्रति किलोग्राम बीज में 3 ग्राम थायरम
अरहर	जड़ गलन	3 ग्राम थायरम या 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम + 2 ग्राम थायरम प्रति किलोग्राम बीज

जैविक उपचार भी असरदार

जैविक उपचार भी असरदार : रासायनिक उपचार के साथ जैविक बीजोपचार भी प्रभावी है। एक किलो बीज में 8-10 ग्राम ट्राइकोडर्मा मिलाकर उपचार किया जा सकता है। 100 किलो बीज में लगभग 1 लीटर पानी का उपयोग किया जाता है ताकि जैव एजेंट बीज पर अच्छी तरह चिपक जाए। इसके बाद बीज को छाया में सुखाकर बुवाई करनी चाहिए। ट्राइकोडर्मा और स्यूडोमोनास जैसे जैव एजेंट मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीव बढ़ाते हैं और रोगजनक फफूंद को नियंत्रित करते हैं।

किसान आजमाएं ये प्राकृतिक तरीके

किसान आज भी अपनाते हैं पारंपरिक तरीके

1. **नमक घोल :** स्वस्थ और खराब बीज अलग करने के लिए उपयोगी। बाजरा और धान में यह तरीका अधिक अपनाया जाता है।

2. **नीम घोल :** नीम में मौजूद एजाडिरैक्टिन (Azadirachtin) प्रभावी कीट नियंत्रण में मदद करता है।

3. **गोमूत्र :** इसमें सूक्ष्म पोषक तत्व और रोगनाशक गुण पाए जाते हैं।

बीजोपचार करते समय इन बातों का रखें ध्यान

* उपचार हमेशा छाया में करें। * दवा की अनुशंसित मात्रा का ही उपयोग करें। * उपचारित बीज को खाने या पशुओं के चारे के रूप में उपयोग न करें। * उपचार के बाद बीज को अच्छी तरह सुखाकर ही बुवाई करें। * जैविक और रासायनिक उपचार साथ करना हो तो पहले रासायनिक उपचार करें, उसके बाद जैविक उपचार करें।

हितग्राही मूलक योजनाओं का लाभ लेने के लिए युवाओं को आगे आने के लिए प्रेरित करें

टीकमगढ़। कलेक्टर विवेक श्रोत्रिय की अध्यक्षता में आज कलेक्ट्रेट सभाकक्ष में टीएल बैठक आयोजित की गई। बैठक में कलेक्टर श्री श्रोत्रिय ने निर्देशित किया कि कृषि, उद्यानिकी, मत्स्य विभाग अंतर्गत हितग्राही मूलक योजनाओं का लाभ लेने के लिये युवाओं को आगे आने हेतु प्रेरित करें एवं शासकीय योजनाओं सब्सिडी आदि से सभी को परिचित कराएं। उन्होंने निर्देशित किया कि सभी विभाग हितग्राही मूलक योजनाओं से संबंधित जानकारी संधारित कर प्रस्तुत करें। स्वतंत्रता दिवस के संबंध में तैयारियों की समीक्षा की तथा सभी विभागों से उनके एक वर्ष की जानकारी उपलब्ध कराने हेतु निर्देशित किया। उन्होंने निर्देशित किया कि आयुष विभाग द्वारा संचालित वेलनेस सेंटर पर बुजुर्गों और लक्षित समूह को भेजना सुनिश्चित करें उन्हें सभी सुविधाएं उपलब्ध करायें ।

01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

डॉ. चंचल भार्गव (वरिष्ठ तकनीकि सहायक) कृषि विज्ञान केन्द्र, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
डॉ. सरिता सिंह वैज्ञानिक, केवीके छिंदवाड़ा
डॉ. निधि प्रजापति (वैज्ञानिक) कृषि विज्ञान केन्द्र, नरसिंहपुर (म.प्र.)

एल नीनो और मानसून– भारतीय कृषि की चिंता

*एल नीनो **(El Niño)** एक प्राकृतिक जलवायु घटना है, जिसमें प्रशांत महासागर के मध्य एवं पूर्वी भाग का समुद्री जल सामान्य से अधिक गर्म हो जाता है। इसका प्रभाव विश्वभर के मौसम पर पड़ता है। भारत में एल नीनो का सबसे बड़ा प्रभाव मानसून पर देखने को मिलता है। जलवायु परिवर्तन के इस दौर में 'एल नीनो' एक ऐसी प्राकृतिक घटना है, जिसका प्रभाव विश्वभर की मौसम प्रणालियो ं पर पड़ रहा है।*

भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए एल नीनो का असर बेहद महत्वपूर्ण हो जाता है। यह घटना प्रशांत महासागर के सतही जल के असामान्य रूप से गर्म होने से उत्पन्न होती है। जिसके कारण मानसून की प्रकृति प्रभावित होती है। भारत में लगभग आधी कृषि वर्षा पर निर्भर है। यहां एल नीनो किसानों के लिए गंभीर चिंता का विषय बन हुआ है। धान, मक्का, दालें और तिलहन जैसी फसलें जो अधिकतर बारिश पर निर्भर करती हैं, सबसे अधिक प्रभावित होती हैं। एल नीनो एक मौसमी घटना है जिसमें प्रशांत महासागर का तापमान बढ़ जाता है जिससे भारत में कमजोर मानसून और सूखे जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जो कृषि को गंभीर रूप से प्रभावित करती है। इसके कारण खरीफ फसलों ;सोयाबीन, कपास, धान, की बुआई में देरी, उत्पादन में 15 से 50 प्रतिशत तक कमी और चारे की कमी से पशुधन पर असर और फसलों पर कीटों के प्रकोप बढ़ सकते हैं। एल नीनो के प्रभाव से भारत में दक्षिण-पश्चिम मानसून सामान्य से कम रहता है। इससे वर्षा आधारित खेती पर सबसे ज्यादा बुरा असर होता है। वहीं सोयाबीन, कपास, अरहर और धान जैसी फसलों की बुआई प्रभावित होती है और पैदावार में भारी कमी आती है। सूखे जैसी स्थिति के कारण जलाशयों में पानी की कमी से सिंचाई के लिए पानी की तंगी हो जाती है। चारे और पानी की कमी से पशुओं का स्वास्थ्य प्रभावित होता है जिससे दूध और मांस का उत्पादन कम हो जाता है। गर्म और शुष्क मौसम से फसलों में कीटों और रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है, जिससे फसल की गुणवत्ता और उत्पादन पर प्रभाव पड़ता है। फसल खराब होने से किसानों को भारी आर्थिक नुकसान होता है। इसके अलावा छोटे और सीमांत किसानों के लिए यह स्थिति और भी कठिन हो जाती है, क्योंकि उनके पास पर्याप्त संसाधन नहीं होते हैं। इन चुनौतियों से निपटने के लिए हमें कृषि क्षेत्र में समग्र और वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। इसके अंतर्गत सूखारोधी फसलों को अपनाना होगा और जल संरक्षण तकनीकों जैसे ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई को बढ़ावा देना आवश्यक है। किसानों को जागरूक करने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम और कृषि परामर्श सेवाओं का विस्तार करना आवश्यक है। साथ ही बदलते मौसम के साथ तालमेल बैठाने के लिए नवाचार, तकनीक और नीति-निर्माण में सुधार अनिवार्य है। उचित कदम उठाकर एल नीनो के प्रभाव की काफी हद तक कम किया जा सकता है और किसानों की आजीविका को सुरक्षित रखा जा सकता है। किसानों को भी बदलती परिस्थितियों के अनुसार अपनी खेती के तौर-तरीकों में बदलाव लाने की आवश्कयता है। फसल विविधीकरण, कम पानी वाली फसलों का चयन और आधुनिक कृषि तकनीकों का उपयोग उन्हें इस चुनौती से निपटने में मदद कर सकता है। सामूहिक प्रयासों और जागरूकता से एल नीनो के नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सकता है। इसलिए हमें अपनी कृषि प्रणाली को अधिक लचीला और टिकाऊ बनाना होगा। इसके लिए सरकार, वैज्ञानिक और किसान मिलकर इस चुनौती का सामना करें और कृषि क्षेत्र को सुरक्षित एवं सुदृढ़ बना सकते हैं। एल नीनो भारतीय मानसून और कृषि के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती है। हालांकि, वैज्ञानिक कृषि पद्धतियों, जल संरक्षण, मौसम आधारित कृषि प्रबंधन तथा सरकारी योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन से इसके नकारात्मक प्रभावों को काफी हद तक कम किया जा सकता है। किसानों, वैज्ञानिकों और सरकार के संयुक्त प्रयासों से भारतीय कृषि को अधिक टिकाऊ एवं जलवायु-अनुकूल बनाया जा सकता है।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

ब्रॉयलर ब्रीडर फार्म का वैज्ञानिक प्रबंधन

डॉ. अनिल कुमार गिरि (सहायक प्राध्यापक) कृषि महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

डॉ. एस. के. त्रिपाठी प्राध्यापक एवं अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

डॉ. रघुराज किशोर तिवारी प्रमुख वैज्ञानिक, कृषि महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

डॉ. मनीष द्विवेदी सहायक प्राध्यापक, कृषि महाविद्यालय, रीवा (म. प्र.)

भूमिका: भारत में पोल्ट्री उद्योग कृषि क्षेत्र का तेजी से विकसित होने वाला व्यवसाय है। ब्रॉयलर उत्पादन की सफलता का आधार स्वस्थ एवं उच्च गुणवत्ता वाले चूजे हैं, और ऐसे चूजों का उत्पादन ब्रॉयलर ब्रीडर फार्म में किया जाता है। ब्रॉयलर ब्रीडर वे विशेष मुर्गे एवं मुर्गियाँ होते हैं जिनसे निषेचित अंडे प्राप्त किए जाते हैं। इन अंडों को हैचरी में सेने के बाद ब्रॉयलर चूजे तैयार किए जाते हैं। यदि ब्रीडर फार्म का प्रबंधन वैज्ञानिक ढंग से किया जाए तो निषेचित अंडों की संख्या, हैचेबिलिटी तथा चूजों की गुणवत्ता में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। दूसरी ओर, पोषण, स्वास्थ्य या जैव सुरक्षा में थोड़ी सी लापरवाही भी उत्पादन में भारी नुकसान का कारण बन सकती है।

ब्रॉयलर ब्रीडर फार्म का महत्व- ब्रॉयलर उद्योग की नींव ब्रीडर फार्म है। स्वस्थ ब्रीडर पक्षियों से प्राप्त अंडों से ही स्वस्थ एवं तेजी से बढ़ने वाले ब्रॉयलर चूजे तैयार होते हैं। इसलिए ब्रीडर फार्म का उद्देश्य केवल अधिक अंडे प्राप्त करना नहीं, बल्कि उच्च गुणवत्ता वाले निषेचित अंडों का उत्पादन करना है।

1. **फार्म की स्थापना एवं आवास प्रबंधन-** ब्रीडर फार्म ऐसी जगह स्थापित करना चाहिए जहाँ पर्याप्त स्वच्छ वातावरण, शुद्ध पानी तथा अच्छी सड़क सुविधा उपलब्ध हो। आवास प्रबंधन के मुख्य बिंदु निम्नलिखित हैं– * शेड पूर्व-पश्चिम दिशा में बनाए जाएँ। * शेड में पर्याप्त वेंटिलेशन होना चाहिए। * वर्षा एवं गर्मी से सुरक्षा की उचित व्यवस्था हो। * प्रति पक्षी पर्याप्त फर्श स्थान उपलब्ध कराया जाए। * सूखी एवं साफ लिटर का उपयोग करें। * लिटर की मोटाई 8-10 सेमी रखें। * शेड में उचित प्रकाश एवं तापमान बनाए रखें। * चूहों, जंगली पक्षियों एवं अन्य जानवरों का प्रवेश रोकें। साफ-सुथरा एवं हवादार शेड पक्षियों के स्वास्थ्य और उत्पादन दोनों के लिए अत्यंत आवश्यक है।

2. **पोषण एवं आहार प्रबंधन-** ब्रॉयलर ब्रीडर का आहार सामान्य ब्रॉयलर से अलग होता है। इन पक्षियों में शरीर का वजन नियंत्रित रखना आवश्यक होता है क्योंकि अत्यधिक वजन से अंडा उत्पादन एवं प्रजनन क्षमता प्रभावित होती है। संतुलित आहार में निम्न पोषक तत्व होने चाहिए– * ऊर्जा* प्रोटीन * आवश्यक अमीनो अम्ल * कैल्शियम* फॉस्फोरस * विटामिन * खनिज मिश्रण

आहार प्रबंधन के प्रमुख बिंदु निम्न हैं- * निर्धारित मात्रा में ही दाना दें। * प्रतिदिन एक ही समय पर भोजन कराएँ। * स्वच्छ एवं ठंडा पानी हर समय उपलब्ध रखें। * फीडर एवं ड्रिंकर नियमित साफ करें। * मौसम के अनुसार पोषण में आवश्यक परिवर्तन करें। उचित पोषण से अंडा उत्पादन, निषेचन प्रतिशत तथा हैचेबिलिटी में वृद्धि होती है।

3. **शरीर भार (Body Weight) का प्रबंधन-**ब्रीडर पक्षियों में शरीर भार का नियंत्रण अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि वजन अधिक हो जाए तो– * अंडा उत्पादन कम हो जाता है। * निषेचन प्रतिशत घटता है। * हैचेबिलिटी कम होती है।

यदि वजन कम हो तो— * यौन परिपक्वता में देरी होती है। * छोटे अंडे प्राप्त होते हैं। * उत्पादन क्षमता घट जाती है। इसलिए प्रत्येक सप्ताह पक्षियों का वजन लेकर कंपनी द्वारा निर्धारित मानकों से तुलना करनी चाहिए।

4. **नर-मादा अनुपात का प्रबंधन-** सफल निषेचन हेतु उचित नर-मादा अनुपात बनाए रखना आवश्यक है। सामान्यत 1 नर 8-10 मादा के लिए आवश्यक होता है। नरों का स्वास्थ्य, सक्रियता तथा वजन नियमित रूप से जाँचना चाहिए। कमजोर अथवा घायल नर को समय पर बदल देना चाहिए।

5. **प्रकाश (Lighting) प्रबंधन-** प्रकाश ब्रीडर पक्षियों के प्रजनन चक्र को नियंत्रित करता है। इसके लिए निम्न मुख्य बातें हैं – * ग्रोअर अवस्था में सीमित प्रकाश दें।* उत्पादन प्रारंभ होने पर धीरे-धीरे प्रकाश अवधि बढ़ाएँ। * सामान्यतः उत्पादन अवधि में 14-16 घंटे प्रकाश पर्याप्त माना जाता है। * पूरे शेड में समान प्रकाश व्यवस्था रखें। उचित प्रकाश से अंडा उत्पादन नियमित बना रहता है।

6. **अंडा संग्रह एवं भंडारण ब्रीडर फार्म में प्राप्त प्रत्येक अंडा आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है। अंडा संग्रह करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए-** * दिन में कम से कम 4-5 बार अंडे एकत्र करें। * टूटे एवं गंदे अंडों को अलग रखें। * अंडों को नुकीला सिरा नीचे की ओर रखें। * अंडों को स्वच्छ ट्रे में रखें। * संग्रह कक्ष का तापमान लगभग 16-18°C तथा आर्द्रता 70-80% रखें। * अधिक समय तक अंडे संग्रहित न करें। सही भंडारण से हैचेबिलिटी में सुधार होता है।

7. **जैव सुरक्षा (Biosecurity) प्रबंधन-** ब्रॉयलर ब्रीडर फार्म में जैव सुरक्षा सबसे महत्वपूर्ण प्रबंधन उपाय है। इसके लिए निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए–* फार्म में अनावश्यक व्यक्तियों का प्रवेश प्रतिबंधित करें। * प्रवेश द्वार पर फुटबाथ रखें। * वाहन एवं उपकरणों को कीटाणुरहित करें। * कर्मचारियों के लिए अलग जूते एवं कपड़े रखें।* मृत पक्षियों का वैज्ञानिक तरीके से निस्तारण करें। * फार्म के चारों ओर बाउंड्री एवं सुरक्षा व्यवस्था रखें। जैव सुरक्षा अपनाने से अनेक संक्रामक रोगों से बचाव संभव है।

8. **स्वास्थ्य प्रबंधन-** स्वस्थ पक्षी ही अधिक उत्पादन देते हैं इसलिए स्वास्थ्य प्रबंधन में निम्न लिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए – * निर्धारित टीकाकरण कार्यक्रम का पालन करें। * नियमित कृमिनाशक दवा दें। * रोगी पक्षियों को तुरंत अलग करें। * पशु चिकित्सक की सलाह लें। * मृत्यु दर का नियमित रिकॉर्ड रखें। रोग की शीघ्र पहचान से आर्थिक नुकसान कम किया जा सकता है।

9. **रिकॉर्ड प्रबंधन-**सफल ब्रीडर फार्म के लिए सही रिकॉर्ड रखना अत्यंत आवश्यक है। निम्न रिकॉर्ड नियमित रखना चाहिए – * पक्षियों की संख्या * दैनिक दाना खपत * पानी की खपत * शरीर भार * अंडा उत्पादन * निषेचित अंडों की संख्या * हैचेबिलिटी * टीकाकरण * दवा उपयोग * मृत्यु दर रिकॉर्ड के आधार पर भविष्य की योजना एवं उत्पादन में सुधार किया जा सकता है।

10. **आर्थिक प्रबंधन-** अच्छा आर्थिक प्रबंधन लाभ बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके लिए निम्न बातें आवश्यक हैं– * संतुलित आहार का उपयोग करें। * दाना बर्बादी रोकें। * बिजली एवं पानी की बचत करें। * नियमित स्वास्थ्य परीक्षण कराएँ। * गुणवत्तापूर्ण चूजे एवं आहार खरीदें। * बाजार की मांग के अनुसार उत्पादन योजना बनाएं। * चूजे बेचने का मार्केटिंग चेनल को मजबूत बनाएं।

निष्कर्ष- ब्रॉयलर ब्रीडर फार्म पूरे पोल्ट्री उद्योग की आधारशिला है। स्वस्थ ब्रीडर पक्षी, संतुलित पोषण, उचित शरीर भार, वैज्ञानिक प्रकाश व्यवस्था, जैव सुरक्षा, नियमित स्वास्थ्य देखभाल तथा सही रिकॉर्ड प्रबंधन अपनाकर उच्च गुणवत्ता वाले निषेचित अंडों का उत्पादन किया जा सकता है। आधुनिक वैज्ञानिक तकनीकों को अपनाने से उत्पादन लागत कम होती है, हैचेबिलिटी बढ़ती है तथा किसानों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। इसलिए प्रत्येक ब्रीडर फार्म संचालक को अच्छे ढंग से वैज्ञानिक प्रबंधन करना चाहिए, जिससे टिकाऊ एवं लाभदायक पोल्ट्री व्यवसाय विकसित किया जा सके।

01/2025-26

गोवंशीय पशुओं में होने वाली एक टगिया रोग

डॉ. शैलेन्द्र सिंह
डॉ. शैलेश कुमार पटेल, डॉ. स्वतंत्र सिंह
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

रोग कारक

यह एक संक्रामक जीवाणु जनित रोग है। जो कि क्लोइट्रिडियम सौवी नामक जीवाणु से होता है। जो कि ग्रामधनी, श्वसन वाला जीवाणु है। यह जीवाणु मिट्टी में कई सालों तक जीवित रहता है।

रोग प्रसारण

वह रोग मुख्यतः गौवश भैंस और भेड़ में होता है। कभी-कभी घोड़ों में भी यह बीमारी देखी जाती है।

यह रोग मुख्यतः वर्षा ऋतु मे होती है। गौवंश में यह रोग अधिकांशत गर्मियों में होती है। 6 साल से 2साल के पशु मे ज्यादा होता है।

* वह मिट्टी द्वारा फैलने वाला रोग है। रस रोग के जीवाणु संक्रमित पशु के मल द्वारा या संक्रमित पशु के मृत्यु होने पर इसके शव द्वारा मिट्टी में फैल जाते है। जहॉ से ये जीवाणु स्वस्थ पशु को सवंमित करते है।
* सक्रंमित खादय पदार्थो के द्वारा।
* भेड़ों में यह रोग त्वचा के सावों के संक्रमण से होता है।

रोगजनकता

मुखमार्ग से जीवाणु के बिजाणु शरीर के अंदर प्रवेश करता है। इसके बाद में छोटी आंत में जीवाणु पहुंचता है संचार तंत्र में पहुँचकर खून के द्वारा पूरे शरीर में प्रवेश करता है। यहां से मांसपेशियों में और शरीर के अन्य स्वस्थ ऊत्तकों में प्रवेश करता है। जब मांसपेशियां थकान अघात आदि के कारण निष्प्राण हो जाती है तो बीजाणु उत्तेजित होकर बिषैले पदार्थ उत्पन्न करती हैं। (मुख्यतः अल्फा, बीटा और डेल्टा टॉक्सिन) ये टॉक्सिन मांसपेशियों को क्षति पहुंचाती है और मांसपेशियां गल जाती है। प्रभावित मांसपेशियाँ काले रंग की हो जाती है क्योंकि मांसपेशियों में आयरन सल्फाइड का निर्माण हो जाता है।

रोग के लक्षण

इस रोग का काल सामान्यः 1:5 दिनो का होता है। इस रोग को निम्नलिखित लक्षणों के आधार पर पहचान जा सकता है।

(1) इस रोग का प्रथम लक्षण है कि पशु अचानक लॅगड़ाने लगता है। और इसकी चाल में अकड़न आ जाती है। (2) प्रभावित पैंरो के उपरी हिस्से पर चुर - चुर जैसे घ्वनि सुनाई देती है। सूजन के ऊपर त्वचा रोग हल्का पड़ जाता है। और सुखी औश्र दायर होती है। (3) भूख कम हो जाना (4) जुगाली बंद कर देना है। (5) उच्च तापमान (104-107F) तक हो सकता है। (6) रोगी पशु की उत्पादन क्षमता कम हो जाती है।

शव परीक्षण

पशु की मृत्यु के पश्चात निम्नलिखित परिवर्तन देखकर रोग की पहचान की जा सकती है।

(1) प्रभावित मांसपेशी काले रंग की हो जाती है। क्योकि प्रभावित मांसपेशी में आयरन सल्फाइड का निर्माण हो जाता है। प्रभावित मांसपेशी छिद्रिल हो जाती है जो कि बीच में सुखी और किनारे मे इडमेटस (फूली हुई) प्रतीत होती है।

(2) श्रेंत्रीय लसिका ग्रंथि में सूजन और रक्त के घण्टे दिखाई देते है।

(3) पेरीकार्डयटिस और अल्सरेटिव दूंडोकार्डयटिस

रोग की पहचान

* इस रोग की पहचान रोग के लक्षण और मृत पशुओं के शव परीक्षण से किया जा सकता है। इसके अलावा रोग के सूक्ष्मजीवी की सवर्धन माध्यम मे वृद्धि करवाकर व अन्य प्रयोगशाला तकनीकों द्वारा रोग की पहचान की जा सकती है।

उपचार

समय पर रोग की पहचान कर रोग का इलाज किया जा सकता है। इसके लिए निम्न प्रकार से उपचार किया जा सकता है। 3 से 5 दिनों तक प्रतिजैविक औशधियों की उचित मात्रा देना चाहिए। आक्सीटेट्रासाइलिन -5-10 मिसा/कि. शरीर के भार आर.-पेनासिलीन मुख्यतः उपयोग किया जाता है।

* **डेक्सामेथासोन**-05.2 मि.ग्रा./कि.भारानुसार नस में
* साथ ही सम्बधित मांसपेशी मे भरा हुआ तरह पदार्थ या स्वरात हो चुका भाग को बाहर निकाल दिया जाना चाहिए।
* रोगी पशु को आवश्यकतानुसार लक्षणात्मक और सहारात्मक उपचार भी करना चाहिए।

रोकथाम व बचाव

क्योंकि यह एक संक्रामक रोग है। अतःरोबी पशु को अन्य स्वस्थ पशुओं से दूर रखना चाहिए। पशुशाल मे साफ-सफाई रखना चाहिए। स्वस्थ पशु को सवंमित भूमि और चारागाह से दूर रखना चाहिए। रोगी जनवार की मृत्यु होने पर शव को भली-भाँति जमीन में गहरा गाड़ देना चाहिए। और उस पर चूने का छिडकाव कर देना चाहिए। इस रोग की रोकथाम के लिए वर्शो वस्तु शुरू होने के पूर्व स्वस्थ पशु को टीका प्रतिवर्श लगाना चाहिए।

कुंज एजेंसीज

अपने भाई चप्पा सेठ की दुकान
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती है
प्रो. कार्तिक गुप्ता 9589545404
प्रो. हार्दिक गुप्ता 9644689094
भितरवार रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
10/2025-26

संरक्षित खेती

सुनित भदरगे पिएच.डी. शोध छात्र, (फल विज्ञान) बागवानी विभाग, स्कूल ऑफ एग्रीकल्चर, आई.टी.एम. विश्वविद्यालय, ग्वालियर-475001 (म.प्र.)

परिचय-संरक्षित खेती (Protected Cultivation) वह आधुनिक कृषि पद्धति है जिसमें फसलों को प्रतिकूल मौसम, कीटों, रोगों तथा अन्य पर्यावरणीय प्रभावों से बचाने के लिए विशेष संरचनाओं के अंदर उगाया जाता है। इस तकनीक में तापमान, आर्द्रता, प्रकाश, जल एवं पोषक तत्वों को नियंत्रित करके पौधों की वृद्धि के लिए अनुकूल वातावरण बनाया जाता है।

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन, भूमि की कमी तथा गुणवत्तापूर्ण उत्पादन की बढ़ती मांग के कारण संरक्षित खेती का महत्व तेजी से बढ़ रहा है। यह उद्यानिकी फसलों, विशेषकर सब्जियों, फूलों एवं फल फसलों के लिए अत्यंत उपयोगी है।

संरक्षित खेती की परिभाषा-"फसलों को नियंत्रित या अर्ध-नियंत्रित वातावरण में उगाने की वह तकनीक, जिसमें बाहरी मौसम के प्रतिकूल प्रभावों से सुरक्षा प्रदान की जाती है, संरक्षित खेती कहलाती है।"

संरक्षित खेती के उद्देश्य

1.वर्षभर उत्पादन प्राप्त करना।
2.फसलों को प्रतिकूल मौसम से बचाना।
3.उच्च गुणवत्ता वाली उपज प्राप्त करना।
4.जल एवं उर्वरकों का कुशल उपयोग करना।
5.कीट एवं रोगों का प्रबंधन करना।
6.प्रति इकाई क्षेत्र अधिक उत्पादन प्राप्त करना।

संरक्षित खेती के प्रमुख प्रकार

1. ग्रीनहाउस (Greenhouse)- ग्रीनहाउस पारदर्शी सामग्री जैसे पॉलीथीन, कांच या प्लास्टिक से बनी संरचना होती है, जिसमें तापमान एवं आर्द्रता को नियंत्रित किया जाता है।

लाभ * वर्षभर उत्पादन * उच्च गुणवत्ता वाली उपज * अधिक उत्पादन क्षमता

2. पॉलीहाउस (Polyhouse)

पॉलीथीन शीट से ढकी संरचना को पॉलीहाउस कहा जाता है।

विशेषताएँ * तापमान नियंत्रण * तेज हवा एवं वर्षा से सुरक्षा * सब्जी एवं फूल उत्पादन के लिए उपयुक्त

3. नेट हाउस (Net House)-जाल (नेट) से निर्मित संरचना, जो कीटों एवं पक्षियों से फसल की सुरक्षा करती है।

लाभ * कम लागत * बेहतर वायु संचार * कीट नियंत्रण

4. लो टनल और हाई टनल

पॉलीथीन शीट से ढकी सुरंगनुमा संरचनाएँ।

उपयोग * पौध तैयार करने में * प्रारंभिक उत्पादन प्राप्त करने में

संरक्षित खेती के घटक

1. तापमान नियंत्रण * वेंटिलेशन * कूलिंग पैड * फॉगिंग सिस्टम * हीटिंग सिस्टम

2. सिंचाई प्रबंधन

ड्रिप सिंचाई-पौधों की जड़ों तक सीधे पानी पहुंचाया जाता है।

फर्टिगेशन-सिंचाई जल के साथ उर्वरकों का प्रयोग।

3. प्रकाश प्रबंधन * प्राकृतिक प्रकाश * कृत्रिम प्रकाश व्यवस्था

4. आर्द्रता नियंत्रण-उचित आर्द्रता बनाए रखने से रोगों की संभावना कम होती है तथा पौधों की वृद्धि बेहतर होती है।

संरक्षित खेती में उगाई जाने वाली प्रमुख फसलें

सब्जियाँ * टमाटर * शिमला मिर्च * खीरा * बैंगन

फूल * गुलाब * गेरबेरा * कार्नेशन

फल फसलें

* स्ट्रॉबेरी * अंगूर * पपीता

संरक्षित खेती के लाभ

1. **अधिक उत्पादन**-खुले खेत की तुलना में 2-5 गुना तक अधिक उत्पादन प्राप्त हो सकता है।

2. **बेहतर गुणवत्ता**-फल एवं सब्जियाँ आकार, रंग एवं गुणवत्ता में बेहतर होती हैं।

3. जल की बचत

ड्रिप सिंचाई से 40-60% तक जल की बचत होती है।

4. कम कीटनाशक उपयोग

संरक्षित वातावरण में कीटों का प्रकोप कम होता है।

5. ऑफ-सीजन उत्पादन

मौसम के विपरीत समय में भी उत्पादन संभव है।

6. अधिक लाभ

उच्च गुणवत्ता एवं समय से पहले उत्पादन के कारण बाजार में बेहतर मूल्य मिलता है।

संरक्षित खेती की सीमाएँ

1.प्रारंभिक लागत अधिक होती है।
2.तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है।
3.संरचना के रखरखाव पर खर्च आता है।
4.तापमान नियंत्रण में लापरवाही से नुकसान हो सकता है।

फल फसलों में संरक्षित खेती का महत्व

फल विज्ञान में संरक्षित खेती का उपयोग विशेष रूप से पौधशाला (नर्सरी) प्रबंधन, उच्च गुणवत्ता वाले पौध उत्पादन तथा कुछ विशेष फलों के ऑफ-सीजन उत्पादन के लिए किया जाता है।

लाभ * स्वस्थ पौध तैयार करना। * रोग एवं कीट नियंत्रण। * पौधों की तेज वृद्धि। * उच्च गुणवत्ता वाले फल उत्पादन।

निष्कर्ष-संरक्षित खेती आधुनिक उद्यानिकी की एक उन्नत तकनीक है, जो सीमित भूमि और संसाधनों में अधिक उत्पादन तथा बेहतर गुणवत्ता प्राप्त करने का प्रभावी माध्यम है। जलवायु परिवर्तन, जल संकट और बढ़ती जनसंख्या की चुनौतियों के बीच यह तकनीक कृषि को अधिक लाभकारी, टिकाऊ और वैज्ञानिक बनाती है। फल, सब्जी और पुष्प उत्पादन में संरक्षित खेती का भविष्य अत्यंत उज्ज्वल है और यह किसानों की आय बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

शीतला कृषि सेवा केन्द्र
बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)
99267-31867, 83055-69923
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।
पता: पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)
01/205-26

पशुओं में निदान परीक्षण

डॉ. नीरज श्रीवास्तव, डॉ. अंकुश किरण निरंजन
डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

विषाक्तता का निदान, किसी भी अन्य बीमारी की तरह, इतिहास, नैदानिक लक्षणों, घावों/क्षतियों, प्रयोगशाला जांच, और कुछ मामलों में, विश्लेषणात्मक प्रक्रियाओं पर आधारित होता है। परिस्थितिजन्य साक्ष्य मूल्यवान होते हैं और उन्हें नोट किया जाना चाहिए। पशु मालिकों द्वारा दिए गए इतिहास में प्रत्यक्ष कारकों पर अधिक जोर दिया जा सकता है और सूक्ष्म लेकिन महत्वपूर्ण विवरण छूट सकते हैं। जानवरों में अचानक मृत्यु की रिपोर्ट वास्तव में अत्यधिक तीव्र मृत्यु को नहीं दर्शा सकती है वे केवल यह दिखा सकती हैं कि जानवर मृत पाए गए थे।

खाद्य उत्पादक जानवरों में विषाक्तता के कई मामलों में डायग्नोस्टिक प्रयोगशाला में नमूने भेजना आवश्यक होता है। किसी अप्रत्याशित उत्पाद संदूषण या अन्य जानवरों के लगातार संपर्क में आने की चिंता हो, तो प्रयोगशाला के परिणाम मददगार होते हैं। **डायग्नोस्टिक प्रयोगशाला में नमूने जमा करते समय निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए:**

प्रभावित, बीमार या मृत जानवरों की संख्या,उम्र, वजन, रुग्णता और मृत्यु दर का कालानुक्रमिक विवरण,नैदानिक लक्षण और बीमारी का कोर्स (अवधि), पहले की बीमारी की स्थितिया,शव परीक्षण में देखे गए घाव क्षतियां, और खाए गए भोजन की सावधानीपूर्वक जांच, उपचार के प्रति प्रतिक्रिया,संबंधित घटनाएं (कीटनाशक का प्रयोग, चारे में बदलाव, या दवाओं की शुरुआत, चारे में मिलाए जाने वाले तत्व, पानी के नए स्रोत आदि),सुविधाओं बाड़े का विवरण ,कचरे या मशीनरी तक पहुंच आदि,विशिष्ट पदार्थ, उसकी क्षमता, रूप, और विषैले तत्व की मात्रा,एक्सपोजर का मार्ग, जानवर की प्रजाति और नस्ल, एक्सपोजर के बाद बीता हुआ समय।

वर्तमान नैदानिक लक्षण- प्रत्येक पशु चिकित्सा डायग्नोस्टिक प्रयोगशाला नैदानिक परीक्षणों का एक अनूठा सेट प्रदान करती है, जिसमें नए और बेहतर परीक्षण उपलब्ध होने पर अक्सर बदलाव होते रहते हैं। चिकित्सकों को अपने परीक्षण अनुरोधों में विशिष्ट और स्पष्ट होना चाहिए। प्रयोगशाला के कर्मचारी नमूना संग्रह और रख-रखाव के नियमों के संबंध में मार्गदर्शन के साथ-साथ परीक्षण परिणामों की व्याख्या में सहायता प्रदान करेंगे।अधिकांश डायग्नोस्टिक प्रयोगशालाएं नमूना संग्रह और जमा करने के पसंदीदा नियमों के साथ उपयोगकर्ता दिशानिर्देश प्रकाशित करती हैं। हालाँकि, निम्नलिखित व्यापक सिफारिशें काफी मानक हैं। जमा किए गए नमूनों के साथ एक विस्तृत केस इतिहास शामिल होना चाहिए। पैकेज्ड सामग्री में मौजूद किसी भी तरल पदार्थ से होने वाले नुकसान से बचाने के लिए सबमिशन फॉर्म को एक वाटरप्रूफ बैग में सुरक्षित रखा जाना चाहिए। मालिक का नाम और उपनाम, प्रजाति,नस्ल या आकार (यदि नस्ल अज्ञात हो), लिंग,उम्र,जानवर की पहचान,प्रासंगिक नैदानिक लक्षण, घावों का स्थूल रूप (आकार और शारीरिक स्थान सहित) पिछला उपचार, जिसमें उपचार के प्रति प्रतिक्रिया (यदि कोई हो) शामिल है,प्रासंगिक नैदानिक परीक्षणों के परिणाम, जैसे कि सीरम बायोकेमिकल विश्लेषण, साइटोलॉजिक और हिस्टोलॉजिक मूल्यांकन, और इमेजिंग अध्ययन (एक्स-रे/अल्ट्रासाउंड),समूह के स्वास्थ्य अध्ययन के लिए, समूह में रुग्णता और मृत्यु दर।

शिपमेंट के लिए जानवरों के नमूनों की पैकेजिंग- जैविक नमूनों का शिपमेंट उपयोग की जाने वाली कूरियर या शिपिंग सेवा द्वारा स्थापित नियमों के अनुरूप होना चाहिए। कुछ मामलों में, हवाई परिवहन के लिए खतरनाक सामग्रियों के संबंध में परिवहन संघ के नियमों का अनुपालन आवश्यक होता है। इन नियमों में फॉर्मेलिन की मात्रा पर प्रतिबंध शामिल है जिसे एक कंटेनर में भेजा जा सकता है। प्रत्येक आंतरिक कंटेनर में 30 मिलीलीटर से अधिक मुक्त तरल समाधान नहीं होना चाहिए, और पूरे बाहरी पैकेज में 1 लीटर से अधिक नहीं होना चाहिए। बड़ी मात्रा में फॉर्मेलिन भेजने के बजाय, ऊतक के नमूनों को कम से कम 24 घंटे के लिए उचित मात्रा में में ही फिक्स किया जा सकता है और फिर शिपमेंट के लिए ताजे फॉर्मेलिन की कम मात्रा में स्थानांतरित किया जा सकता है।ताजे ऊतक के नमूनों वाले शिपमेंट पर स्पष्ट रूप से लेबल लगाना आवश्यक है,संक्रामक पदार्थ, मनुष्यों को प्रभावित करने वाले, संक्रामक पदार्थ, जानवरों को प्रभावित करने वाले,जैविक पदार्थ।

माइक्रोबायोलॉजिकल परीक्षण के लिए जानवरों के नमूनों की तैयारी-नैदानिक रूप से जिन विशिष्ट संक्रामक एजेंटों (कीटाणुओं) का संदेह हो, उन्हें सबमिशन फॉर्म पर नोट किया जाना चाहिए। कुछ जीवों को विशेष विकास आवश्यकताओं की आवश्यकता होती है, जिनका उपयोग प्रयोगशालाओं में नियमित रूप से तब तक नहीं किया जाता है जब तक कि उस रोगजनक का उल्लेख संभावित निदान के रूप में न किया गया हो। माइक्रो बायोलॉजिकल परीक्षण के लिए प्रयोगशाला की तकनीकें और क्षमताएं अलग-अलग होती हैं, हालाँकि, अधिकांश परीक्षण या तो जीवित जीवों के विकास या दृश्यता पर, या इन रोगजनकों के न्यूक्लिक एसिड और प्रोटीन के पता लगाने पर निर्भर करते हैं। इसलिए, संदूषण से बचाने के लिए बिना फिक्स किए हुए नमूनों (ऊतक, तरल पदार्थ आदि) को सड़न रहित एकत्र किया जाना चाहिए और तुरंत भेजा जाना चाहिए। यदि मूत्र या किसी अन्य शारीरिक तरल पदार्थ का माइक्रोबियल कल्चर (जीवाणु संवर्धन) करना हो, तो एक अलग रोगाणु-रहित, एडिटिव-मुक्त (बिना किसी प्रिजर्वेटिव वाले) कंटेनर में तरल पदार्थ भेजा जाना चाहिए। साइटोलॉजिक मूल्यांकन के लिए ई.डी.टी.ए. या अन्य प्रिजर्वेटिव वाले ट्यूब आदर्श होते हैं लेकिन कल्चर के लिए अस्वीकार्य हैं। यदि पी.सी.आर. परीक्षण किया जाना है, तो एक ही बार में भेजे जा रहे कई जानवरों के नमूनों के बीच क्रॉस-कंटामिनेशन से बचना विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैय यह सिद्धांत ऊतकों, तरल पदार्थों और यहाँ तक कि डिसेक्शन उपकरणों पर भी लागू होता है। इसके अलावा, पी.सी.आर. विश्लेषण के लिए स्वाब को अगर या चारकोल-आधारित परिवहन मीडिया में नहीं रखा जाना चाहिए, और कैल्शियम एल्गिनेट स्वाब से बचना चाहिए। इसके बजाय, बाँझ कपास या पॉलिएस्टर की नोक वाले एप्लिकेटर्स को एक ट्यूब में भेजा जाना चाहिए, या तो सूखा (बिना परिवहन मीडिया के) या प्रयोगशाला की आवश्यकताओं के आधार पर सेलाइन सॉल्यूशन या वायरल परिवहन मीडिया की कुछ बूंदों के साथ। पी.सी.आर. परीक्षण की आवश्यकताएं विशिष्ट परीक्षण के आधार पर व्यापक रूप से भिन्न हो सकती हैं, इसलिए नमूना लेने से पहले प्रास्तकर्ता प्रयोगशाला से परामर्श करने की दृढ़ता से सिफारिश की जाती है।

कुछ परीक्षण नियम किसी व्यक्ति के अंगों के नमूनों को एक साथ पूलिंग की अनुमति दे सकते हैं, हालाँकि, आमतौर पर यह बेहतर होता है कि प्रत्येक ऊतक को शिपिंग के लिए अलग, स्पष्ट रूप से लेबल किए गए बैग या ट्यूबों में एकत्र किया जाए। आंत के नमूनों को कभी भी अन्य ऊतकों के नमूनों के साथ एक कंटेनर में नहीं मिलाया जाना चाहिए। अधिकांश माइक्रोबायोलॉजिकल परीक्षणों के लिए ऊतकों और तरल पदार्थों को शिपमेंट से पहले फ्रोजन किया जा सकता है, लेकिन यदि नमूनों को ठंडा करके संग्रह के 24 घंटे के भीतर सीधे प्रयोगशाला में पहुंचाया जा सकता है, तो फ्रीजिंग आमतौर पर अवांछनीय है। इस नियम के अपवादों में कुछ विषाक्त पदार्थों का विश्लेषण शामिल है, जैसे कि क्लोस्ट्रीडियम परफिरिंजेंस और सी बोटुलिनम जिनमें विषाक्त पदार्थ के क्षरण को रोकने के लिए संग्रह के तुरंत बाद फ्रीजिंग आवश्यक है। पर्याप्त कूलेंट प्रदान किया जाना चाहिए ताकि नमूने प्रयोगशाला तक पहुँचने तक ठंडे रहें। परजीवी परीक्षण के लिए मल के नमूने उचित रूप से सीलबंद कंटेनरों में ठंडे करके भेजे जाने चाहिए। फ्रीजिंग का नियमित फ्लोटेशन या सेडिमेंटेशन परीक्षणों पर बहुत कम प्रभाव पड़ सकता है, लेकिन यह नेमाटोड लार्वा के लिए बेयरमैन विश्लेषण की संभावना को समाप्त कर देगा। पहचान के लिए भेजे जा रहे बाहरी परजीवियों या नेमाटोड को 70% अल्कोहल वाले वायल्स में भेजा जाना चाहिए।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

मक्का (Zea mays L.) में रेज्ड बेड (उठी हुई क्यारी) विधि के प्रमुख लाभ

ज्योति कहार (पीएच.डी. रिसर्च स्कॉलर)
एनआरएम विभाग/कृषि विज्ञान प्रभाग
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय
चित्रकूट सतना मध्य प्रदेश -485334

मक्का के लिए रेज्ड बेड (उठी हुई क्यारी) विधि

रेज्ड बेड (Raised Bed) विधि मक्का की एक आधुनिक एवं संसाधन-संरक्षण आधारित खेती की तकनीक है, जिसमें फसल को 15-20 सेंमी ऊँची उठी हुई क्यारियों पर तथा उनके बीच 30-40 सेंमी चौड़ी नालियों के साथ उगाया जाता है। इस प्रणाली में सिंचाई केवल नालियों में की जाती है, जिससे जल का कुशल उपयोग होता है और जलभराव की समस्या कम होती है। सामान्यतः एक पंक्ति वाले बेड की चौड़ाई 67-75 सेमी तथा दो पंक्ति वाले बेड की चौड़ाई 100-120 सेमी रखी जाती है। यह तकनीक जड़ों के बेहतर विकास, पोषक तत्वों के अधिक कुशल उपयोग, मृदा संरक्षण, जल उपयोग दक्षता में वृद्धि तथा 10-20% तक अधिक उपज प्राप्त करने में सहायक है। साथ ही यह कृषि यंत्रीकरण, खरपतवार प्रबंधन तथा जलवायु-स्मार्ट कृषि के लिए भी उपयुक्त मानी जाती है। सीमित जल संसाधनों एवं बदलती जलवायु परिस्थितियों में रेज्ड बेड विधि मक्का की टिकाऊ एवं लाभकारी खेती के लिए एक प्रभावी विकल्प है।

मापदण्ड	अनुशंसित आकार
बेड की चौड़ाई (एक पंक्ति)	67-75 सेंमी
बेड की चौड़ाई (दो पंक्ति)	100-120 सेंमी
बेड की ऊँचाई	15-20 सेंमी
नाली (Furrow) की चौड़ाई	30-40 सेंमी
पौधे से पौधे की दूरी	20-25 सेंमी
बुवाई की गहराई	4-6 सेंमी

रेज्ड बेड (Raised Bed) विधि मक्का उत्पादन की एक आधुनिक एवं संसाधन-संरक्षण आधारित कृषि तकनीक है। इस पद्धति में फसल को उठी हुई क्यारियों पर बोया जाता है तथा सिंचाई का जल क्यारियों के बीच बनी नालियों (Furrows) में प्रवाहित किया जाता है। इससे जल, पोषक तत्व एवं मृदा का अधिक कुशल उपयोग होता है तथा फसल की वृद्धि एवं उत्पादकता में उल्लेखनीय सुधार होता है। इसके प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं

1. जल की बचत एवं जल उपयोग दक्षता

* सिंचाई का जल केवल नालियों में दिया जाता है, जिससे जल की बर्बादी कम होती है।
* पारंपरिक समतल बुवाई की तुलना में लगभग 20-30% तक सिंचाई जल की बचत हो सकती है।
* जल उपयोग दक्षता (Water Use Efficiency) में वृद्धि होती है।

2. जलभराव की समस्या में कमी

* उठी हुई क्यारियों पर पौधे होने के कारण अतिरिक्त वर्षा या सिंचाई का पानी नालियों में निकल जाता है।
* जड़ों में ऑक्सीजन की पर्याप्त उपलब्धता बनी रहती है।
* जड़ गलन एवं अन्य जलजनित रोगों की संभावना कम हो जाती है।

3. जड़ों का बेहतर विकास

* मिट्टी भुरभुरी एवं हवादार बनी रहती है।
* जड़ें अधिक गहराई तक फैलती हैं।
* पौधे पानी एवं पोषक तत्वों का अधिक कुशलता से अवशोषण करते हैं।

4. पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता में वृद्धि

* उर्वरकों का सही स्थान पर प्रयोग होने से नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश का उपयोग बेहतर होता है।
* पोषक तत्वों की हानि (Leaching एवं Runoff) कम होती है।
* उर्वरकों की उपयोग दक्षता बढ़ती है।

5. अधिक एवं गुणवत्तापूर्ण उत्पादन

* पौधों की समान वृद्धि होती है।
* भुट्टे बड़े एवं दानों का भराव अच्छा होता है।
* अनुकूल परिस्थितियों में उत्पादन में 10-20% तक वृद्धि देखी गई है।

6. खरपतवार नियंत्रण में सुविधा

* क्यारियों एवं नालियों के कारण यांत्रिक निराई-गुड़ाई सरल होती है।
* खरपतवारों का प्रबंधन अधिक प्रभावी ढंग से किया जा सकता है।
* खरपतवारनाशी के उपयोग की आवश्यकता कम हो सकती है।

7. मृदा संरक्षण

* वर्षा के समय मृदा अपरदन (Soil Erosion) कम होता है।
* मृदा की संरचना एवं भौतिक गुण बेहतर बने रहते हैं।
* कार्बनिक पदार्थों के संरक्षण में सहायता मिलती है।

8. कृषि यंत्रीकरण में सुविधा

* बेड प्लांटर, रिजर एवं अन्य कृषि यंत्रों का उपयोग आसानी से किया जा सकता है।
* बुवाई, उर्वरक प्रयोग, सिंचाई एवं कटाई जैसे कार्य अधिक व्यवस्थित होते हैं।
* श्रम एवं समय की बचत होती है।

9. ऊर्जा एवं लागत में कमी

* सिंचाई के लिए कम पानी एवं कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है।
* ईंधन एवं श्रम लागत में कमी आती है।
* उत्पादन लागत घटने से शुद्ध लाभ बढ़ता है।

10. जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूल तकनीक

* अधिक वर्षा की स्थिति में जलभराव से सुरक्षा मिलती है।
* सूखे की स्थिति में नमी संरक्षण बेहतर होता है।
* यह तकनीक जलवायु-स्मार्ट (Climate-Smart) कृषि के लिए उपयुक्त मानी जाती है।

11. फसल प्रबंधन में सुविधा

* उर्वरकों एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों का सटीक प्रयोग संभव होता है।
* कीट एवं रोगों की निगरानी तथा नियंत्रण सरल हो जाता है।
* खेत में आवागमन एवं अन्य कृषि कार्य सुविधाजनक होते हैं।

12. संरक्षण कृषि के लिए उपयुक्त

* जीरो टिलेज (Zero Tillage), न्यूनतम जुताई (Minimum Tillage) एवं फसल अवशेष प्रबंधन (Residue Management) के साथ आसानी से अपनाई जा सकती है।
* मृदा स्वास्थ्य एवं दीर्घकालीन उत्पादकता में सुधार होता है।

13. आर्थिक लाभ

* सिंचाई एवं उत्पादन लागत में कमी आती है।
* जल एवं उर्वरकों की बचत से लाभ बढ़ता है।
* अधिक उत्पादन एवं बेहतर गुणवत्ता के कारण किसानों की आय में वृद्धि होती है।

निष्कर्ष

रेज्ड बेड (उठी हुई क्यारी) विधि मक्का उत्पादन के लिए एक वैज्ञानिक, टिकाऊ एवं लाभकारी तकनीक है। यह जल संरक्षण, मृदा स्वास्थ्य, पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता, बेहतर जड़ विकास, जलभराव नियंत्रण तथा उच्च उपज सुनिश्चित करती है। सीमित संसाधनों की उपलब्धता और बदलती जलवायु परिस्थितियों में यह तकनीक किसानों के लिए अधिक उत्पादन, कम लागत और अधिक लाभ प्राप्त करने का प्रभावी विकल्प सिद्ध हो रही है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

कृषि में कृत्रिम बुद्धिमत्ता : एआई से स्मार्ट खेती की ओर

डॉ. नवनीत मौर्य (सहायक प्रोफेसर)
सरदार पटेल विश्वविद्यालय, बालाघाट (म.प्र.)

प्रस्तावना - भारत की अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि है। देश की 54% आबादी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। लेकिन पिछले 20 सालों में जलवायु परिवर्तन, घटती उपजाऊ भूमि, पानी की कमी, कीट-रोग और बाजार की अस्थिरता ने खेती को जोखिम भरा बना दिया है। इसी समय दुनिया में चौथी औद्योगिक क्रांति आई - जिसे हम Artificial Intelligence यानी कृत्रिम बुद्धिमत्ता कहते हैं। AI वह तकनीक है जिसके द्वारा मशीनें इंसान की तरह सोचती हैं, सीखती हैं और निर्णय लेती हैं। पहले खेती "अनुभव आधारित" थी। अब ये "डेटा आधारित" हो रही है। AI, Big Data, IoT, Drone और Satellite के मिलने से "Smart Agriculture" या "Precision Farming" का युग शुरू हुआ है। भारत सरकार का लक्ष्य 2025 तक कृषि में AI का उपयोग 3 गुना करना है।

1. **कृत्रिम बुद्धिमत्ता** : AI कंप्यूटर विज्ञान की एक शाखा है। इसका उद्देश्य ऐसी मशीन बनाना है जो देख सके, सुन सके, सीख सके और समस्या सुलझा सके।

2. **कृषि में AI के 10 प्रमुख उपयोग**

i.मृदा और फसल निगरानी - पहले किसान पूरे खेत में घूमकर देखते थे। अब खेत में लगे IoT सेंसर मिट्टी की नमी, pH, NPK, तापमान हर 10 मिनट में डेटा भेजते हैं। AI इस डेटा को एनालाइज करके बताता है "इस कोने में नाइट्रोजन कम है, यहां यूरिया डालो"। उदाहरणः Fasal, CropIn, DeHaat

ii.कीट और रोग की शीघ्र पहचान : रोग फैलने के बाद इलाज महंगा होता है। AI आधारित ऐप में किसान पत्ते की फोटो खींचता है। Computer Vision 3 सेकंड में बता देता है कि ये "Leaf Blight" है और कौन सी दवा डालें। उदाहरणः Plantix App - 17 फसलों के 400+ रोग पहचानता है। ICAR + Microsoft का "AI Sowing App" आंध्र में कपास के लिए।

iii. सटीक खेतीः "सही जगह, सही समय, सही मात्रा" - यही Precision Farming है। AI ड्रोन से पूरे खेत का NDVI मैप बनाता है। लाल रंग = स्वस्थ फसल, पीला = पानी की कमी। इसके बाद सिर्फ उसी जगह स्प्रे होता है। फायदाः 30% पानी, 25% खाद की बचत।4. मौसम और जलवायु पूर्वानुमान उदाहरणः Meghdoot App, IBM Watson

iv. उपज और उत्पादन पूर्वानुमान : पिछले 10 साल का मौसम, मिट्टी, बीज का डेटा + Satellite इमेज = AI बता देता है जिले में गेहूं का उत्पादन 22 लाख टन होगा। इससे सरकार भंडारण और MSP तय करती है।

1. **स्वचालित मशीनें और रोबोट** : AI वाले ट्रैक्टर बिना ड्राइवर के चल सकते हैं। "Weeding Robot" खरपतवार पहचान कर सिर्फ उसे उखाड़ता है। "Harvesting Robot" पके फल तोड़ता है।

vi. सिंचाई प्रबंधन : जब मिट्टी में नमी 30त से कम होगी तभी मोटर चलेगी। इससे बिजली और पानी दोनों बचते हैं।

3. किसानों को AI से 7 बड़े फायदे

i.उत्पादन में 20-40% वृद्धि : समय पर रोग पकड़ में आने से।

ii. लागत में 30% कमी : सिर्फ जरूरत पर ही इनपुट का उपयोग।

iii. जोखिम प्रबंधन : सूखा, बाढ़, मंडी गिरावट का पहले अलर्ट।

iv.पानी की बचत : ड्रिप + AI से 50% तक पानी बचा।

4. चुनौतियां और बाधाएं

i. डिजिटल डिवाइडः गांव में 4%, बिजली और स्मार्टफोन अभी भी समस्या है। NSSO के अनुसार सिर्फ 32% किसान स्मार्टफोन उपयोग करते हैं।

ii. डिजिटल साक्षरताः 70% छोटे किसान ऐप नहीं चला पाते। भाषा की समस्या।

iii. उच्च लागत : 1 ड्रोन 5-10 लाख का। सेंसर सेट 50 हजार का। छोटे किसान नहीं खरीद सकते।

iv.डेटा की समस्याः AI को ट्रेनिंग हेतु "स्थानीय भाषा+स्थानीय फसल" का डेटा चाहिए। भारत में ये कम है।

v.भरोसे की कमी : किसान को लगता है "मशीन से ज्यादा मैं जानता हूं"।

vi. निजता का मुद्दा : किसान का डेटा कंपनी के पास जाएगा तो दुरुपयोग हो सकता है।

7. समाधान और सुझाव

i.. KVK + ATMA के माध्यम से प्रशिक्षण : हर ब्लॉक में "AI साक्षरता केंद्र"।

ii. किराये पर मॉडल : Custom Hiring Centre से किसान 500 रु में ड्रोन किराये पर ले।

iii. सब्सिडी : PM-KUSUM की तरह AI उपकरणों पर 50% सब्सिडी।

iv.क्षेत्रीय भाषा में ऐप : हिंदी, मराठी, तमिल में वॉइस आधारित AI।

v.FPO को मजबूत करना : 10 किसान मिलकर 1 AI सेट खरीदें।

vi.डेटा सुरक्षा कानून : किसान का डेटा किसान का ही रहे।

8. **निष्कर्ष** : AI जादू नहीं है, ये एक औजार है। अगर सही नीति, सही ट्रेनिंग और सही सहयोग से इसे अपनाया जाए तो ये "दूसरी हरित क्रांति" ला सकता है। लक्ष्य सिर्फ उत्पादन बढ़ाना नहीं, बल्कि किसान की आय दोगुनी करना है।

02/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

✍डॉ. राकेश कुमार बरहैया
✍डॉ. राहुल शर्मा, डॉ. निधि गुप्ता
✍डॉ. पायल जैन, डॉ. शशि टेकाम
(सहायक प्राध्यापक) पशु चिकत्सा एवं
पशुपालन महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम लागत में प्रोटीन की आपूर्ति (पशु चारे का यूरिया उपचार)

हमारे देश में तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ दूध की मांग लगातार बढ़ती जा रही है। संकर गायों की नस्लों में दुग्ध उत्पादन की क्षमता बहुत अधिक है। पर इस क्षमता का पूरा लाभ उठाने के लिये पशुओं को भरपूर अच्छा आहार मिलना बहुत जरूरी हैं, परंतु दुर्भाग्यवश देश के अधिकतर पशुओं को उनकी आवश्यकतानुसार पोषण आहार नहीं मिल पाता है। इसका मुख्य कारण है हरे चारे एवं दाने की कमी। साथ ही पशुओ को खिलाये जाने वाले चारे मे भूसे का अहम योगदान होता है परंतु इसमे उपस्थित पौष्िक तत्व लिगनिन के अंदर जकड़े रहते हैं जो पशु के पाचन तन्त्र द्वारा नहीं लिए जा सकते। सभी प्रकार के मूलभूत दैहिक क्रियायों के लिए प्रोटीन की आव्यशकता होती है और दुग्ध उत्पादन के लिए ये अति आव्यशक है। ये शारीरिक ऊतको के क्षति को ठीक करने एवं कोशिकाओ के निर्माण हेतु मूल इकाई (एमिनो अम्लो) की पूर्ति करते हैं।

पशु शरीर में बहुत कम मात्रा में प्रोटीन का संचय होता है और इसी कारण से इन्हें लगातार प्रोटीन देने की आवश्यकता होती है। प्रोटीन हीनता से वर्धन, प्रजनन, उत्पादन आदि सभी प्रभावित होते हैं। कम लागत में प्रोटीन की आंशिक पूर्ति के लिए यूरिया जैसे अप्रोटीनिया नाइट्रोजन का उपयोग किया जा सकता है। सूखे चारे का यूरिया द्वारा रासायनिक उपचार अनुसंधान के द्वारा यह पाया गया है कि अगर सूखे चारे को यूरिया के द्वारा उपचारित कर दिया जाता है तो उसकी पौष्िकता और पाचकता में वृद्धि हो जाती है और पशु उपचारित चारे को बड़े चाव से व अधिक मात्रा में खाते हैं, जिससे उनके शरीर को पौष्िक तत्व काफी अधिक मात्रा में मिलते हैं। जो कि उनके उत्पादन में वृद्धि करते हैं।

सिद्धांत

पशुपालको को ये जानना जरुरी है कि यूरिया कैसे प्रोटीन के आपूर्ति करता है। सूक्ष्मजीवियो द्वारा यूरिया के अपघटन से अमोनिया उत्पन्न होती है, ये सूक्ष्मजीव समान्यतः नमी यक्त भूसे मे पाये जाते है जो बाद मे यूरीयेज एंजाइम उत्पन्न करते हैं। अमोनिया भूसे में अवशोषित हो जाती है जिससे इसमे नाइट्रोजन की मात्रा बढ जाती है इस उपचार से भूसे मे रेशो की पाचकता भी अधिक हो जाती है। रोमान्थी पशुओं के रूमेन (पेट का एक भाग) में बहुत प्रकार के सूक्ष्म जीव उपस्थित होते है जो यूरिया (अमोनिया) का उपयोग कर इसे अपने सूक्ष्माणविक प्रोटीन में परिवर्तित कर देते हैं जिसका उपयोग अंततः पशुओ द्वारा किया जाता है।

यूरिया उपयोग करने की विधि

भूसे का यूरिया उपचार- भूसे में प्रोटीन की मात्रा अत्यधिक कम होती है एवं उसकी सुपाच्यता भी कम होती है। 100 कि. ग्रा. भूसे को तैयार करने के लिए 4 कि. ग्रा. यूरिया का उपयोग करना चाहिए। सर्वप्रथम भूसे को साफ-सुथरे फर्श या भिछावन पर अच्छी तरह से फैला लें। 4 कि. ग्रा. यूरिया को 50 ली. स्वच्छ पानी में अच्छे से घोल ले, फिर इस घोल को भूसे के उपर छिड़काव करते हुए अच्छे से मिलाते रहें। यूरिया का संपूर्ण भूसे में एक सामान रूप से मिलना आवश्यक है। इसके बाद उपचारित भूसे को अच्छी तरह से दबाते हुए गुम्बद के आकार में ले आए। फिर पूरे भूसे को चारो तरफ से पोलीथिन द्वारा अच्छे से ढक दे ताकि हवा का आवागमन ना हो सके जिससे की बाद में बनने वाली अमोनिया गैस बाहर न निकल सकें। इसके पश्चात् भूसे को कम से कम तीन हफ्तों के किये छोड़ दें। यूरिया उपचारित भूसे का रंग पीले से गहरा भूरा हो जाता है। फिर यह रोमान्थी पशुओ को खिलाने हेतु तैयार हो जाता है। यह उपचार विधि किसी बड़े छायादार वृक्ष के नीचे करने पर बेहतर परिणाम देती है, साथ ही, वर्षा ऋतु या बारिश के दिनों में यूरिया उपचार (urea treatment) नहीं करना चाहिए।

इस तकनीक का महत्त्व क्या है

अनुसंधान द्वारा ज्ञात हुआ है कि यूरिया उपचारित भूसा खिलाने से बछड़ों की आहार ग्राह्यता में 10 से 20% वृद्धि होती है तथा इनमे अच्छी वृद्धि देखने को मिलती है, इसको खिलाने से पशुओ का दुग्ध उत्पादन 1 से 1.5 लीटर तक बढ़ जाता है। शुष्क पदार्थ पचनशीलता एवं सकल पचनीय पोषक तत्व 10% तक बढ़ जाती है इसी के साथ पचनशील प्रोटीन कि मात्रा बढ़कर लगभग तीन गुना हो जाती है। यूरिया उपचारित चारे को पशु आहार में सम्मिलित करने से दाने में कमी की जा सकती है जिससे दूध के उत्पादन की लागत कम हो सकती है। उपचारित चारा नरम व स्वादिष्ट होने के कारण पशु उसे खूब चाव से खाते हैं तथा चारा बर्बाद नहीं होता।

खिलाने से पहले कुछ महत्वपूर्ण ध्यान रखने योग्य बातें

1. यूरिया उपचारित भूसे को बछड़ो या कम उम्र के रोमान्थी पशुओ को नहीं खिलाना चाहिए।
2. खिलाने से पहले भूसे को लगभग 20 मिनट तक खुली हवा में फैला दें, जिससे उसकी गैस उड़ जाए।
3. यूरिया उपचारित भूसा अरोमंथी पशु जैसे सुअर व घोड़ो को नहीं खिलाना चाहिए।
4. भूसे खिलाने की मात्रा को धीरे- धीरे बढाना चाहिए।
5. दुधारू व् कार्यवाहक पशुओं (गाय व् बैल) को 4-5 कि. ग्रा/जानवर प्रतिदिन तक दिया जा सकता है।
6. प्रोटीन की जगह यूरिया का सही उपयोग करने के लिए, आहार में घुलनशील शर्करा जैसे मोलासेस आदि देना चाहिए या उनकी मात्रा को बढाना चाहिए।
7. गंधक (सल्फर) युक्त एमिनो अम्ल को भी देना चाहिए।
8. यूरिया उपचारित भूसे को देते समय कुल राशन में से सान्द्र आहार (कंसन्ट्रेट)की मात्रा को 1 कि. ग्रा तक कम कर सकते है।
9. पर्याप्त मात्रा में साफ पीने योग्य पानी की व्यवस्था होनी चाहिए।
10. कुल आहार में यूरिया की मात्रा 1त्न से अधिक नहीं होना चाहिए।

किसी कारणवश यूरिया की विषाक्तता हो जाये तो, पशु को ज्यादा से ज्यादा ठंडा पानी पिलाना चाहिये, शर्करा ज्यादा खिलाना चाहिये एवं चिकित्सक परामर्श अनुसार 3-4 ली. तक तनुकरित एसिटिक एसिड या विनेगर दिया जा सकता है।

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

सूअर के बच्चों (पिगलेट्स) की देखभाल, पोषण और सफल प्रजनन प्रबंधन

अमित कुमार झा, राजेश कुमार वांद्रे, सुलोचना सेन
शेख टी. जे., राजीव रंजन, बालेश्परी दीक्षित एवं मानसी शुक्ला
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

सूअर पालन (Pig Farming) एक अत्यधिक लाभकारी व्यवसाय है, लेकिन इसकी सफलता पूरी तरह से इस बात पर निर्भर करती है कि आप पिगलेट्स (सूअर के बच्चों) का प्रजनन और प्रबंधन (Breeding Management) कितनी कुशलता से करते हैं। पिगलेट्स के जन्म से लेकर उनके बड़े होने तक का समय सबसे संवेदनशील होता है। इस अवधि में की गई एक छोटी सी लापरवाही मृत्यु दर (Mortality Rate) को बढ़ा सकती है, जिससे सीधे तौर पर आपका मुनाफा प्रभावित होता है।

1. **प्रजनन प्रबंधन (Breeding Management)-** सफल पिगलेट्स उत्पादन की नींव एक मजबूत और वैज्ञानिक प्रजनन योजना पर टिकी होती है। इसमें मादा सूअर (Sow) और नर सूअर (Boar) का सही चयन और मिलन (Mating) सबसे महत्वपूर्ण है।

नर और मादा सूअर का चयन

* **मादा सूअर (Sow/Gilt) का चयन:** प्रजनन के लिए चुनी गई मादा के कम से कम 12 से 14 थन (Teats) होने चाहिए ताकि वह सभी बच्चों को अच्छे से दूध पिला सके। वह शांत स्वभाव की और अच्छे स्वास्थ्य वाली होनी चाहिए।

नर सूअर (Boar) का चयन: नर सूअर शारीरिक रूप से मजबूत, फुर्तीला और आक्रामक (प्रजनन के प्रति) होना चाहिए। इसके पिछले पैर मजबूत होने चाहिए ताकि माउंटिंग के समय कोई समस्या न हो।

प्रजनन की सही उम्र और वजन- मादा सूअर (Gilt) को उसके पहले प्रजनन के लिए तब तैयार करना चाहिए जब उसकी उम्र 8 से 9 महीने हो और वजन कम से कम 100 से 120 किलोग्राम हो। बहुत कम उम्र में प्रजनन कराने से बच्चों का आकार छोटा होता है और मादा के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है।

गर्भकाल (Gestation Period)- सूअर का गर्भकाल औसतन 114 दिनों का होता है, जिसे याद रखने का एक आसान तरीका है: 3 महीने, 3 सप्ताह और 3 दिन। इस दौरान गर्भवती मादा को तनावमुक्त माहौल और उच्च गुणवत्ता वाला पौष्टिक आहार देना चाहिए।

2. **प्रसव कक्ष की तैयारी (Farrowing House Preparation)-** मादा के बच्चे देने की प्रक्रिया को फैरोइंग (Farrowing) कहा जाता है। प्रसव से लगभग 7-10 दिन पहले मादा को एक अलग और साफ-सुथरे प्रसव कक्ष (Farrowing Pen) में स्थानांतरित कर देना चाहिए।

* **सफाई और कीटाणुशोधन:** प्रसव कक्ष को ब्लीचिंग पाउडर या उपयुक्त कीटाणुनाशक से अच्छी तरह धोकर सुखा लेना चाहिए।

* **बिछौना (Bedding):** फर्श पर सूखी घास, पुआल या लकड़ी का बुरादा बिछाएं ताकि बच्चों को गर्माहट मिल सके।

* **गार्ड रेल्स (Guard Rails):** प्रसव कक्ष की दीवारों के सहारे लोहे के पाइप या लकड़ी की रेलिंग (फर्श से 8-10 इंच ऊपर) लगानी चाहिए। यह पिगलेट्स को मादा के नीचे दबकर मरने से बचाती है।

3. **नवजात पिगलेट्स का तत्काल प्रबंधन (Immediate Care of Newborn Piglets)-** जैसे ही पिगलेट्स का जन्म होता है, अगले 24 से 48 घंटे उनके जीवित रहने के लिए सबसे महत्वपूर्ण होते हैं।

अ. श्वसन मार्ग की सफाई- जन्म के तुरंत बाद पिगलेट्स के मुंह और नाक पर जमा श्लेष्मा (Mucus) या झिल्ली को साफ करें ताकि वे आसानी से सांस ले सकें। यदि कोई बच्चा सांस नहीं ले पा रहा है, तो उसकी छाती को धीरे से थपथपाएं।

ब. नाभि की देखभाल (Navel Cord Care)- नाभि को शरीर से लगभग 1 से 2 इंच छोड़कर साफ कैंची से काट दें। संक्रमण (Navel Ill) से बचाने के लिए कटी हुई नाभि पर तुरंत आयोडीन टिंचर (Tincture of Iodine) लगाएं।

स. कोलोस्ट्रम (खीस/पहला दूध) पिलाना- जन्म के 30 मिनट के भीतर पिगलेट्स को मादा का पहला गाढ़ा दूध (Colostrum) मिलना अनिवार्य है। इस दूध में प्रचुर मात्रा में एंटीबॉडीज (Antibodies) होती हैं, जो बच्चों को बीमारियों से लड़ने की रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करती हैं। जो बच्चे कमजोर हैं, उन्हें पकड़कर थन तक पहुंचाना चाहिए।

4. **पिगलेट्स की सामान्य स्वास्थ्य और शारीरिक देखभाल**

शुरुआती दिनों में पिगलेट्स को विशेष शारीरिक देखभाल की आवश्यकता होती है, जिसमें निम्नलिखित प्रक्रियाएं शामिल हैं:

तापमान नियंत्रण (Brooding/Temperature Management)- नवजात पिगलेट्स के शरीर में वसा (Fat) की कमी होती है, जिससे उन्हें बहुत जल्दी ठंड लग जाती है। * पहले सप्ताह में प्रसव कक्ष का तापमान 32°C से 35°C होना चाहिए। * इसके लिए इन्फ्रारेड बल्ब (Infrared Bulbs) या हीटिंग पैड का उपयोग करें। * जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं, तापमान को धीरे-धीरे कम किया जा सकता है।

दांत काटना (Teat Clipping / Tooth Clipping)- पिगलेट्स के जन्म के समय 8 बहुत नुकीले सुई जैसे दांत (Needle Teeth) होते हैं। दूध पीते समय ये दांत मादा के थनों को घायल कर सकते हैं या आपस में लड़ते समय एक-दूसरे को चोट पहुंचा सकते हैं। इसलिए, जन्म के 24 घंटे के भीतर एक विशेष 'टूथ क्लिपर' की मदद से इन दांतों के केवल नुकीले सिरों को काट देना चाहिए। ध्यान रहे कि मसूड़ों को चोट न पहुंचे।

आयरन का इंजेक्शन (Iron Injection)- सूअर के दूध में आयरन (Loha) की मात्रा बहुत कम होती है, और पिगलेट्स बहुत तेजी से बढ़ते हैं। यदि उन्हें अतिरिक्त आयरन न मिले, तो वे एनीमिया (रक्तअल्पता) का शिकार हो जाते हैं, जिसे 'पिगलेट एनीमिया' कहा जाता है। इससे बचाव के लिए जन्म के 3 से 4 दिनों के भीतर प्रत्येक पिगलेट को 100 से 200 मिलीग्राम आयरन डेक्सट्रान (Iron Dextran) का इंजेक्शन मांसपेशियों में (Intramuscular) देना चाहिए।

पूंछ काटना (Tail Docking)- घने माहौल में रहने पर पिगलेट्स कभी-कभी एक-दूसरे की पूंछ चबाने लगते हैं (Tail Biting), जिससे संक्रमण फैल सकता है। इससे बचने के लिए जन्म के 1-2 दिनों के भीतर पूंछ का दो-तिहाई हिस्सा काट दिया जाता है और वहां एंटीसेप्टिक लगाया जाता है।

5. **पिगलेट्स का पोषण प्रबंधन (Nutritional Management)-** पिगलेट्स के त्वरित और स्वस्थ विकास के लिए उनका सही पोषण बेहद जरूरी है।

क्रीप फीडिंग (Creep Feeding)- जब पिगलेट्स लगभग 10 से 14 दिन के हो जाते हैं, तो केवल मादा का दूध उनकी बढ़ती पोषण संबंधी आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त नहीं होता। इस समय उन्हें एक विशेष प्रकार का सुपाच्य और उच्च प्रोटीन युक्त दाना दिया जाता है, जिसे क्रीप फीड (Creep Feed) कहते हैं। * यह दाना एक छोटे घेरे (Creep Area) में रखा जाता है जहाँ केवल बच्चे जा सकते हैं।

6. **बधियाकरण (Castration)-** जिन नर पिगलेट्स को भविष्य में प्रजनन (Breeding) के लिए नहीं रखना है और केवल मांस उत्पादन (Meat Production) के लिए पालना है, उनका बधियाकरण कर देना चाहिए।

सही समय: यह प्रक्रिया जन्म के 1 से 2 सप्ताह के भीतर कर लेनी चाहिए, क्योंकि इस उम्र में बच्चों को दर्द कम होता है, खून कम बहता है और घाव जल्दी भरता है।

लाभ: बधिया किए गए नर सूअर शांत होते हैं, तेजी से वजन बढ़ाते हैं और उनके मांस से एक विशेष प्रकार की अप्रिय गंध (Boar Taint) नहीं आती।

7. **वीनिंग या दूध छुड़ाना (Weaning Management)-** मादा से पिगलेट्स को अलग करने की प्रक्रिया को 'वीनिंग' कहते हैं। आधुनिक सूअर पालन में यह एक अत्यंत तनावपूर्ण चरण होता है।

सही समय: आमतौर पर पिगलेट्स को 28 से 35 दिनों की उम्र में (जब उनका वजन 7-8 किलोग्राम हो जाए) मां से अलग कर दिया जाता है।

प्रबंधन: तनाव को कम करने के लिए बच्चों को उसी पेन (कमरे) में रहने दें और मादा सूअर को वहां से हटा दें। उन्हें वही क्रीप फीड देना जारी रखें जो वे पहले से खा रहे थे। पानी में विटामिन और इलेक्ट्रोलाइट्स मिलाने से उनका तनाव कम होता है।

8. **रोग नियंत्रण और टीकाकरण (Disease Control and Vaccination)**

पिगलेट्स में बीमारियों के प्रति संवेदनशीलता अधिक होती है। एक अच्छी जैव-सुरक्षा (Biosecurity) और टीकाकरण तालिका से नुकसान को टाला जा सकता है।

प्रमुख बीमारियां:

1.**पिगलेट डायरिया (Scours):** यह गंदगी और बैक्टीरिया (जैसे श्व. ष्यद्यद्व) के कारण होता है। प्रसव कक्ष को सूखा और साफ रखकर इससे बचा जा सकता है।

2.**स्वाइन फीवर (Swine Fever):** यह एक अत्यंत घातक वायरल बीमारी है। इससे बचाव के लिए 6-8 सप्ताह की उम्र में पिगलेट्स को स्वाइन फीवर का टीका अवश्य लगवाएं।

निष्कर्ष- सूअर पालन व्यवसाय की रीढ़ पिगलेट्स का कुशल प्रबंधन ही है। जन्म के समय सही देखभाल, उचित तापमान, समय पर आयरन का इंजेक्शन, पौष्टिक क्रीप फीड और वैज्ञानिक तरीके से दूध छुड़ाना (Weaning) ही वह चाबियां हैं जो पिगलेट्स की मृत्यु दर को 5% से भी कम रख सकती हैं। यदि एक पशुपालक इन सभी वैज्ञानिक तकनीकों को अपनाता है, तो वह न केवल अपने पशुओं को स्वस्थ रख सकता है, बल्कि अपने व्यवसाय से अधिकतम मुनाफा भी कमा सकता है।

श्रीमती ममता व्यास सहायक प्रोफेसर, मंदसौर विश्वविद्यालय

डॉ. विपुल सिंह सहायक प्रोफेसर, मंदसौर विश्वविद्यालय

प्रकाश रेगर सहायक प्रोफेसर, ज्ञानोदय विश्वविद्यालय नीमच

चंचल भमोलिया प्रयोगशाला सहायक मंदसौर विश्वविद्यालय

अरुण एम.एस.सी. (कृषि) शस्य विज्ञान मंदसौर विश्वविद्यालय

किसानों की आय दोगुनी करने में कृषि विस्तार सेवाओं की भूमिका

कृषि विस्तार सेवाएँ-अर्थ और आवश्यकता- कृषि विस्तार का अर्थ है-किसानों तक नई तकनीकों, बेहतर बीजों, आधुनिक सिंचाई विधियों, जलवायु-अनुकूल खेती पद्धतियों और बाजार की जानकारी पहुँचाना। यह केवल जानकारी देने का काम नहीं, बल्कि किसानों को शिक्षित, प्रशिक्षित और सक्षम बनाने की प्रक्रिया है।

अध्ययन बताते हैं कि जिन किसानों तक विस्तार सेवाएँ पहुँचती हैं, उनकी आय में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। मध्य प्रदेश में कृषि विज्ञान केंद्रों (KVKs) के हस्तक्षेप वाले क्षेत्रों में अध्ययन से पता चला कि विस्तार सेवाओं का लाभ उठाने वाले किसानों की शुद्ध आय गैर-लाभार्थी किसानों की तुलना में 111% अधिक थी । इसके अलावा, DFI (Doubling Farmers Income) योजना के तहत KVKs के हस्तक्षेप वाले परिवारों की आय में 2016-17 से 2020-21 के बीच 156% की वृद्धि दर्ज की गई। सरकारी आँकड़ों के अनुसार, एक कृषि परिवार की औसत मासिक आय 2012-13 में रु. 6,426 से बढ़कर 2018-19 में रु. 10,218 हो गई। यह वृद्धि विस्तार सेवाओं सहित विभिन्न योजनाओं के समन्वित प्रभाव का परिणाम है।

विस्तार सेवाओं के माध्यम से आय वृद्धि के मार्ग

(क) उत्पादकता में वृद्धि- विस्तार सेवाएँ किसानों को उन्नत बीज, संकर किस्में, जैविक खेती तकनीक, एवं कीट प्रबंधन के बारे में जानकारी प्रदान करती हैं। सॉइल हेल्थ कार्ड योजना के तहत किसानों को अपनी मिट्टी की सेहत जानने और उर्वरकों के सही उपयोग में मदद मिली है। डिजिटल कृषि मिशन के तहत 'अग्रिस्टैक', 'किसान रजिस्ट्री', और 'जियो-रेफरेंस्ड विलेज मैप' बनाए जा रहे हैं, जो किसानों को समय पर और विश्वसनीय फसल-संबंधी जानकारी उपलब्ध कराते हैं ।

कृषि विज्ञान केंद्र (KVK) प्रशिक्षण का प्रभाव- असम के बरपेटा जिले में किए गए एक अध्ययन के अनुसार, KVK प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद किसानों के ज्ञान स्तर में 68.2% की वृद्धि हुई, और तकनीक अपनाने की दर 34.2% से बढ़कर 68.7% हो गई। इसका सीधा प्रभाव उत्पादन पर पड़ा–धान की पैदावार में 24.2% और सब्जी उत्पादन में 31.4% की वृद्धि दर्ज की गई।

(ख) लागत में कमी- ड्रिप सिंचाई और स्प्रिंकलर जैसी सूक्ष्म सिंचाई तकनीकें पानी और उर्वरक की महत्वपूर्ण बचत करती हैं। 'पर ड्रॉप मोर क्रॉप' योजना के तहत छोटे किसानों को सब्सिडी दी जाती है । विस्तार कार्यकर्ता इन तकनीकों को अपनाने में किसानों का मार्गदर्शन करते हैं, जिससे उत्पादन लागत में कमी आती है और लाभ-लागत अनुपात में सुधार होता है। बरपेटा अध्ययन में लाभ-लागत अनुपात में 40.1% सुधार दर्ज किया गया।

(ग) विविधीकरण-केवल पारंपरिक फसलों पर निर्भरता से आय दोगुनी नहीं हो सकती। विस्तार सेवाएँ किसानों को उच्च मूल्य वाली फसलों–सब्जियाँ, फल, तिलहन, दालें–की ओर रुख करने के लिए प्रेरित करती हैं। मध्य प्रदेश के अध्ययन में पाया गया कि उच्च मूल्य वाली फसलों (सब्जियाँ, डेयरी आदि) की ओर कृषि विविधीकरण DFI परिवारों की आय बढ़ाने में महत्वपूर्ण रहा है ।

सफलता की कहानी- उत्तराखंड के थराली, चमोली जिले के पूर्व सैनिक गोपाल सिंह रावत ने कृषि विज्ञान केंद्र, ग्वालदम के मार्गदर्शन में पॉलीटनल के तहत सब्जी उत्पादन शुरू किया। आज वह अपने 10 नाली खेत में सब्जियाँ उगा रहे हैं और अन्य किसानों की तुलना में सात गुना अधिक आय प्राप्त कर रहे हैं। उन्होंने छह महीने में रु. 70,000 की आय अर्जित की।

(घ) पशुधन प्रबंधन-भारत दुनिया का सबसे बड़ा दूध उत्पादक देश है। विस्तार सेवाएँ पशु आहार, नस्ल सुधार, टीकाकरण और पशु रोग नियंत्रण के बारे में जानकारी देती हैं। 'राष्ट्रीय गोकुल मिशन' और 'राष्ट्रीय पशु रोग नियंत्रण कार्यक्रम' इस दिशा में महत्वपूर्ण पहल हैं ।

(ङ) डिजिटल विस्तार-डिजिटल कृषि मिशन के तहत AI/ML, IoT, ब्लॉकचेन जैसी उभरती तकनीकों का उपयोग करके डिजिटल कृषि परियोजनाओं को राज्य सरकारों को वित्त पोषण दिया जाता है । ई-नाम प्लेटफॉर्म ने मंडियों को एकीकृत किया है, जिससे किसानों को बेहतर मूल्य मिल सके। प्रधानमंत्री अन्नदाता आय संरक्षण अभियान (PM-AASHA) के तहत मूल्य समर्थन योजना (PSS), मूल्य घाटा भुगतान योजना (PDPS) और बाजार हस्तक्षेप योजना (MIS) के माध्यम से किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य सुनिश्चित किया जाता है ।

चुनौतियाँ-जहाँ विस्तार सेवाएँ कमज़ोर हैं

लक्ष्य महान है, परंतु मार्ग कठिन है। कृषि विस्तार सेवाओं के समक्ष अनेक चुनौतियाँ हैं-

(क) अपर्याप्त बुनियादी सुविधाएँ- असम के बरपेटा जिले के अध्ययन में पाया गया कि 64.2% किसानों ने अपर्याप्त भौतिक सुविधाओं को एक प्रमुख बाधा बताया ।

(ख) समय संबंधी संघर्ष- 52% किसानों ने प्रशिक्षण के समय को अपनी खेती की गतिविधियों के साथ तालमेल बिठाने में कठिनाई का उल्लेख किया ।

(ग) अनुवर्ती सहायता का अभाव-46.7% किसानों ने पर्याप्त अनुवर्ती सहायता (follow-up support) न मिलने को एक बड़ी समस्या बताया । प्रशिक्षण के बाद निरंतर मार्गदर्शन की कमी से तकनीकों को स्थायी रूप से अपनाने में दिक्कत आती है।

(घ) सीमित पहुँच- उच्च मूल्य वाली कृषि (हॉर्टिकल्चर, पशुपालन, मत्स्यपालन) में विस्तार सेवाएँ सीमित हैं। अध्ययन बताते हैं कि शिक्षा स्तर, MSP जागरूकता, और FPO में सदस्यता विस्तार सेवाओं तक पहुँच को प्रभावित करते हैं।

(ङ) डिजिटल विभाजन- ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल साक्षरता की कमी के कारण डिजिटल विस्तार सेवाओं का लाभ सभी किसानों तक नहीं पहुँच पाता।

सरकारी योजनाएँ और पहल- भारत सरकार ने किसानों की आय बढ़ाने के लिए कृषि विस्तार एवं कल्याण विभाग का बजट 2013-14 के रु. 21,933.50 करोड़ से बढ़ाकर 2025-26 में रु. 1,27,290.16 करोड़ कर दिया है ।

निम्नलिखित प्रमुख योजनाएँ इस लक्ष्य में योगदान दे रही हैं-

योजना का नाम एवं उद्देश्य

प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि : किसानों को आय सहायता
प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना : फसल हानि से बचाव
कृषि अवसंरचना कोष: कोल्ड स्टोरेज, आपूर्ति श्रृंखला विकास
10,000 FPOs का गठन: किसानों की सौदेबाजी शक्ति बढ़ाना
राष्ट्रीय प्राकृतिक खेती मिशन: टिकाऊ खेती को बढ़ावा
डिजिटल कृषि मिशन: डिजिटल DPI का निर्माण

इन योजनाओं के समन्वित प्रभाव से ICAR ने 75,000 किसानों की सफलता कहानियाँ प्रकाशित की हैं, जिन्होंने अपनी आय दोगुनी से अधिक बढ़ाई ।

आगे का रास्ता- विस्तार सेवाओं को सशक्त करना

1.भौतिक बुनियादी ढाँचे को मजबूत करना—बरपेटा अध्ययन में 64.2% किसानों ने अपर्याप्त सुविधाओं को बाधा बताया, इसलिए KVK और विस्तार केंद्रों के बुनियादी ढाँचे में सुधार आवश्यक है ।

2.अनुवर्ती सहायता प्रणाली—46.7% किसानों ने follow-up की कमी को समस्या बताया, इसलिए प्रशिक्षण के बाद निरंतर सहायता और मार्गदर्शन की व्यवस्था की जानी चाहिए ।

3.'किसान-से-किसान' (Farmer-to-Farmer) मॉडल—प्रशिक्षित प्रगतिशील किसानों को विस्तार सेवाओं से जोड़ना, जैसा कि गोपाल सिंह रावत के मामले में हुआ ।

4.तकनीकी समावेशन–AI, IoT, ड्रोन और मोबाइल ऐप्स के माध्यम से विस्तार को स्केल करना ।

5.समय-अनुकूल प्रशिक्षण—52% किसानों ने समय संघर्ष को बाधा बताया, इसलिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों को खेती के मौसम के अनुसार लचीला बनाया जाना चाहिए ।

6.लिंग-विशिष्ट मॉड्यूल—महिला किसानों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप प्रशिक्षण मॉड्यूल विकसित करना ।

निष्कर्ष- भारत सरकार ने किसानों की आय दोगुनी करने के लिए बजटीय आवंटन में अभूतपूर्व वृद्धि की है। कृषि विज्ञान केंद्रों (KVKs) की सफलता–जहाँ DFI परिवारों की आय में 156% की वृद्धि हुई और बरपेटा में औसत कृषि आय में 34.7% की वृद्धि हुई –यह साबित करती है कि विस्तार सेवाएँ किसानों की आय बढ़ाने में कितनी प्रभावी हैं। लेकिन यह धनराशि और योजनाएँ तभी सार्थक होंगी जब कृषि विस्तार सेवाएँ सशक्त, सुलभ और प्रभावी होंगी। बुनियादी सुविधाओं की कमी, समय संघर्ष, और अनुवर्ती सहायता की कमी जैसी चुनौतियों का समाधान करना आवश्यक है। 'कृषिकुल' मॉडल, गोपाल सिंह रावत जैसे सफल किसान, और KVKs के प्रभावशाली परिणाम बताते हैं कि सही दिशा में किया गया प्रयास ही सफलता की कुंजी है। अब समय आ गया है कि इन मॉडलों को देशव्यापी आंदोलन का रूप दिया जाए–एक ऐसा आंदोलन जो भारत के हर किसान को आत्मनिर्भर, समृद्ध और सशक्त बनाए।

"भारत गाँवों में बसता है।" किसान समृद्ध होगा तो भारत समृद्ध होगा। विस्तार सेवाएँ वह औज़ार हैं, जो इस समृद्धि के द्वार खोल सकती हैं।

✍ **नरेंद्र पाटीदार** एमडीओ (मैनकाइंड एग्रीटेक), दलौदा, मंदसौर (म.प्र.)

18% प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट (प्लांट-बेस्ड): फसलों में फूल और फल बढ़ाने का प्राकृतिक उपाय

परिचय- आधुनिक कृषि में उत्पादकता बढ़ाने के साथ-साथ टिकाऊ खेती पर जोर दिया जा रहा है। ऐसे में, जैव-उत्तेजक (Bio stimulants) किसानों के लिए एक कारगर उपाय के रूप में उभर कर सामने आए हैं। इन्हीं जैव-उत्तेजकों में प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट (Protein Hydrolysates) एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं, जो पौधों को सीधे पोषण देने के बजाय उनकी आंतरिक क्षमता को जागृत करके वृद्धि, उपज और तनाव सहनशीलता को बढ़ाते हैं।

फसलों के जीवन चक्र में फूल आने की अवस्था (Flowering Stage) अत्यंत निर्णायक होती है। यह वह समय है जब पौधा वानस्पतिक (Vegetative) से जनन (Reproductive) अवस्था में प्रवेश करता है, और इसी का परिणाम फलों एवं उपज के रूप में सामने आता है। इस लेख में, हम फूल आने से पूर्व विभिन्न फसलों में 18त्र प्लांट-बेस्ड प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट के उपयोग के वैज्ञानिक और व्यावहारिक पहलुओं पर गहराई से चर्चा करेंगे।

प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट (18% प्लांट-बेस्ड) क्या है? प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट, जैसा कि नाम से स्पष्ट है, प्रोटीन के एंजाइमिक या रासायनिक विघटन से बना एक उत्पाद है, जो बड़ी प्रोटीन श्रृंखलाओं को छोटे पेप्टाइड्स और मुक्त अमीनो एसिड में तोड़ देता है। 18% की सांद्रता वाला प्लांट-बेस्ड हाइड्रोलाइसेट मुख्यतः गैर-जीएम (Non-GMO) वनस्पति स्रोतों, जैसे सोयाबीन या अल्फाल्फा, से एंजाइमेटिक प्रक्रिया द्वारा तैयार किया जाता है । इस उत्पाद में सभी 18 आवश्यक अमीनो एसिड होते हैं, जिनमें ट्रिप्टोफैन, हिस्टिडीन, मेथिओनिन, थ्रेओनिन, ग्लाइसिन और आर्जिनिन शामिल हैं, जिन्हें पौधे आसानी से अवशोषित कर सकते हैं ।

प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट के प्रमुख लाभ

प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट कई तरह से फसलों के विकास को गति प्रदान करते हैं-

1.प्राकृतिक केलेटिंग एजेंट: अमीनो एसिड प्राकृतिक केलेटिंग एजेंट का काम करते हैं, जो प्रमुख, द्वितीयक और सूक्ष्म पोषक तत्वों को बांधकर पौधों तक अधिक कुशलता से पहुंचाते हैं, जिससे पोषक तत्वों की हानि कम होती है और उर्वरक दक्षता बढ़ती है ।

2.एंजाइमी गतिविधि और प्रकाश-संश्लेषण में वृद्धिः यह पौधों में एंजाइम सिस्टम को उत्तेजित करता है, प्रोटीन संश्लेषण को बढ़ावा देता है और क्लोरोफिल गतिविधि को बढ़ाता है, जिससे पत्तियां हरी-भरी और स्वस्थ होती हैं ।

3.बेहतर फूल एवं फल सेटिंग- नियमित उपयोग से समय से पहले फूल एवं फल गिरने की समस्या कम होती है और फलों का आकार, रंग एवं गुणवत्ता बेहतर होती है ।

4.तनाव सहनशीलता- यह पौधों को सूखा, गर्मी और लवणता (Salinity) जैसे अजैविक तनावों (Abiotic Stress) से लड़ने में सहायता करता है ।

फूल आने से पहले (Pre-Flowering Stage) क्यों करें उपयोग?-फसल के विकास में फूल आने से पहले का चरण अत्यधिक संवेदनशील होता है । इस समय पौधा वानस्पतिक से जनन अवस्था में प्रवेश करने की तैयारी कर रहा होता है, और पोषक तत्वों की मांग सबसे अधिक होती है । **इस दौरान प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट का प्रयोग क्यों लाभकारी है, आइए समझते हैं-**

1. अधिकतम फूल एवं उपज

एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक अध्ययन में, कैलेंडुला (गेंदा) पौधों पर सोयाबीन प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट (SPH) के प्रभाव का परीक्षण किया गया। परिणाम आश्चर्यजनक रहे-

* मिट्टी-सिंचन (Soil Drenching) विधि सबसे प्रभावी पाई गई। 1 ग्राम/लीटर की कम खुराक पर, प्रति पौधे फूलों की औसत संख्या 8.00 (नियंत्रण समूह) से बढ़कर 14.30 हो गई ।

* पत्तीय छिड़काव (Foliar Spraying) की तुलना में मृदा-सिंचन अधिक प्रभावी था ।

* इस उपचार से फूलों में LPE (16:0) और LPE (18:2) जैसे प्राकृतिक पौधा-विकास नियामक (Plant Growth Regulators) की मात्रा बढ़ गई ।

2. प्रतिकूल परिस्थितियों के लिए तैयारी

शोध से पता चलता है कि प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट का प्रयोग पौधों को सूखे जैसी गंभीर परिस्थितियों से बेहतर ढंग से उबरने में मदद करता है। फूल आने से पहले इसका उपयोग पौधों को तनाव-सहिष्णु बनाता है, जिससे फूल आने और फल बनने के दौरान आने वाली प्रतिकूल मौसम स्थितियों का सामना करने की क्षमता बढ़ जाती है।

तरीका और खुराक (Method & Dosage)

18% प्लांट-बेस्ड प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट विभिन्न रूपों में उपलब्ध है, जैसे - तरल (Liquid) या पानी में घुलनशील पाउडर। **फसलों में इसके प्रयोग की मुख्य विधियाँ हैं-**

1.पत्तियों पर छिड़काव (Foliar Application): सबसे आम तरीका। इसे पानी में घोलकर बारीक स्प्रे के रूप में पत्तियों पर छिड़का जाता है। फूल आरंभ (Flower Initiation) के समय पहला छिड़काव करें, और फिर हर 15-20 दिनों पर 2-3 छिड़काव करें ।

* **खुराक**-2-3 मिली प्रति लीटर पानी।

2.मृदा-सिंचन (Soil Drenching / Drip Irrigation): इसे पानी में मिलाकर सीधे पौधों की जड़ों के पास डाला जाता है। अध्ययनों में यह विधि फूलों की बायोमास पर अधिक प्रभावी पाई गई है।

* **खुराक-** 1 लीटर प्रति एकड़ (ड्रिप सिंचाई के माध्यम से)।

खुराक और सावधानियाँ (Dosage & Precautions)

किसी भी जैव-उत्तेजक की तरह, सही खुराक ही सफलता की कुंजी है।

* **खुराकः** शोध में पाया गया है कि फूलों पर उच्चतम प्रभाव कम खुराक (1 ग्राम/लीटर) पर देखा गया है। बाजार में उपलब्ध तरल उत्पादों के लिए 2-3 मिली/लीटर की खुराक प्रभावी है।

सावधानियां

* हमेशा संतुलित पोषण (खाद/उर्वरक) के साथ ही जैव-उत्तेजक का उपयोग करें। यह किसी भी पोषण की कमी का विकल्प नहीं है।

* इस उत्पाद को सल्फर (Sulphur) या कॉपर (Copper) आधारित उत्पादों के साथ न मिलाएं, क्योंकि ये अमीनो एसिड के साथ प्रतिक्रिया करके इसकी प्रभावशीलता को कम कर देते हैं ।

* छिड़काव हमेशा सुबह या शाम के समय करें, जब तापमान कम हो और अमीनो एसिड का अवशोषण अधिकतम हो।

* उत्पाद लेबल पर दी गई निर्देशों का पालन करें।

निष्कर्ष (Conclusion)

आधुनिक कृषि में उत्पादकता बढ़ाने के लिए नवीन तकनीकों का समावेश आवश्यक है। फूल आने से पूर्व 18% प्लांट-बेस्ड प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट का प्रयोग एक वैज्ञानिक रूप से प्रमाणित और प्रभावी जैव-उत्तेजक रणनीति है । यह न केवल पौधे को त्वरित पोषण और आवश्यक अमीनो एसिड प्रदान करता है, बल्कि उसके हार्मोनल सिस्टम को सक्रिय करके अधिक फूल (More Flowers), बेहतर फल (Better Fruits) और अंततः बंपर पैदावार (Higher Yield) सुनिश्चित करने में सहायक होता है । साथ ही, यह पर्यावरण-अनुकूल (Eco-friendly) और जैविक खेती (Organic Farming) के लिए उपयुक्त होने के कारण टिकाऊ कृषि (Sustainable Agriculture) का एक मजबूत आधार प्रदान करता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

अमरनाथ सक्सेना चीफ टेक्निकल ऑफिसर- कमर्शियल, बजाज जनरल इंश्योरेंस लिमिटेड (पूर्व नाम बजाज आलियांज़ जनरल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड)

जॉब लॉस कवर : आपकी फाइनेंशियल स्थिरता की सुरक्षा

आज की तेज़ी से बदलती दुनिया में, फाइनेंशियल सेक्योरिटी अब आपके स्वास्थ्य, जीवन या आपकी कार जैसे मूल्यवान एसेट की सेक्योरिटी तक सीमित नहीं है। जहां हेल्थ और लाइफ इंश्योरेंस आपके परिवार के भविष्य को सुरक्षित करता है, और मोटर इंश्योरेंस आपके वाहन की सुरक्षा करता है, वहीं एक ऐसा रिस्क भी है जिसे अक्सर नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है- और वह है अचानक नौकरी छूट जाने का संकट। नौकरी का छूटना, चाहे वह ले ऑफ के कारण हो या अचानक आई स्वास्थ्य समस्याओं की वजह से, आपकी नियमित आय में बाधा डाल सकता है और आपकी आर्थिक स्थिरता के लिए खतरा पैदा कर सकता है। जॉब लॉस कवर का उद्देश्य इसी फाइनेंशियल कमी को दूर करना है। यह आपको एक ऐसा सुरक्षा कवच प्रदान करता है जो आपके अगले करियर अवसर तक आपकी आर्थिक ज़रूरतों को पूरा करने में मदद करता है।

जॉब लॉस कवर क्या है?

जॉब लॉस कवर एक विशेष इंश्योरेंस लाभ है जो आपकी इच्छा के बिना नौकरी छूट जाने की स्थिति में आपको फाइनेंशियल सहायता प्रदान करता है। इसका मतलब है ऐसी स्थितियों में नौकरी जाना जो आपके नियंत्रण में न हों, जैसे कंपनियों का मर्जर, अधिग्रहण, कॉस्ट-कटिंग या ऑपरेशन बंद करना। यह उन स्थितियों को भी कवर करता है जब किसी बीमारी या चोट की वजह से आप अपनी नौकरी जारी नहीं रख पाते। इस लाभ का भुगतान आमतौर पर मासिक किश्तों के रूप में किया जाता है, जो चुने गए कवर और अवधि के अनुसार आपको कुछ समय के लिए आय का सहारा प्रदान करता है।

जॉब लॉस कवर की प्रमुख विशेषताएं

यह प्लान विशेष रूप से उन वेतनभोगी कर्मचारियों के लिए है जो सीधे कंपनी के पेरोल पर हैं; इसमें अस्थायी, कॉन्ट्रैक्चुअल और प्रोबेशनरी कर्मचारियों को शामिल नहीं किया गया है। अगर मर्जी के बिना नौकरी छूटती है, तो तय की गई राशि हर महीने तब तक दी जाती है जब तक कि इंश्योर्ड व्यक्ति द्वारा चुने गए महीनों की अवधि पूरी न हो जाए या उसे नई नौकरी न मिल जाए, इनमें से जो भी पहले हो। भुगतान शुरू होने से पहले एक प्रतीक्षा अवधि होती है। अगर आपकी कंपनी आपको सेवरेंस पे या नोटिस पीरियड के बदले वेतन देती है, तो ओवरलैपिंग लाभों से बचने के लिए इंश्योरेंस भुगतान को एडजस्ट किया जाता है। कवरेज की अधिकतम लिमिट आपके मासिक वेतन के एक निश्चित प्रतिशत, आमतौर पर लगभग 70% तक सीमित होती है, भले ही आपके पास एक से अधिक पॉलिसी क्यों न हों. यही कारण है कि जॉब लॉस कवर एक बहुत ही व्यावहारिक और मददगार प्लान बन जाता है, जो करियर में बदलाव के मुश्किल समय में आपको स्थिर फाइनेंशियल सहायता प्रदान करता है।

जॉब लॉस कवर क्यों महत्वपूर्ण है

जॉब लॉस कवर होने से अचानक आने आर्थिक संकटों का सामना और भी बेहतर तरीके से कर सकते हैं। अगर आपके पास यह कवर नहीं है, तो अचानक नौकरी जाने से आप बड़ी मुश्किल में पड़ सकते हैं। किराया, EMIs और बच्चों की स्कूल फीस जैसे ज़रूरी खर्चों को रोका नहीं जा सकता, इसलिए यह सुरक्षा होना बहुत ज़रूरी है। ऐसे मामलों में, लोग अक्सर केवल अपनी बचत पर निर्भर रहते हैं, लेकिन अगर नौकरी मिलने में देरी हो जाए, तो वह पैसा बहुत जल्दी खत्म हो सकता है। हालांकि, जॉब लॉस कवर होने से आपके पास एक सुरक्षित विकल्प रहता है, जो आपको हर महीने किश्तों में भुगतान देता है। यह इंश्योरेंस अवधि के दौरान आपको आर्थिक रूप से मजबूत रखता है ताकि आप बिना किसी तनाव के नई नौकरी की तलाश कर सकें। इस लगातार सहयोग से आप अपनी बचत को खर्च किए बिना अपने बुनियादी खर्चे पूरे कर सकते हैं। यह आपको वह मानसिक शांति और भरोसा देता है जिससे आप आर्थिक तंगी की परवाह किए बिना फिर से रोजगार पाने की कोशिश कर सकते हैं। संक्षेप में, जॉब लॉस कवर यह सुनिश्चित करता है कि कुछ समय के लिए आय रुकने का असर आपके भविष्य के बड़े प्लान्स पर न पड़े।

एक्सक्लूज़न जिनके बारे में आपको पता होना चाहिए

जॉब लॉस कवर में कुछ खास एक्सक्लूज़न होते हैं, जो यह तय करते हैं कि आप कब क्लेम का लाभ ले सकते हैं। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सहायता केवल उन वास्तविक मामलों में मिले जहां नौकरी आपकी मर्जी के बिना गई हो। यह उन स्थितियों में लागू नहीं होता जहां आप अपनी इच्छा से नौकरी छोड़ते हैं, जैसे कि इस्तीफा देना या रिटायर होना, क्योंकि ये आपके स्वैच्छिक फैसले हैं. ठीक इसी तरह, अगर किसी को गलत व्यवहार, धोखाधड़ी या अनुशासन तोड़ने की वजह से नौकरी से निकाला जाता है, तो उसे भी कवर नहीं दिया जाता है, क्योंकि ये आपकी अपनी गलतियों की वजह से हुए नुकसान माने जाते हैं. इसके अलावा, हड़तालों, श्रम विवादों या मैटरनिटी या पैटर्निटी लीव न बढ़ाए जाने के कारण होने वाली बेरोजगारी को भी इस कवर में शामिल नहीं किया जाता है, क्योंकि इन स्थितियों को अचानक होने वाली बेरोजगारी नहीं माना जाता है। अंत में, कवर केवल भारत के भीतर नौकरियों पर लागू होता है, जिसका मतलब है कि देश के बाहर रोजगार के नुकसान को कवर नहीं किया जाता है। इन एक्सक्लूज़न का उद्देश्य इस कवर को सिर्फ स्थाई नौकरी में आने वाली उन अचानक और बड़ी रुकावटों तक सीमित रखना है जिन्हें टाला न जा सके, न कि उन स्थितियों के लिए जो आपकी अपनी मर्जी से हों या जिनके बारे में पहले से पता हो।

कुल मिलाकर, जॉब लॉस कवर लेना आपके भविष्य की आर्थिक सुरक्षा के प्रति एक जिम्मेदारी भरा कदम है। यह सुनिश्चित करता है कि अचानक नौकरी जाने जैसा कोई संकट आपके फाइनेंशियल प्लान को खराब न करें। यह अनिश्चितता के समय में आपको सुरक्षा का भरोसा देता है और मानसिक शांति बनाए रखता है

गोवंशीय पशुओं में थिलेरिया रोग

डॉ. योगेश नाग, डॉ. आर.एफ. कुजूर
डॉ. डी.के. जोल्हे, डॉ. आर.सी. घोष
डॉ. पी. सिंह, डॉ. पावन सिदार
डॉ. नेहा भगत, डॉ. कालेश्वरी कंवर
डॉ. दिव्या महिलाने
दाऊ श्री वासुदेव चंद्राकर कामधेनु विश्वविद्यालय, पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन महाविद्यालय, अंजोरा, दुर्ग (छ.ग.)

परिचय

यह गंभीर बीमारी परजीवी जनित रोग है जिसमें तेज बुखार एवं लसिका गन्थि में सुजन प्रमुख होते हैं। कम उम्र के बछड़ें इस रोग के प्रति अत्याधिक संवेदनशील होते है साथ ही साथ यह रोग संकर नस्ल के पशु में ज्यादा प्रभावकारी है। इस रोग का प्रकोप वर्षा एवं ग्रीष्म ऋतुओं में अधिक होता है, क्योंकि इस मौसम में रोग संचरण करने वाली किलनियों (चमोकन) की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हो जाती है।

रोग का कारण और फैलाव

* थिलेरिओसिस एक सूक्ष्म रक्त परजीवी 'थिलेरिया एनुलेटा' के कारण होता है ।
* यह मुख्य रूप से विदेशी और संकर नस्ल की गायों को अपना शिकार बनाता है ।
* भारत में यह 'हायलोमा एनाटोलिकम' (Hyalomma anatolicum) नाम की एक विशेष किलनी के काटने से फैलता है ।
* जब किलनी किसी संक्रमित जानवर का खून चूसती है, तो परजीवी किलनी की लार ग्रंथियों में पहुँचकर अपनी संख्या बढ़ा लेते हैं ।
* इसके बाद जब यह किलनी किसी स्वस्थ पशु को काटती है, तो यह परजीवी उसके खून की लाल और सफेद कोशिकाओं में प्रवेश कर जाते हैं ।

बीमारी के लक्षण

* संक्रमित किलनी के काटने के लगभग एक सप्ताह बाद पशु में बीमारी के लक्षण दिखाई देने लगते हैं
* कम उम्र के और लंबी यात्रा से थके हुए पशु इस बीमारी के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं।
* शुरुआत में पशु को लगातार या चढ़ता-उतरता तेज बुखार रहता है ।
* आँखों से पानी आना, पुतली का लाल होना व सूजना, नाक से पानी गिरना और दिल की धड़कन तेज होना इसके मुख्य लक्षण हैं ।

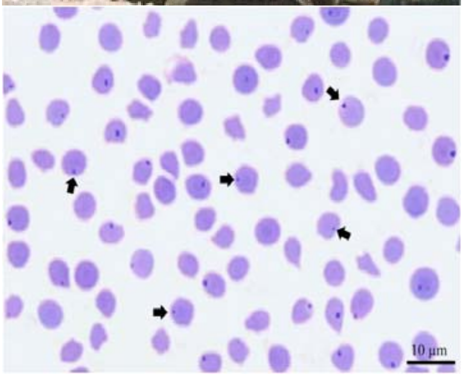

* पशु की लसिका ग्रंथि (प्रिस्कैपुलर) सूज जाती है, उसे खून की कमी हो जाती है, दस्त या कब्ज की शिकायत होती है और पेशाब का रंग पीला पड़ जाता है।
* फेफड़े बुरी तरह खराब हो जाते हैं, जिससे जानवर को सांस लेने में काफी तकलीफ होती है।
* अगर समय पर इलाज न मिले, तो 2-3 हफ्तों के अंदर लगभग 70 प्रतिशत बीमार पशुओं की मौत हो सकती है ।

जांच और उपचार

* इसकी जांच पशुपालन विभाग की प्रयोगशाला में खून की जांच (रक्त पट्टिका) द्वारा की जा सकती है ।
* इलाज के लिए 'बूपारवाक्वोन' (ब्यूटालैक्स) नामक दवा उपलब्ध है ।
* इसे 2.5 मिलीग्राम प्रति किलो शरीर के वजन के हिसाब से मांसपेशियों में इंजेक्शन के जरिए लगाया जाता है ।
* आमतौर पर एक इंजेक्शन पर्याप्त होता है, लेकिन बहुत गंभीर मामलों में 48 घंटे के बाद दूसरा इंजेक्शन दिया जाता है ।
* गलत इलाज से पशु की जान जा सकती है, इसलिए जांच और इलाज हमेशा एक प्रशिक्षित पशु चिकित्सक से ही करवाना चाहिए ।

बचाव और रोकथाम

* पशुशाला में साफ-सफाई रखकर और निश्चित अंतराल पर किलनी-नाशक दवाओं का प्रयोग करके इस बीमारी को रोका जा सकता है ।
* बाहर से आने वाले नए पशुओं को लगभग 40 दिन तक अन्य पशुओं से अलग (क्वारंटीन) रखना चाहिए ।
* यह ध्यान रखना जरूरी है कि किसी संवेदनशील पशु को बीमार करने के लिए मात्र एक संक्रमित किलनी का काटना ही काफी होता है ।
* बचाव के लिए 'एटीनुएटेड कल्चर' टीका (vaccine) बाजार में उपलब्ध है ।

दिनेश शिवहरे
Mob. : 98263-55396
मध्य प्रदेश का पहला
श्री दयाल बन्धु केन्द्र
(हिनौतिया वालों की दुकान)
सभी प्रकार की कीटनाशक दवाईयां, जिन्क एवं बीज आदि के थोक एवं खेरीज विक्रेता
गायत्री मंदिर के पास, जवाहर गंज, डबरा जिला ग्वालियर (म.प्र.)
E-mail : shridayalbandhu@gmail.com, dineshshivhare66yahoo.com
08/2025-26

गर्भकालीन विश्राम, दुग्ध उत्पादन में विस्तार

भूपिका देवांगन एम.वी.एससी. शोधार्थी, पशु चिकित्सा विभाग, पशु चिकित्सा महाविद्यालय एवं पशुपालन, अंजोरा, (छत्तीसगढ़)

भुवनेश्वर पाल सिंह कंवर सहायक प्राध्यापक, पशु चिकित्सा विभाग, पशु चिकित्सा महाविद्यालय एवं पशुपालन, अंजोरा, छत्तीसगढ़

स्वर्णलता बारा सहायक प्राध्यापक, पशुधन उत्पादन और प्रबंधन विभाग, कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंद्र, बेमेतरा, छत्तीसगढ़

छत्रपाल सिंह पुहुप विषय वस्तु विशेषज्ञ, सस्य विज्ञान, कृषि विज्ञान केन्द्र, जशपुर, छत्तीसगढ़

परिचय- पशुपालन विशेष रूप से दुग्ध उत्पादन किसानों की आय का एक प्रमुख स्रोत है। दुधारू पशुओं से अधिक दूध प्राप्त करने के लिए उनके संपूर्ण जीवन चक्र में उचित प्रबंधन आवश्यक होता है। इस चक्र में 'सूखी अवधि' (Dry Period) एक ऐसा महत्वपूर्ण चरण है जिसे अक्सर नजर अंदाज कर दिया जाता है। जबकि यह अवधि भविष्य में होने वाले दूध उत्पादन को सीधा प्रभावित करती है। यदि इस अवधि का वैज्ञानिक ढंग से प्रबंधन किया जाए, तो गाय या भैंस के अगले दुग्ध काल (lactation period) में दूध की मात्रा व गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

सूखी अवधि क्या है?-सूखी अवधि वह समय होता है जब दुधारू पशु को दुग्ध दोहन से विश्राम दिया जाता है। यह आमतौर पर 60 दिनों की होती है। इस दौरान पशु गर्भवती होती है और उसका शरीर अगली बियात (calving) की तैयारी करता है। इस समय मेंथनों की मरम्मत (mammary tissue regeneration), भ्रूण की वृद्धि और शरीर के पोषण का संचय होता है।

सूखी अवधि का महत्व

1.**थनऊ तक की मरम्मत**-दुग्ध दोहन से थन की कोशिकाओं पर लगातार दबाव पड़ता है। सूखी अवधि में यह ऊतक स्वयं की मरम्मत कर पाते है जिससे अगली बार दूध उत्पादन बेहतर होता है।

2.**शरीर पोषण की भरपाई** - यह समय शरीर को पोषण संचय करने और दुग्ध उत्पादन के लिए ऊर्जा एकत्र करने का अवसर देता है।

3. **भ्रूण विकास**-गर्भावस्था के अंतिम दो महीने भ्रूण विकास की दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण होते हैं। इस समय पर्याप्त पोषण और देख भाल से स्वस्थ बछड़े का जन्म होता है।

4.**स्वास्थ्य सुधार**-इस दौरान पशुको पर्याप्त आराम, विटामिन, खनिज व पोषक तत्व दिए जाते हैं जो उसकी प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं।

सूखी अवधि का आदर्श समय

गाय: 60 दिन, **भैंस:** 60-90 दिन

इससे कम या अधिक सूखी अवधि देने से दुग्ध उत्पादन पर विपरीत असर पड़ सकता है। यदि अवधि बहुत कम होतो थनों की मरम्मत अधूरी रह जाती है, और यदि बहुत लंबी होतो शरीर में अतिरिक्त वसा संचय हो सकता है जिससे बियात में जटिलताएं हो सकती हैं।

सूखी अवधि का प्रभाव दूध उत्पादन पर- अनुसंधानों से पता चला है कि जिन पशुओं को 60 दिन की समुचित सूखी अवधि दी जाती है, वेबियात के बाद 15-20% अधिक दूध देती हैं। साथ ही दूध की गुणवत्ता, फैट एवं SNF (solidsnotfat) भी बेहतर होता है। भारत में कई संस्थानों जैसे ICAR, NDRI & IVRI की रिपोर्टों ने भी इस बात को प्रमाणित किया है।

सूखी अवधि में प्रबंधन के मुख्य घटक

1. दूध दोहन बंद करना

जब गर्भावस्था 7वें महीने में पहुँच जाए, तब धीरे-धीरे दूध दोहन को बंद करना चाहिए। इसे 'बिलकुल बंद विधि' या 'क्रमशः कम करने की विधि' द्वारा किया जा सकता है।

* दूध दोहन की बारंबारता कम करें
* धीरे-धीरे आहार में ऊर्जा और पानी की मात्रा घटाएं
* एक बार दूध बनना रुक जाए तो थन को हाथ न लगाएं

2. आहार प्रबंधन

* सूखी अवधि में आहार का विशेष ध्यान रखें।
* ऊर्जा, प्रोटीन, खनिज व विटामिन पर्याप्त मात्रा में हो
* सूखा चारा (Dry Roughage) और हरी घास के साथ संतुलित दाना दें
* कैल्शियम, फॉस्फोरस, सेलेनियम, विटामिन (A, D, E) आदि की पूर्ति करें

विशेष: अधिक कैल्शियम देने से दुग्ध ज्वर (Milk Fever) का खतरा बढ़ सकता है, अतः इसकी मात्रा पशु चिकित्सक के निर्देशानुसार ही दें।

3. रोग नियंत्रण

* थन संक्रमण (mastitis) का सबसे ज्यादा खतरा इसी अवधि में होता है।
* थन की नियमित सफाई और ड्राई काउ थेरेपी (Dry Cow Therapy) अपनाएं।
* ड्राई काउ थेरेपी में अंतिम दुहाई के बाद एंटीबायोटिक युक्त थन में लगाने वाली ट्यूब का प्रयोग कर संक्रमण श्रोका जाता है।

4. आवास व्यवस्था

* पशु का आवास साफ-सुथरा, सूखा और हवादार होना चाहिए
* ओढ़ने-बिछाने के लिए साफ सूखी घास या भूसा दें
* ग्रीष्म ऋतु में ठंडी छायाऔर शीत ऋतु में गर्मी से सुरक्षा दें

5. निगरानी एवं पशु चिकित्सा देखरेख

* पशु के शरीर का तापमान, भूख, पेशाब व मल त्याग टादि पर नियमित नजर रखें * गर्भावस्था की स्थिति की जाँच कराते रहें * पशु चिकित्सक से समय-समय पर परामश लें

सूखी अवधि में कौन-कौन सी गलतियाँ नहीं करनी चाहिए? 1.दूध दोहन पूरी तरह न रोकना 2.पोषण में लापरवाही 3.थन की सफाई न करना 4.खनिज व विटामिन पूरक न देना 5.आवास को गंदा या असुरक्षित रखना 6.इनसे थन दोष, दुग्ध ज्वर, कमजोर बछड़ा या दूध उत्पादन में कमी हो सकती है।

सरकारी व पशुपालन विभाग की भूमिका- कृषकों को सूखी अवधि के महत्व को बताने के लिए ग्राम स्तर पर प्रशिक्षण, कार्यशालाएं व पशु स्वास्थ्य शिविरों का आयोजन किया जाना चाहिए। सरकारी योजनाओं के तहत मिनरल मिक्स, विटामिन सप्लीमेंट्स और ड्राई काउ थेरेपी को सब्सिडी पर उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

निष्कर्ष- सूखी अवधि का वैज्ञानिक प्रबंधन न केवल पशु के स्वास्थ्य और दूध उत्पादन को बढ़ाता है, बल्कि किसान की आर्थिक स्थिति को भी सुदृढ़ करता है। इस अवधि को नजर अंदाज करना, बियात के बादहो ने वाले भारी नुकसान का कारण बन सकता है। इसलिए हर किसान को चाहिए कि वह सूखी अवधि में पशु को आराम दे, पोषण व देखरेख के सभी उपाय अपनाए और इस अवधि को दुग्ध उत्पादन में निवेश की तरह समझे।

अक्षिता एग्रो

राघवेन्द्र सिंह
8959728253
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता
हमारे यहां सभी प्रकार के बीज एवं कीटनाशक दवाएं एवं खरपतवार नाशक दवाएं और अधिक उपज की दवाएं उचित दामों पर मिलती हैं
पता : अरैया रोड, आंतरी, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
01/205-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

तेज़ वृद्धि, बेहतर आय का नया साधन 'किसानों हेतु बांस की टिशू कल्चर तकनीक'

✍ डॉ. सुमन रावटे (वैज्ञानिक)

✍ डॉ. ज़ेनू झा (समन्वयक), कृषि-औद्योगिक जैव प्रौद्योगिकी में उत्कृष्टता केंद्र (सीओई-एआईबी) इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

बांस को "ग्रीन गोल्ड" कहा जाता है क्योंकि यह पर्यावरण संरक्षण और ग्रामीण अर्थव्यवस्था दोनों में अहम योगदान देता है। पारंपरिक तरीकों से बांस की वृद्धि धीमी और असमान होती है, जिससे उद्योगों की बढ़ती मांग पूरी नहीं हो पाती। ऐसे में टिशू कल्चर तकनीक ने बांस उत्पादन को नई दिशा दी है। यह तकनीक तेज़, रोगमुक्त और एकसमान पौध उत्पादन सुनिश्चित करती है, जिससे पर्यावरण और व्यापार दोनों को लाभ मिलता है।

पारंपरिक वृद्धि की सीमाएँ

पारंपरिक विधियों से बांस की खेती में कई चुनौतियाँ आती हैं। प्राकृतिक रूप से बांस के पौधे परिपक्व होने में 3ङ्ग4 वर्ष लगते हैं और उनकी ऊँचाई व मोटाई में असमानता रहती है। रोग और कीटों के कारण पौधों की संख्या घट जाती है, जिससे उद्योगों को पर्याप्त कच्चा माल नहीं मिल पाता। इसके अलावा, पारंपरिक प्रसार विधियों से एक बार में सीमित संख्या में पौधे तैयार होते हैं, जो बढ़ती औद्योगिक मांग को पूरा करने में सक्षम नहीं होते।

टिशू कल्चर से तेज़ और एकसमान वृद्धि

टिशू कल्चर तकनीक प्रयोगशाला में पौधों को रोगमुक्त और नियंत्रित परिस्थितियों में तैयार करती है। इससे कम समय में हजारों पौधे उत्पन्न किए जा सकते हैं। इन पौधों की ऊँचाई, मोटाई और गुणवत्ता एकसमान रहती है, जिससे उद्योगों को स्थिर और भरोसेमंद आपूर्ति मिलती है। साथ ही, यह तकनीक स्थानीय जलवायु परिस्थितियों के अनुसार पौधों को अनुकूलित करने में भी सक्षम है। परिणामस्वरूप, किसानों को बेहतर उत्पादन और उद्योगों को सतत कच्चा माल मिलता है।

उद्योगों में बांस का उपयोग

बांस का उपयोग अनेक उद्योगों में होता है। फर्नीचर उद्योग में बांस से आधुनिक डिज़ाइन वाले उत्पाद जैसे कुर्सियाँ, टेबल और सजावटी वस्तुएँ बनाई जाती हैं। कागज़ उद्योग में बांस का रेशा उच्च गुणवत्ता वाले कागज़ निर्माण में सहायक है। निर्माण क्षेत्र में बांस का प्रयोग घरों, पुलों और सजावटी संरचनाओं में किया जाता है। इसके अतिरिक्त, बांस पर्यावरणीय दृष्टि से भी लाभकारी है क्योंकि यह कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर वायु को शुद्ध करता है।

किसानों के लिए लाभ

किसानों के लिए बांस की टिशू कल्चर तकनीक आय का नया साधन है। पारंपरिक खेती की तुलना में यह तकनीक कम समय में अधिक उत्पादन देती है, जिससे किसान जल्दी लाभ कमा सकते हैं। उद्योगों से सीधे अनुबंध करने का अवसर मिलता है, जिससे उनकी आय स्थिर रहती है और उन्हें बेहतर मूल्य प्राप्त होता है। बांस आधारित उत्पादों की निर्यात क्षमता भी है, जिससे किसानों को अंतरराष्ट्रीय बाज़ार तक पहुँचने का मौका मिल सकता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बांस की खेती पर्यावरण के लिए भी लाभकारी है। यह मिट्टी को बाँधकर कटाव रोकता है और कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर वायु को शुद्ध करता है। किसान यदि बांस की टिशू कल्चर तकनीक अपनाते हैं, तो वे न केवल अपनी आय बढ़ाएँगे बल्कि पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान देंगे। इस तरह यह तकनीक किसानों को आर्थिक लाभ और सामाजिक सम्मान दोनों दिला सकती है।

निष्कर्ष

बांस की टिशू कल्चर तकनीक पर्यावरण और व्यापार दोनों के लिए वरदान है। यह तकनीक तेज़, रोगमुक्त और एकसमान पौध उत्पादन सुनिश्चित करती है, जिससे उद्योगों को स्थिर कच्चा माल मिलता है और किसानों को बेहतर आय के अवसर प्राप्त होते हैं। यदि इस तकनीक को व्यापक स्तर पर अपनाया जाए, तो बांस भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था और पर्यावरण संरक्षण दोनों में क्रांतिकारी योगदान दे सकता है।

01/2025-26

भविष्य की खाद्य प्रणालियां एवं खाद्य परिवर्तन में प्रसार सेवाओं की भूमिका

शाडिण्जय सिंह, सुचिस्मिता साहू
संदीप चौहान शोध छात्र,कृषि प्रसार शिक्षा विभाग आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या-224229 (उ.प्र.)

स्नेहा सिंह सहायक प्राध्यापक, कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, राष्ट्रीय किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शामली

प्रस्तावना-वर्तमान समय में विश्व की खाद्य प्रणाली अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है. बढ़ती जनसंख्या, जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन, कुपोषण तथा खाद्य असमानता जैसी समस्याएँ मानव जीवन और कृषि क्षेत्र को प्रभावित कर रही हैं. संयुक्त राष्ट्र के अनुसार आने वाले वर्षों में विश्व की जनसंख्या लगभग 10 अरब तक पहुँच सकती है, जिसके कारण खाद्य मांग में अत्यधिक वृद्धि होगी. ऐसी स्थिति में केवल अधिक उत्पादन करना ही पर्याप्त नहीं होगा, बल्कि ऐसी खाद्य प्रणाली विकसित करना आवश्यक होगा जो टिकाऊ, पोषण-संवेदनशील, पर्यावरण अनुकूल और सभी वर्गों के लिए सुलभ हो. इसी व्यवस्था को "भविष्य की खाद्य प्रणाली" कहा जाता है.

भविष्य की खाद्य प्रणाली का उद्देश्य केवल भोजन उपलब्ध कराना नहीं, बल्कि मानव स्वास्थ्य, पर्यावरण संरक्षण, किसानों की आय और सामाजिक समानता को भी सुनिश्चित करना है. खाद्य परिवर्तन इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत खाद्य उत्पादन, प्रसंस्करण, भंडारण, वितरण और उपभोग की पूरी प्रणाली में सुधार किया जाता है. इस परिवर्तन को सफल बनाने में कृषि प्रसार सेवाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है. प्रसार सेवाएँ वैज्ञानिक अनुसंधान और किसानों के बीच एक सेतु का कार्य करती हैं. ये किसानों तक नई तकनीक, आधुनिक कृषि पद्धतियाँ और आवश्यक जानकारी पहुँचाकर कृषि विकास तथा खाद्य सुरक्षा में योगदान देती हैं.

भविष्य की खाद्य प्रणालिया-भविष्य की खाद्य प्रणाली ऐसी प्रणाली है जिसमें खाद्य उत्पादन और उपभोग इस प्रकार किया जाए कि वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताएँ पूरी हों तथा भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी संसाधन सुरक्षित रहें. यह प्रणाली कृषि, पर्यावरण, पोषण और अर्थव्यवस्था के बीच संतुलन स्थापित करने पर आधारित होती है.

भविष्य की खाद्य प्रणालियों की विशेषताएँ

1. **टिकाऊ कृषि प्रणाली**-भविष्य की खाद्य प्रणाली का प्रमुख आधार टिकाऊ कृषि है. इसमें भूमि, जल, वनस्पति और जैव विविधता का संरक्षण करते हुए कृषि उत्पादन किया जाता है. रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग को कम करके जैविक एवं प्राकृतिक खेती को बढ़ावा दिया जाता है.

2. **पोषण आधारित कृषि**- वर्तमान में कई देशों में भोजन की उपलब्धता होने के बावजूद कुपोषण की समस्या बनी हुई है. इसलिए भविष्य की खाद्य प्रणाली में केवल अनाज उत्पादन पर नहीं, बल्कि पोषणयुक्त फसलों जैसे दालें, फल, सब्जियाँ और मोटे अनाज के उत्पादन पर भी विशेष ध्यान दिया जाएगा.

3. **जलवायु-स्मार्ट कृषि**- जलवायु परिवर्तन के कारण सूखा, बाढ़ और तापमान वृद्धि जैसी समस्याएँ बढ़ रही हैं. भविष्य की खाद्य प्रणाली में ऐसी कृषि तकनीकों को अपनाया जाएगा जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम कर सकें. उदाहरण के लिए कम पानी वाली फसलें, सूखा सहनशील बीज और जल संरक्षण तकनीकें.

4. **डिजिटल और स्मार्ट कृषि**- तकनीकी विकास के साथ कृषि क्षेत्र में भी डिजिटल तकनीकों का उपयोग बढ़ रहा है. भविष्य की खाद्य प्रणाली में ड्रोन, सेंसर, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), मोबाइल ऐप और इंटरनेट आधारित सेवाओं का उपयोग अधिक होगा. इससे उत्पादन क्षमता बढ़ेगी तथा किसानों को सही समय पर जानकारी प्राप्त होगी.

5. **खाद्य सुरक्षा और गुणवत्ता**-भविष्य में लोगों को सुरक्षित और गुणवत्तापूर्ण भोजन उपलब्ध कराना अत्यंत आवश्यक होगा. खाद्य पदार्थों में रासायनिक अवशेषों को कम करने तथा स्वच्छ उत्पादन प्रणाली को बढ़ावा दिया जाएगा.

6. **स्थानीय खाद्य प्रणाली**-स्थानीय स्तर पर खाद्य उत्पादन और वितरण को बढ़ावा देने से परिवहन लागत कम होगी और किसानों को बेहतर बाजार उपलब्ध होगा. इससे पर्यावरण प्रदूषण भी कम होगा.

खाद्य परिवर्तन -खाद्य परिवर्तन का अर्थ है खाद्य प्रणाली में व्यापक सुधार लाना ताकि उत्पादन से लेकर उपभोग तक की पूरी प्रक्रिया अधिक प्रभावी, टिकाऊ और पोषण-संवेदनशील बन सके.

खाद्य परिवर्तन की आवश्यकता

1. **बढ़ती जनसंख्या**-विश्व की बढ़ती जनसंख्या के कारण खाद्य मांग लगातार बढ़ रही है. यदि वर्तमान कृषि प्रणाली में सुधार नहीं किया गया तो भविष्य में खाद्य संकट उत्पन्न हो सकता है.

2. **कुपोषण और स्वास्थ्य समस्याएँ**-आज भी विश्व की बड़ी आबादी पौष्टिक भोजन से वंचित है. दूसरी ओर जंक फूड और असंतुलित भोजन के कारण मोटापा और अन्य बीमारियाँ बढ़ रही हैं.

3. **पर्यावरण संरक्षण**-रासायनिक कृषि के कारण मिट्टी की उर्वरता कम हो रही है तथा जल और वायु प्रदूषण बढ़ रहा है. इसलिए पर्यावरण अनुकूल खाद्य प्रणाली की आवश्यकता है.

4. **किसानों की आय में वृद्धि**-खाद्य परिवर्तन के माध्यम से किसानों को आधुनिक तकनीक, बेहतर बाजार और मूल्य संवर्धन की सुविधा देकर उनकी आय बढ़ाई जा सकती है.

खाद्य परिवर्तन में कृषि प्रसार सेवाओं की भूमिका- कृषि प्रसार सेवाएँ कृषि विकास की रीढ़ मानी जाती हैं. इनका मुख्य उद्देश्य किसानों तक वैज्ञानिक ज्ञान और आधुनिक तकनीकों को पहुँचाना है. भविष्य की खाद्य प्रणाली को सफल बनाने में प्रसार सेवाएँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं.

1. **नई तकनीकों का प्रसार**-प्रसार कार्यकर्ता किसानों को उन्नत बीज, आधुनिक कृषि यंत्र, जैविक खेती, ड्रिप सिंचाई और आधुनिक उत्पादन तकनीकों की जानकारी प्रदान करते हैं. इससे कृषि उत्पादन और गुणवत्ता दोनों में सुधार होता है.

2. **जलवायु-स्मार्ट कृषि को बढ़ावा**-प्रसार सेवाएँ किसानों को जल संरक्षण, फसल विविधीकरण और मौसम आधारित कृषि पद्धतियों के बारे में प्रशिक्षण देती हैं. इससे किसान जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का सामना बेहतर ढंग से कर पाते हैं.

3. **पोषण संवेदनशील कृषि का प्रचार**- प्रसार सेवाएँ किसानों को केवल अनाज उत्पादन तक सीमित न रहकर फल, सब्जियाँ, दालें और पोषण वाटिका अपनाने के लिए प्रेरित करती हैं. इससे ग्रामीण परिवारों के पोषण स्तर में सुधार होता है.

4. **जैविक एवं प्राकृतिक खेती को प्रोत्साहन**- आज के समय में जैविक उत्पादों की मांग तेजी से बढ़ रही है. प्रसार सेवाएँ किसानों को जैविक खाद, वर्मी कम्पोस्ट तथा प्राकृतिक कीटनाशकों के उपयोग के बारे में प्रशिक्षण देती हैं.

5. **डिजिटल कृषि का विकास**-डिजिटल तकनीकों ने कृषि प्रसार को अधिक प्रभावी बना दिया है. मोबाइल फोन, व्हाट्सएप, किसान ऐप, ऑनलाइन प्रशिक्षण और सोशल मीडिया के माध्यम से किसानों तक शीघ्र जानकारी पहुँचाई जाती है.

6. **किसानों की क्षमता निर्माण**-प्रसार सेवाएँ प्रशिक्षण कार्यक्रम, किसान मेले, प्रदर्शन और कार्यशालाओं के माध्यम से किसानों के ज्ञान और कौशल का विकास करती हैं.

7. **बाजार और विपणन संबंधी जानकारी**-कई बार किसानों को उचित बाजार और सही मूल्य की जानकारी नहीं मिल पाती. प्रसार सेवाएँ किसानों को बाजार मूल्य, भंडारण, प्रसंस्करण और विपणन की जानकारी देकर उनकी आय बढ़ाने में सहायता करती हैं.

8. **महिला एवं युवा सशक्तिकरण**-ग्रामीण महिलाओं और युवाओं को कृषि उद्यमिता, मशरूम उत्पादन, मधुमक्खी पालन, डेयरी और खाद्य प्रसंस्करण जैसे कार्यों में प्रशिक्षित किया जाता है. इससे रोजगार और आय के नए अवसर उत्पन्न होते हैं.

डिजिटल प्रसार सेवाओं का महत्व-वर्तमान समय में डिजिटल तकनीक खाद्य परिवर्तन का महत्वपूर्ण माध्यम बन चुकी है. डिजिटल प्रसार सेवाएँ कम समय में अधिक किसानों तक जानकारी पहुँचाने में सक्षम हैं.

प्रमुख डिजिटल माध्यम

* किसान कॉल सेंटर, मोबाइल ऐप,ऑनलाइन प्रशिक्षण,सोशल मीडिया,ड्रोन तकनीक, ई-मार्केटिंग प्लेटफॉर्म
* इन तकनीकों से किसानों को मौसम, बाजार मूल्य और आधुनिक कृषि पद्धतियों की जानकारी तुरंत प्राप्त होती है.

भविष्य की चुनौतियाँ

हालाँकि खाद्य परिवर्तन की दिशा में अनेक प्रयास किए जा रहे हैं, फिर भी कुछ चुनौतियाँ बनी हुई हैं.

* ग्रामीण क्षेत्रों में तकनीकी ज्ञान की कमी * छोटे किसानों की आर्थिक स्थिति कमजोर होना * डिजिटल सुविधाओं का अभाव * जलवायु परिवर्तन का बढ़ता प्रभाव
* प्राकृतिक संसाधनों की कमी

इन चुनौतियों से निपटने के लिए सरकार, वैज्ञानिक संस्थानों और प्रसार सेवाओं के बीच समन्वय आवश्यक है.

निष्कर्ष-भविष्य की खाद्य प्रणालियाँ मानव स्वास्थ्य, पर्यावरण संरक्षण और कृषि विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं. खाद्य परिवर्तन के माध्यम से कृषि प्रणाली को अधिक टिकाऊ, पोषण-संवेदनशील और आधुनिक बनाया जा सकता है. इस परिवर्तन को सफल बनाने में कृषि प्रसार सेवाओं की भूमिका केंद्रीय है. प्रसार सेवाएँ किसानों तक नई तकनीक, वैज्ञानिक जानकारी और प्रशिक्षण पहुँचाकर कृषि विकास को गति प्रदान करती हैं. यदि प्रसार सेवाओं को डिजिटल तकनीक, जलवायु-स्मार्ट कृषि और पोषण आधारित दृष्टिकोण से जोड़ा जाए, तो भविष्य में खाद्य सुरक्षा, किसानों की आय और ग्रामीण विकास को मजबूत बनाया जा सकता है. इस प्रकार, भविष्य की खाद्य प्रणाली एक स्वस्थ, सुरक्षित और समृद्ध समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देगी.

गेहूँ: समस्या या समाधान? स्वास्थ्य पर प्रभाव का वैज्ञानिक विश्लेषण

प्रखर राय सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सर्वेश कुमार एमबीए (खाद्य एवं कृषि व्यवसाय प्रबंधन) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

डॉ. ललित कुमार सनोदिया

डॉ. अखिलेश कुमार सिंह

डॉ. अवनीश यादव

सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

प्रस्तावना: भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ गेहूं प्रमुख खाद्यान्न फसलों में से एक है और विशेष रूप से उत्तर भारत में यह दैनिक आहार का मुख्य आधार है। हरित क्रांति के पश्चात उच्च उत्पादक किस्मों के विकास ने देश को खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाया, किंतु इसके साथ ही आधुनिक गेहूं के स्वास्थ्य प्रभावों को लेकर नई बहस भी प्रारंभ हुई है। हाल के वर्षों में William Davis द्वारा लिखित पुस्तक Wheat Belly: Lose the Wheat, Lose the Weight, and Find Your Path Back to Health. जैसी पुस्तकों ने गेहूं के प्रति एक नई सोच को जन्म दिया है। इन विचारों के अनुसार आधुनिक गेहूं पारंपरिक गेहूं से भिन्न है और इसका नियमित सेवन मोटापा, मधुमेह, हृदय रोग तथा अन्य चयापचयी विकारों को बढ़ावा दे सकता है। इस दृष्टिकोण में यह भी बताया गया है कि गेहूं रक्त में शर्करा की मात्रा को तीव्रता से बढ़ाता है तथा शरीर में वसा संचय को बढ़ावा देता है। हालांकि, वैज्ञानिक अनुसंधानों में इस विषय पर पूर्ण सहमति नहीं है। अनेक अध्ययनों से यह संकेत मिलता है कि गेहूं के दुष्प्रभाव मुख्यतः उसके परिष्कृत रूप तथा प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों के अत्यधिक सेवन से जुड़े होते हैं। अतः आवश्यक है कि गेहूं के प्रभावों का मूल्यांकन संतुलित एवं प्रमाण-आधारित दृष्टिकोण से किया जाए।

गेहूं का पोषण महत्व- गेहूं एक महत्वपूर्ण खाद्यान्न है, जो मानव शरीर को ऊर्जा एवं आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है। इसमें लगभग 60 से 70 प्रतिशत तक कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है, जो शरीर के लिए ऊर्जा का मुख्य स्रोत है। इसके अतिरिक्त इसमें लगभग 10 से 12 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है, जिसमें मुख्य रूप से ग्लूटेन होता है। साबुत गेहूं में चोकर तथा अंकुर उपस्थित रहते हैं, जो इसे आहार रेशा, विटामिन (विशेषकर बी वर्ग) तथा खनिज जैसे लौह, जिंक एवं मैग्नीशियम से समृद्ध बनाते हैं। इसके विपरीत, परिष्कृत गेहूं (मैदा) से इन पोषक तत्वों का अधिकांश भाग हट जाता है, जिससे उसका पोषण स्तर कम हो जाता है।

गेहूं के विभिन्न रूप एवं उनका प्रभाव- गेहूं का स्वास्थ्य पर प्रभाव उसके उपयोग के रूप पर निर्भर करता है। साबुत गेहूं में उच्च मात्रा में आहार रेशा पाया जाता है, जिससे इसका पाचन धीमा होता है तथा रक्त शर्करा का स्तर संतुलित बना रहता है। यह हृदय स्वास्थ्य के लिए भी लाभकारी होता है।इसके विपरीत, परिष्कृत गेहूं में रेशा की मात्रा कम होती है तथा यह शीघ्र पच जाता है, जिससे रक्त में शर्करा की मात्रा तेजी से बढ़ती है। इस कारण मोटापा एवं मधुमेह का जोखिम बढ़ सकता है।अतः यह स्पष्ट है कि समस्या गेहूं में नहीं, बल्कि उसके अत्यधिक परिष्कृत रूप में है।

ग्लाइसेमिक प्रभाव एवं चयापचय संबंध-ग्लाइसेमिक प्रभाव यह दर्शाता है कि कोई खाद्य पदार्थ रक्त में शर्करा की मात्रा को कितनी तेजी से बढ़ाता है। परिष्कृत गेहूं से बने खाद्य पदार्थों का प्रभाव अधिक होता है, जबकि साबुत गेहूं का प्रभाव अपेक्षाकृत नियंत्रित होता है। उच्च ग्लाइसेमिक प्रभाव वाले खाद्य पदार्थों के बार-बार सेवन से रक्त शर्करा में तीव्र उतार-चढ़ाव होता है, जिससे इंसुलिन का स्राव बढ़ता है और शरीर में वसा संचय की संभावना बढ़ जाती है। यही स्थिति लंबे समय में मधुमेह तथा अन्य चयापचयी विकारों का कारण बन सकती है।

ग्लूटेन एवं स्वास्थ्य-ग्लूटेन गेहूं में पाया जाने वाला एक प्रमुख प्रोटीन है, जो आटे को लोच प्रदान करता है। सामान्य व्यक्तियों में इसका सेवन सुरक्षित एवं पाचन योग्य होता है।किन्तु कुछ विशेष स्थितियों जैसे सीलिएक रोग तथा ग्लूटेन संवेदनशीलता में यह हानिकारक सिद्ध हो सकता है। यह समस्याएँ जनसंख्या के बहुत छोटे भाग में ही पाई जाती हैं, इसलिए सामान्य व्यक्तियों के लिए इसका त्याग आवश्यक नहीं है।

प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों की भूमिका- वर्तमान समय में गेहूं से बने प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों जैसे ब्रेड, बिस्कुट, केक एवं अन्य उत्पादों का उपयोग बढ़ गया है। इन उत्पादों में सामान्यतः अधिक मात्रा में चीनी एवं वसा पाई जाती है, जबकि आहार रेशा कम होता है।इनका अत्यधिक सेवन स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का प्रमुख कारण बनता है। अतः यह कहा जा सकता है कि समस्या गेहूं में नहीं, बल्कि उसके प्रसंस्करण एवं असंतुलित सेवन में है।

मोटापा एवं गेहूं का संबंध-मोटापा एक बहु-कारक समस्या है, जो केवल किसी एक खाद्य पदार्थ पर निर्भर नहीं करता। इसके प्रमुख कारणों में अधिक ऊर्जा सेवन, शारीरिक गतिविधि की कमी तथा असंतुलित आहार शामिल हैं।वैज्ञानिक अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि साबुत अनाज का संतुलित सेवन वजन नियंत्रण में सहायक हो सकता है। अतः केवल गेहूं को मोटापे का कारण मानना उचित नहीं है।

किसानों के लिए महत्व-वर्तमान समय में उपभोक्ताओं के बीच पोषक एवं स्वास्थ्यवर्धक खाद्य पदार्थों की मांग बढ़ रही है, जिससे किसानों के लिए नए अवसर उत्पन्न हो रहे हैं। साबुत गेहूं एवं बहु-अनाज आटे की मांग में वृद्धि हो रही है।किसान यदि गुणवत्ता, पोषण एवं मूल्य संवर्धन पर ध्यान दें, तो वे अपनी आय में वृद्धि कर सकते हैं। इसके साथ ही जैविक खेती को अपनाकर भी बेहतर बाजार मूल्य प्राप्त किया जा सकता है।

चर्चा-कुछ लोकप्रिय पुस्तकों में गेहूं को स्वास्थ्य समस्याओं का मुख्य कारण बताया गया है, परंतु यह दृष्टिकोण पूर्णतः वैज्ञानिक नहीं है। गेहूं के प्रति अत्यधिक नकारात्मक दृष्टिकोण मुख्यतः आधुनिक प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों के प्रभाव को सीधे गेहूं से जोड़ता है।वास्तव में स्वास्थ्य पर प्रभाव अनेक कारकों पर निर्भर करता है, जैसे आहार की गुणवत्ता, जीवनशैली, शारीरिक गतिविधि एवं आनुवंशिकता। इसलिए इस विषय में संतुलित एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है।

निष्कर्ष- गेहूं एक महत्वपूर्ण एवं पोषक खाद्यान्न है, जो संतुलित आहार का महत्वपूर्ण भाग हो सकता है। साबुत गेहूं स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है, जबकि परिष्कृत गेहूं उत्पादों का अत्यधिक सेवन हानिकारक हो सकता है। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि समस्या गेहूं में नहीं, बल्कि उसके उपयोग के तरीके में है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

फलों एवं सब्जियों के उप-उत्पादों का उपयोग

आकांक्षा (शोध छात्रा) सेंटर ऑफ फूड टेक्नोलॉजी इंस्टीट्यूट ऑफ प्रोफेशनल स्टडीज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रयागराज (उ.प्र.)

प्रस्तावना: भारत विश्व के प्रमुख फल एवं सब्जी उत्पादक देशों में से एक है। इनके प्रसंस्करण के दौरान छिलके, बीज, गूदा, डंठल एवं अन्य अवशेष बड़ी मात्रा में उत्पन्न होते हैं, जिन्हें सामान्यतः अपशिष्ट माना जाता है। जबकि ये उप-उत्पाद आहार रेशा, विटामिन, खनिज, पेक्टिन, प्राकृतिक रंगद्रव्य, एंटीऑक्सीडेंट तथा अन्य जैव सक्रिय यौगिकों के समृद्ध स्रोत हैं। इन उप-उत्पादों का वैज्ञानिक उपयोग खाद्य अपशिष्ट को कम करने, मूल्य संवर्धित उत्पादों के निर्माण, पर्यावरण संरक्षण, किसानों की आय बढ़ाने तथा पोषण सुरक्षा को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। वर्तमान में शून्य अपशिष्ट प्रसंस्करण एवं परिपत्र अर्थव्यवस्था की अवधारणाओं के कारण फलों एवं सब्जियों के उप-उत्पादों का प्रभावी उपयोग सतत विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना जा रहा है।

फल एवं सब्जी उप-उत्पादों का स्वरूप: फल एवं सब्जियों के प्रसंस्करण के दौरान प्राप्त विभिन्न उप-उत्पाद निम्नलिखित हैं–

* फलों के छिलके (आम, केला, संतरा, सेब, अनार, कीवी आदि)
* बीज (आम, तरबूज, कद्दू, पपीता, अंगूर आदि)
* गूदा एवं पल्प अवशेष
* पत्तियाँ एवं डंठल
* बाहरी आवरण एवं छिलके (प्याज, आलू, लहसुन आदि)
* गन्ने की खोई, टमाटर की त्वचा एवं बीज, गाजर एवं चुकंदर के अवशेष

इन उप-उत्पादों में अनेक ऐसे पोषक एवं जैव सक्रिय घटक पाए जाते हैं जो स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी होते हैं।

उप-उत्पादों का पोषण महत्व

फल एवं सब्जियों के उप-उत्पाद पोषण की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध होते हैं। इनमें निम्नलिखित प्रमुख पोषक तत्व पाए जाते हैं–

* आहार रेशा = पाचन तंत्र को स्वस्थ रखने, कब्ज कम करने तथा मधुमेह एवं हृदय रोगों के जोखिम को घटाने में सहायक।

* **पॉलीफेनॉल एवं फ्लेवोनॉयड्स:** शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट जो कोशिकाओं को ऑक्सीडेटिव क्षति से बचाते हैं।

* **पेक्टिन:** जैम एवं जेली निर्माण में उपयोगी तथा कोलेस्ट्रॉल कम करने में सहायक।

* **प्राकृतिक रंगद्रव्य:** कैरोटेनॉयड्स, एंथोसायनिन, लाइकोपीन एवं क्लोरोफिल प्राकृतिक खाद्य रंग के रूप में उपयोगी।

* **विटामिन एवं खनिज:** विटामिन सी, विटामिन ई, पोटैशियम, कैल्शियम एवं मैग्नीशियम की पर्याप्त मात्रा।

* **आवश्यक तेल एवं सुगंधित यौगिक:** विशेषकर खट्टे फलों के छिलकों में पाए जाते हैं।

खाद्य उद्योग में उप-उत्पादों का उपयोग

1. **आहार रेशा युक्त खाद्य उत्पाद-** सेब, संतरा, आम एवं केले के छिलकों से प्राप्त फाइबर का उपयोग बिस्कुट, ब्रेड, केक, पास्ता, नूडल्स तथा स्नैक उत्पादों में किया जाता है। इससे उत्पादों की पोषण गुणवत्ता बढ़ती है और वे कार्यात्मक खाद्य के रूप में विकसित होते हैं।

2. **पेक्टिन का उत्पादन-** संतरा, नींबू एवं सेब के छिलकों से पेक्टिन निकाला जाता है, जिसका उपयोग जैम, जेली, मुरब्बा, कैंडी तथा डेयरी उत्पादों में गाढ़ापन प्रदान करने के लिए किया जाता है।

3. **प्राकृतिक खाद्य रंग-** चुकंदर से बेटानिन, गाजर से बीटा-कैरोटीन, टमाटर से लाइकोपीन तथा अंगूर एवं जामुन के अवशेषों से एंथोसायनिन प्राप्त किए जाते हैं। ये कृत्रिम रंगों के सुरक्षित विकल्प हैं।

4. **प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट-** अनार के छिलके, अंगूर के बीज, आम के छिलके तथा सेब के अवशेषों से पॉलीफेनॉल युक्त अर्क तैयार किए जाते हैं। इनका उपयोग खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता बनाए रखने तथा ऑक्सीकरण को कम करने के लिए किया जाता है।

5. **आवश्यक तेलों का उत्पादन-** संतरा, नींबू, मौसमी एवं किन्नू के छिलकों से आवश्यक तेल प्राप्त किए जाते हैं। इनका उपयोग पेय पदार्थों, बेकरी उत्पादों, मिठाइयों, सौंदर्य प्रसाधनों तथा औषधीय उत्पादों में किया जाता है।

उप-उत्पादों से मूल्य संवर्धित उत्पाद-

आज खाद्य उद्योग उप-उत्पादों को विभिन्न मूल्य संवर्धित उत्पादों में परिवर्तित कर रहा है–

* फलों के छिलकों का पाउडर * आहार रेशा अनुपूरक * प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट अर्क * फलों के बीजों से खाद्य तेल * स्टार्च आधारित जैव अपघटनीय पैकेजिंग

विभिन्न फलों एवं सब्जियों के उप-उत्पादों का उपयोग

आम- आम के छिलकों में कैरोटेनॉयड्स एवं पॉलीफेनॉल प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इनके पाउडर का उपयोग बेकरी उत्पादों एवं स्वास्थ्यवर्धक खाद्य पदार्थों में किया जाता है। आम की गुठली से स्टार्च एवं खाद्य तेल प्राप्त किया जाता है।

केला- केले के छिलकों में पोटैशियम, फाइबर एवं एंटीऑक्सीडेंट पाए जाते हैं। इनका उपयोग पशु आहार, बायोफर्टिलाइज़र, बिस्कुट एवं फाइबर युक्त खाद्य पदार्थों में किया जाता है।

संतरा एवं नींबू- इनके छिलकों से पेक्टिन, आवश्यक तेल एवं फ्लेवोनॉयड्स प्राप्त किए जाते हैं। ये खाद्य उद्योग के साथ-साथ औषधि एवं कॉस्मेटिक उद्योग में भी उपयोगी हैं।

टमाटर- टमाटर के छिलके एवं बीज लाइकोपीन तथा प्राकृतिक तेल के अच्छे स्रोत हैं। इनका उपयोग स्वास्थ्य अनुपूरकों एवं प्राकृतिक रंगों के उत्पादन में किया जाता है।

आलू- आलू के छिलकों में स्टार्च, फाइबर एवं फेनोलिक यौगिक पाए जाते हैं। इनसे स्टार्च, पशु आहार, जैव ईंधन तथा बायोडिग्रेडेबल पैकेजिंग सामग्री विकसित की जा सकती है।

अनार- अनार के छिलकों में टैनिन एवं पॉलीफेनॉल की उच्च मात्रा होती है। इनका उपयोग प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट, खाद्य परिरक्षक तथा औषधीय उत्पादों के निर्माण में किया जाता है।

अंगूर- अंगूर के बीजों से प्राप्त तेल असंतृप्त वसीय अम्लों एवं विटामिन ई से भरपूर होता है। इसका उपयोग खाद्य, औषधीय एवं सौंदर्य प्रसाधन उद्योग में किया जाता है।

औषधीय एवं स्वास्थ्य संबंधी उपयोग

फल एवं सब्जी उप-उत्पादों से प्राप्त जैव सक्रिय यौगिक अनेक स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं—

* मुक्त कणों से सुरक्षा * हृदय रोगों का जोखिम कम करना * मधुमेह नियंत्रण में सहायता * कैंसर-रोधी गुण * रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि * पाचन स्वास्थ्य में सुधार * सूजन कम करने में सहायक

इसी कारण इनका उपयोग न्यूट्रास्यूटिकल्स , कार्यात्मक खाद्य तथा आहार अनुपूरकों के निर्माण में तेजी से बढ़ रहा है।

पर्यावरण संरक्षण में भूमिका- यदि फलों एवं सब्जियों के अपशिष्ट का उचित प्रबंधन न किया जाए, तो यह पर्यावरण प्रदूषण, दुर्गंध तथा ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन का कारण बनता है। उप-उत्पादों का पुनः उपयोग निम्नलिखित लाभ प्रदान करता है– * खाद्य अपशिष्ट में कमी * लैंडफिल पर दबाव कम होना * ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन घटाना * जैविक खाद एवं बायोगैस का उत्पादन * प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण * सतत कृषि एवं प्रसंस्करण को बढ़ावा

किसानों एवं खाद्य उद्योग के लिए लाभ

उप-उत्पादों का वैज्ञानिक उपयोग किसानों एवं उद्योगों दोनों के लिए लाभदायक है– * अतिरिक्त आय के नए स्रोत * मूल्य संवर्धित उत्पादों का विकास * उत्पादन लागत में कमी * रोजगार के अवसरों में वृद्धि * निर्यात की संभावनाओं का विस्तार * ग्रामीण उद्यमिता को प्रोत्साहन * लघु एवं मध्यम खाद्य उद्योगों का विकास

उभरती प्रौद्योगिकियां-आधुनिक खाद्य विज्ञान में उप-उत्पादों के उपयोग हेतु अनेक नवीन तकनीकों का विकास हुआ है–* एंजाइम आधारित निष्कर्षण * अल्ट्रासोनिक निष्कर्षण * माइक्रोवेव आधारित निष्कर्षण * सुपरक्रिटिकल फ्लूइड निष्कर्षण * माइक्रोएनकैप्सुलेशन * फ्रीज़ ड्राइंग * स्प्रे ड्राइंग * नैनो प्रौद्योगिकी आधारित जैव सक्रिय यौगिकों का संरक्षण

चुनौतियां-उप-उत्पादों के व्यापक उपयोग में कुछ प्रमुख चुनौतियाँ भी हैं–

* मौसमी उपलब्धता एवं गुणवत्ता में भिन्नता * संग्रहण एवं परिवहन की समस्याएँ * प्रसंस्करण हेतु आधुनिक तकनीकों की आवश्यकता * छोटे उद्योगों में निवेश की कमी

निष्कर्ष-फलों एवं सब्जियों के उप-उत्पाद पोषण, स्वास्थ्य, खाद्य उद्योग और पर्यावरण के लिए अत्यंत उपयोगी संसाधन हैं। इनका वैज्ञानिक उपयोग खाद्य अपशिष्ट को कम करने, मूल्य संवर्धित उत्पादों के निर्माण, किसानों की आय बढ़ाने तथा पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आधुनिक प्रसंस्करण तकनीकों और सतत विकास की अवधारणा के साथ इन उप-उत्पादों का प्रभावी उपयोग पोषण सुरक्षा, आर्थिक विकास एवं हरित अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने में सहायक सिद्ध होगा।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

प्रीसिर्जन कृषि और आधुनिक तकनीकों द्वारा सतत् कृषि विकास की नई दिशा

सिद्धार्थ मिश्रा, अनंत शर्मा (शोध छात्र सस्य विज्ञान संकाय)

राहुल कुमार कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या-224229 (उ.प्र.)

रितु यादव सस्य विज्ञान संकाय, सैम हिगिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी और विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रस्तावना: वर्तमान समय में कृषि क्षेत्र अनेक चुनौतियों का सामना कर रहा है। बढ़ती जनसंख्या, जलवायु परिवर्तन, मृदा उर्वरता में कमी, जल संकट तथा उत्पादन लागत में वृद्धि जैसी समस्याएँ कृषि को प्रभावित कर रही हैं। दूसरी ओर, खाद्यान्न की मांग निरंतर बढ़ रही है। ऐसी स्थिति में केवल पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ पर्याप्त नहीं रह गई हैं। किसानों को ऐसी तकनीकों की आवश्यकता है जो कम संसाधनों में अधिक उत्पादन प्रदान करें तथा पर्यावरण संरक्षण भी सुनिश्चित करें। इसी आवश्यकता को पूरा करने के लिए "प्रिसीजन फार्मिंग" अर्थात "सटीक कृषि" की अवधारणा विकसित हुई है।

प्रिसीजन फार्मिंग की अवधारणा- प्रिसीजन फार्मिंग वह कृषि प्रणाली है जिसमें खेत के प्रत्येक भाग की स्थिति का विश्लेषण करके आवश्यकतानुसार इनपुट प्रदान किए जाते हैं। इसमें "सही मात्रा, सही समय, सही स्थान और सही विधि" का सिद्धांत अपनाया जाता है। उदाहरण के लिए यदि खेत के किसी भाग में नाइट्रोजन की कमी है, तो केवल उसी क्षेत्र में उर्वरक दिया जाता है। इससे उर्वरक की बचत होती है तथा पर्यावरण प्रदूषण भी कम होता है।

प्रिसीजन फार्मिंग के प्रमुख उद्देश्य-1. कृषि उत्पादन में वृद्धि करना। 2. जल एवं उर्वरकों का कुशल उपयोग। 3. उत्पादन लागत में कमी लाना। 4. मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण। 5. पर्यावरण प्रदूषण को कम करना। 6. किसानों की आय में वृद्धि। 7. टिकाऊ कृषि विकास को बढ़ावा देना।

प्रिसीजन फार्मिंग में उपयोग होने वाली आधुनिक तकनीकें 1. ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम- ग्लोबल पोजिशनिंग तकनीक खेत की सटीक स्थिति, क्षेत्रफल तथा भौगोलिक जानकारी प्रदान करती है। इसके माध्यम से किसान खेत का डिजिटल नक्शा तैयार कर सकते हैं तथा उर्वरक, बीज एवं सिंचाई की मात्रा का वैज्ञानिक निर्धारण कर सकते हैं। आधुनिक कृषि में जीपीएस आधारित प्रिसिजन फार्मिंग से 10-20 प्रतिशत तक उर्वरक बचत तथा 15-25% तक उत्पादन वृद्धि देखी गई है। यह तकनीक ट्रैक्टर एवं कृषि मशीनों के संचालन को भी अधिक सटीक बनाती है। जीपीएस द्वारा खेत की सही मैपिंग संभव होती है, जिससे श्रम एवं समय की बचत होती है तथा इनपुट प्रबंधन अधिक प्रभावी एवं सुविधाजनक बनता है।

2. भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS)- भौगोलिक सूचना प्रणाली GIS ऐसी आधुनिक तकनीक है, जो खेत की मिट्टी, जल, फसल तथा जलवायु से संबंधित आंकड़ों का विश्लेषण करती है। इसके माध्यम से किसान विभिन्न क्षेत्रों की उत्पादकता, मृदा स्वास्थ्य तथा संसाधनों की स्थिति का अध्ययन कर सकते हैं। वैज्ञानिक दृष्टि से GIS तकनीक कृषि नियोजन एवं संसाधन प्रबंधन में अत्यंत उपयोगी मानी जाती है। इससे मृदा उर्वरता का विश्लेषण, रोग एवं कीट प्रबंधन तथा सिंचाई योजना तैयार करने में सहायता मिलती है। GIS आधारित प्रबंधन से जल उपयोग दक्षता बढ़ती है तथा उर्वरकों एवं अन्य कृषि निवेशों का वैज्ञानिक उपयोग संभव होता है।

3. ड्रोन तकनीक-ड्रोन तकनीक आधुनिक कृषि की एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक तकनीक बन चुकी है। इसके माध्यम से किसान कम समय में बड़े क्षेत्र की निगरानी कर सकते हैं। ड्रोन द्वारा फसलों के स्वास्थ्य की जांच, रोग एवं पोषक तत्वों की कमी की पहचान तथा कीटनाशकों और उर्वरकों का सटीक छिड़काव किया जाता है। इससे समय, श्रम एवं लागत की बचत होती है तथा उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है। ड्रोन तकनीक पर्यावरण संरक्षण में भी सहायक है क्योंकि इससे रसायनों का संतुलित उपयोग संभव होता है। भारत में कई राज्यों में ड्रोन आधारित कृषि सेवाएँ तेजी से लोकप्रिय हो रही हैं और किसान आधुनिक खेती की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

4. सेंसर तकनीक - सेंसर तकनीक आधुनिक कृषि में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रही है। मिट्टी की नमी, तापमान तथा पोषक तत्वों की सही जानकारी प्राप्त करने के लिए विभिन्न प्रकार के सेंसरों का उपयोग किया जाता है। प्रमुख सेंसरों में मिट्टी नमी सेंसर, तापमान सेंसर तथा चभ् सेंसर शामिल हैं। ये सेंसर खेत की वास्तविक स्थिति का निरंतर आंकलन करते हैं और किसानों को आवश्यक जानकारी प्रदान करते हैं। प्राप्त आंकड़ों के आधार पर सिंचाई एवं उर्वरक प्रबंधन वैज्ञानिक ढंग से किया जाता है। इससे पानी और उर्वरकों की बचत होती है, लागत कम होती है तथा फसलों की उत्पादकता और गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

5. इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT)-आधारित उपकरण आधुनिक कृषि को स्मार्ट बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। ये उपकरण इंटरनेट से जुड़े रहते हैं और वास्तविक समय में जानकारी प्रदान करते हैं। इनका उपयोग स्वचालित सिंचाई प्रणाली, मौसम की निगरानी तथा फसल स्वास्थ्य प्रबंधन में किया जाता है। उदाहरण के रूप में, स्मार्ट सिंचाई प्रणाली मिट्टी की नमी के अनुसार स्वतः पानी प्रदान करती है, जिससे जल की बचत होती है। IoT तकनीक किसानों को सही समय पर निर्णय लेने में सहायता करती है तथा उत्पादन और संसाधन प्रबंधन को अधिक प्रभावी बनाती

6. कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI)- कृत्रिम बुद्धिमत्ता कृषि क्षेत्र में डेटा का विश्लेषण करके सही निर्णय लेने में सहायता करती है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता के माध्यम से फसल रोग पहचान, मौसम पूर्वानुमान, उपज अनुमान तथा खरपतवार पहचान जैसे कार्य अधिक सटीकता से किए जा रहे हैं।

7. रिमोट सेंसिंग तकनीक - उपग्रह एवं ड्रोन से प्राप्त चित्रों के माध्यम से खेत की स्थिति का अध्ययन किया जाता है।

उपयोग * फसल वृद्धि का मूल्यांकन * सूखा एवं बाढ़ की निगरानी * रोगग्रस्त क्षेत्रों की पहचान

टिकाऊ कृषि विकास में प्रिसीजन फार्मिंग की भूमिका

1. जल संरक्षण - कृषि क्षेत्र में जल की अत्यधिक खपत होती है। प्रिसीजन फार्मिंग के माध्यम से ड्रिप एवं स्प्रिंकलर सिंचाई प्रणाली अपनाकर जल की बचत की जा सकती है।

परिणाम- * 30-50 प्रतिशत तक जल की बचत * अधिक सिंचाई से होने वाले नुकसान में कमी * भूजल संरक्षण

2. उर्वरकों का संतुलित उपयोग- प्रिसिजन फार्मिंग में आवश्यकता के अनुसार ही उर्वरकों का उपयोग किया जाता है, जिससे खेत में रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक प्रयोग नहीं होता। इससे मृदा की गुणवत्ता बनी रहती है और उसका स्वास्थ्य सुरक्षित रहता है। इस पद्धति से उर्वरक लागत में कमी आती है तथा नाइट्रेट प्रदूषण भी घटता है। वैज्ञानिक पोषक प्रबंधन के कारण कृषि अधिक टिकाऊ, संतुलित और पर्यावरण-अनुकूल बनती है।

3. कीटनाशकों का नियंत्रित उपयोग-ड्रोन एवं सेंसर तकनीक के माध्यम से केवल प्रभावित क्षेत्रों में ही कीटनाशकों का छिड़काव किया जाता है। इससे रसायनों का अनावश्यक उपयोग कम होता है और पर्यावरण प्रदूषण घटता है।

4. मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन - मृदा परीक्षण एवं डिजिटल मैपिंग द्वारा खेत की पोषक स्थिति का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाता है। इससे संतुलित पोषण प्रबंधन संभव होता है और फसलों को आवश्यक तत्व उचित मात्रा में मिलते हैं।

5. जलवायु परिवर्तन से अनुकूलन- आधुनिक तकनीकें किसानों को मौसम संबंधी महत्वपूर्ण जानकारी समय पर प्रदान करती हैं, जिससे वे कृषि कार्यों की सही योजना बना सकते हैं। वर्षा पूर्वानुमान, तापमान चेतावनी तथा सूखा प्रबंधन जैसी सुविधाएँ किसानों को प्राकृतिक जोखिमों से बचाने में सहायक होती हैं।

भारत में प्रिसीजन फार्मिंग की स्थिति-भारत में प्रिसीजन फार्मिंग का उपयोग धीरे-धीरे बढ़ रहा है। विशेष रूप से पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा तमिलनाडु जैसे राज्यों में आधुनिक कृषि तकनीकों का उपयोग किया जा रहा है। भारत सरकार की प्रमुख आधुनिक कृषि योजनाएँ-

1- डिजिटल कृषि मिशन - इस योजना का उद्देश्य कृषि क्षेत्र में डिजिटल तकनीकों का उपयोग बढ़ाना है। इसके अंतर्गत किसानों को डिजिटल डेटा, स्मार्ट उपकरण, कृषि एप तथा ऑनलाइन सेवाओं से जोड़ा जाता है। इससे खेती अधिक वैज्ञानिक और आधुनिक बनती है।

2- प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना - इस योजना का मुख्य उद्देश्य "हर खेत को पानी" उपलब्ध कराना तथा जल संरक्षण को बढ़ावा देना है। सूक्ष्म सिंचाई तकनीकों जैसे ड्रिप एवं स्प्रिंकलर प्रणाली को प्रोत्साहित किया जाता है।

3. मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना - इस योजना के अंतर्गत किसानों की मिट्टी का परीक्षण कर उसकी पोषक स्थिति की जानकारी दी जाती है। इससे संतुलित उर्वरक उपयोग और मृदा स्वास्थ्य संरक्षण संभव होता है।

4- किसान ड्रोन योजना - इस योजना के माध्यम से कृषि में ड्रोन तकनीक को बढ़ावा दिया जा रहा है। ड्रोन द्वारा फसल निगरानी, उर्वरक एवं कीटनाशक छिड़काव तथा भूमि सर्वेक्षण जैसे कार्य किए जाते हैं।

5- स्मार्ट कृषि परियोजनाएँ-इन परियोजनाओं का उद्देश्य प्व्ज् ।प् सेंसर एवं आधुनिक मशीनों के माध्यम से कृषि को स्मार्ट बनाना है। इससे उत्पादन क्षमता, संसाधन प्रबंधन तथा किसानों की आय में वृद्धि होती है।

प्रिसीजन फार्मिंग के आर्थिक लाभ

1. उत्पादन लागत में कमी - उर्वरक, जल एवं कीटनाशकों का नियंत्रित उपयोग लागत घटाता है।

2. उत्पादन में वृद्धि-सटीक प्रबंधन से फसल की वृद्धि बेहतर होती है।

3. किसानों की आय में वृद्धि - अधिक उत्पादन और कम लागत से लाभ बढ़ता है।

4. संसाधनों की बचत - जल, ऊर्जा और श्रम का कुशल उपयोग संभव होता है।

प्रिसीजन फार्मिंग की चुनौतियां-हालाँकि प्रिसीजन फार्मिंग के अनेक लाभ हैं, फिर भी इसके व्यापक प्रसार में कई बाधाएँ हैं।

1. उच्च प्रारंभिक लागत - ड्रोन, सेंसर और एआई उपकरण महंगे होते हैं।

2. तकनीकी ज्ञान की कमी - कई किसानों को आधुनिक तकनीकों की जानकारी नहीं है।

3. छोटे खेतों की समस्या - भारत में अधिकांश किसानों के पास छोटे एवं बिखरे खेत हैं।

4. इंटरनेट एवं बिजली की कमी - ग्रामीण क्षेत्रों में तकनीकी आधारभूत संरचना सीमित है।

5. प्रशिक्षण की आवश्यकता - तकनीकों के प्रभावी उपयोग हेतु किसानों को प्रशिक्षण आवश्यक है।

नीरज पाली पीएचडी स्कॉलर, उद्यानिकी विभाग (सब्जी विज्ञान) शुआट्स, नैनी, प्रयागराज-211007

हेमंत सिंह परमार टीचिंग असिस्टेंट, विज्ञान और अनुसंधान विभाग, IPS एकेडमी, इंदौर 452012

फल एवं सब्जी फसलों का कटाई उपरांत प्रबंधन: गुणवत्ता संरक्षण, मूल्य संवर्धन एवं किसानों की आय वृद्धि की प्रभावी कुंजी

भूमिका-भारत विश्व के प्रमुख बागवानी उत्पादक देशों में से एक है। देश में प्रतिवर्ष 350 मिलियन टन से अधिक फल एवं सब्जियों का उत्पादन होता है, जो पोषण सुरक्षा, रोजगार सृजन तथा कृषि अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। फल एवं सब्जियाँ विटामिन, खनिज, एंटीऑक्सीडेंट तथा आहार रेशों का समृद्ध स्रोत हैं, इसलिए संतुलित आहार में इनका विशेष महत्व है। यद्यपि भारत उत्पादन के क्षेत्र में अग्रणी है, फिर भी कटाई के बाद उचित प्रबंधन के अभाव में अनुमानतः 15-30 प्रतिशत तक उपज नष्ट हो जाती है। यह हानि केवल किसानों की आय को प्रभावित नहीं करती, बल्कि खाद्य सुरक्षा, पोषण उपलब्धता और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालती है। ऐसी परिस्थिति में कटाई उपरांत प्रबंधन (Post-Harvest Management) आधुनिक कृषि का एक महत्वपूर्ण घटक बन गया है। यह केवल उपज को सुरक्षित रखने की तकनीक नहीं, बल्कि गुणवत्ता संरक्षण, मूल्य संवर्धन, बाजार प्रतिस्पर्धा तथा किसानों की आय बढ़ाने का प्रभावी माध्यम है।

कटाई उपरांत प्रबंधन का महत्व-कटाई उपरांत प्रबंधन से आशय उन सभी वैज्ञानिक प्रक्रियाओं से है, जो फसल की कटाई के बाद उपभोक्ता तक पहुँचने तक अपनाई जाती हैं। इसमें कटाई, सफाई, ग्रेडिंग, पैकेजिंग, प्री-कूलिंग, भंडारण, परिवहन, प्रसंस्करण तथा विपणन जैसी गतिविधियाँ सम्मिलित हैं। यदि इन प्रक्रियाओं को वैज्ञानिक ढंग से अपनाया जाए तो उत्पाद की गुणवत्ता लंबे समय तक बनी रहती है, खराब होने की संभावना कम होती है तथा किसानों को बेहतर बाजार मूल्य प्राप्त होता है। विशेषकर फल एवं सब्जियाँ अत्यधिक नाशवान होती हैं, जिनमें कटाई के बाद भी श्वसन, वाष्पोत्सर्जन तथा जैव-रासायनिक क्रियाएं लगातार चलती रहती हैं। इसलिए समय पर उचित प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है।

कटाई के समय अपनाई जाने वाली सावधानियां-गुणवत्ता संरक्षण की शुरुआत खेत से ही होती है। उचित परिपक्वता अवस्था में कटाई करना सबसे महत्वपूर्ण कदम है। समय से पहले कटाई करने पर स्वाद एवं पोषण गुणवत्ता प्रभावित होती है, जबकि अधिक देर से कटाई करने पर भंडारण क्षमता कम हो जाती है।

कटाई के समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए- * सुबह या शाम के समय कटाई करें। * तेज धूप या वर्षा के समय कटाई से बचें। * धारदार एवं स्वच्छ उपकरणों का उपयोग करें। * फल एवं सब्जियों को गिरने या चोट लगने से बचाएँ। * साफ प्लास्टिक क्रेट या टोकरियों का उपयोग करें।

गुणवत्ता संरक्षण की प्रमुख तकनीकें-कटाई के तुरंत बाद उपज का तापमान कम करना, जिसे प्री-कूलिंग कहा जाता है, गुणवत्ता संरक्षण की सबसे प्रभावी तकनीकों में से एक है। इससे श्वसन दर कम होती है, जल हानि घटती है तथा ताजगी लंबे समय तक बनी रहती है।

इसके अतिरिक्त निम्न तकनीकें अत्यंत उपयोगी हैं–

ग्रेडिंग एवं छंटाई: आकार, रंग एवं गुणवत्ता के आधार पर वर्गीकरण करने से बाजार मूल्य बढ़ता है।

उचित पैकेजिंग: नालीदार गत्ते के डिब्बे, प्लास्टिक क्रेट तथा वेंटिलेटेड पैकेजिंग उत्पाद को यांत्रिक क्षति से बचाते हैं।

शीत भंडारण: नियंत्रित तापमान एवं आर्द्रता पर भंडारण करने से शेल्फ लाइफ कई गुना बढ़ जाती है।

कोल्ड चेन प्रबंधन: खेत से बाजार तक नियंत्रित तापमान बनाए रखने से गुणवत्ता सुरक्षित रहती है तथा निर्यात योग्य उत्पाद प्राप्त होते हैं।

मूल्य संवर्धन : आय वृद्धि का सशक्त माध्यम-फल एवं सब्जियों को प्रसंस्कृत कर उनके आर्थिक मूल्य में वृद्धि करना मूल्य संवर्धन (Value Addition) कहलाता है। यह किसानों की आय बढ़ाने का सबसे प्रभावी उपाय माना जाता है।

आम, अमरूद, आंवला, टमाटर, प्याज, लहसुन, अदरक तथा अन्य बागवानी उत्पादों से अनेक मूल्यवर्धित उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं, जैसे–* जैम एवं जेली * स्क्वैश एवं सिरप * अचार एवं चटनी * टमाटर सॉस एवं केचप * निर्जलित (डिहाइड्रेटेड) सब्जियाँ * फल कैंडी एवं मुरब्बा * पल्प, प्यूरी एवं रेडी-टू-सर्व पेय

इन उत्पादों की शेल्फ लाइफ अधिक होती है तथा बाजार में इनका मूल्य कच्चे उत्पादों की तुलना में कहीं अधिक मिलता है। इससे किसानों को वर्षभर आय प्राप्त करने के अवसर मिलते हैं।

आधुनिक तकनीकों की भूमिका-वर्तमान समय में पोस्ट हार्वेस्ट प्रबंधन में अनेक आधुनिक तकनीकों का उपयोग बढ़ रहा है। नियंत्रित वातावरण भंडारण (Controlled Atmosphere Storage), परिवर्तित वातावरण पैकेजिंग (Modified Atmosphere Packaging), खाद्य कोटिंग (Edible Coating), वैक्यूम पैकेजिंग तथा सौर ऊर्जा आधारित कोल्ड स्टोरेज जैसी तकनीकें गुणवत्ता संरक्षण में अत्यंत प्रभावी सिद्ध हो रही हैं। इसके अतिरिक्त डिजिटल सप्लाई चेन, ट्रेसबिलिटी सिस्टम तथा किसान उत्पादक संगठन (FPO) के माध्यम से सामूहिक विपणन किसानों को बेहतर बाजार उपलब्ध करा रहे हैं। ई-मार्केटिंग तथा ऑनलाइन विपणन प्लेटफॉर्म भी बागवानी उत्पादों के लिए नए अवसर प्रदान कर रहे हैं।

सरकारी पहल एवं संभावनाएं-भारत सरकार द्वारा कटाई उपरांत अवसंरचना के विकास हेतु अनेक योजनाएँ संचालित की जा रही हैं। इनमें एकीकृत बागवानी विकास मिशन (MIDH), प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना (PMKSY), ऑपरेशन ग्रीन्स, प्रधानमंत्री सूक्ष्म खाद्य प्रसंस्करण उद्यम उन्नयन योजना (PMFME) तथा राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड (NHB) की योजनाएँ प्रमुख हैं। इन योजनाओं के माध्यम से कोल्ड स्टोरेज, पैक हाउस, प्रसंस्करण इकाइयों तथा मूल्य संवर्धन परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जाती है। यदि किसान इन योजनाओं का लाभ उठाते हुए वैज्ञानिक कटाई उपरांत प्रबंधन अपनाएँ, तो वे अपनी उपज का अधिकतम आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

निष्कर्ष-वर्तमान समय में कृषि की सफलता केवल अधिक उत्पादन तक सीमित नहीं है, बल्कि गुणवत्तापूर्ण उत्पादन, वैज्ञानिक कटाई उपरांत प्रबंधन तथा प्रभावी विपणन पर निर्भर करती है। फल एवं सब्जी फसलों में कटाई के बाद होने वाली हानि को कम करके न केवल खाद्य अपव्यय रोका जा सकता है, बल्कि किसानों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि भी की जा सकती है। वैज्ञानिक कटाई, उचित पैकेजिंग, शीत भंडारण, कोल्ड चेन, प्रसंस्करण तथा मूल्य संवर्धन जैसी तकनीकों को अपनाकर कृषि को अधिक लाभकारी, टिकाऊ एवं प्रतिस्पर्धी बनाया जा सकता है। "उत्पादन से अधिक संरक्षण और मूल्य संवर्धन" की अवधारणा ही भविष्य की स्मार्ट एवं आत्मनिर्भर कृषि की वास्तविक पहचान है। यदि किसान, वैज्ञानिक, उद्योग एवं सरकार मिलकर कटाई उपरांत प्रबंधन को प्राथमिकता दें, तो भारत न केवल बागवानी उत्पादन में बल्कि गुणवत्तापूर्ण प्रसंस्कृत उत्पादों के वैश्विक बाजार में भी अग्रणी स्थान प्राप्त कर सकता है।

01/2025-26

मयंक कुमार पीएच.डी. शोध छात्र
डॉ. अनिल कुमार सिंह सह-प्राध्यापक, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग चन्द्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

बुंदेलखंड की मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी और उसका कृषि पर प्रभाव

प्रस्तावना: बुंदेलखंड भारत का एक महत्वपूर्ण अर्ध-शुष्क कृषि क्षेत्र है, जो मुख्यतः उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के कुछ जिलों में फैला हुआ है। यह क्षेत्र अपनी ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक विशेषताओं के साथ-साथ सूखा, जल संकट, मृदा अपरदन और कम कृषि उत्पादकता जैसी समस्याओं के लिए भी जाना जाता है। बुंदेलखंड की कृषि आज भी बड़े पैमाने पर वर्षा पर निर्भर है, इसलिए यहाँ की मिट्टी की गुणवत्ता और उसमें उपलब्ध पोषक तत्व सीधे तौर पर खेती की सफलता को प्रभावित करते हैं। मिट्टी केवल पौधों को सहारा देने वाला माध्यम नहीं है, बल्कि यह नाइट्रोजन (N), फॉस्फोरस (P), पोटाश (K), सल्फर (S) और सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे जिंक (Zn), बोरॉन (B), आयरन (Fe), मैंगनीज (Mn) आदि का प्रमुख स्रोत भी है। यदि मिट्टी में इन पोषक तत्वों की कमी हो जाए, तो फसलें कमजोर होती हैं, उत्पादन घटता है और किसानों की आय प्रभावित होती है। बुंदेलखंड की मिट्टी में यही समस्या तेजी से सामने आई है– मिट्टी में पोषक तत्वों का असंतुलन और कमी। यह केवल कृषि की समस्या नहीं, बल्कि ग्रामीण आजीविका, खाद्य सुरक्षा और पर्यावरणीय संतुलन से जुड़ा गंभीर मुद्दा है।

1. बुंदेलखंड की मिट्टी का स्वरूप और कृषि पृष्ठभूमि

बुंदेलखंड क्षेत्र की मिट्टियाँ भौगोलिक विविधता के कारण एकरूप नहीं हैं। यहाँ सामान्यतः लाल, काली, दोमट, हल्की पथरीली तथा कुछ स्थानों पर बलुई मिट्टी पाई जाती है। कई हिस्सों में मिट्टी की ऊपरी उपजाऊ परत पतली है और उसके नीचे चट्टानी संरचना या कंकरीली सतह मिलती है। इससे मिट्टी की जलधारण क्षमता, जैविक पदार्थ की मात्रा और पोषक तत्वों को रोककर रखने की क्षमता सीमित हो जाती है। बुंदेलखंड की कृषि का प्रमुख आधार वर्षा है। वर्षा अनियमित होने के कारण फसलें कभी सूखे तो कभी अतिवृष्टि से प्रभावित होती हैं। लंबे समय से लगातार खेती, सीमित सिंचाई, फसल अवशेषों का खेत से बाहर जाना, पशुधन आधारित जैविक खाद का कम उपयोग तथा असंतुलित उर्वरक प्रयोग ने मिट्टी की उर्वरता को कमजोर किया है। कुछ अध्ययनों में बुंदेलखंड क्षेत्र की मिट्टियों में नाइट्रोजन की कमी, कई स्थानों पर सल्फर, जिंक और बोरॉन की कमी तथा जैविक कार्बन का निम्न स्तर पाया गया है। दूसरी ओर कुछ क्षेत्रों में उपलब्ध फॉस्फोरस मध्यम से उच्च भी मिल सकता है, पर समग्र तस्वीर यही है कि मिट्टी का पोषण संतुलित नहीं है।

2. मिट्टी में पोषक तत्वों का महत्व- पौधों की वृद्धि और उत्पादन के लिए मिट्टी में उपलब्ध पोषक तत्व अत्यंत आवश्यक हैं। इन्हें मुख्यतः तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है-

(क) प्रमुख पोषक तत्व- * **नाइट्रोजन (N)-** पौधों की हरित वृद्धि, पत्तियों के विकास और प्रोटीन निर्माण के लिए आवश्यक। * फॉस्फोरस (P) – जड़ विकास, पुष्पन, बीज निर्माण और ऊर्जा स्थानांतरण में सहायक। * पोटाश (K) – जल संतुलन, रोग प्रतिरोधक क्षमता और दाने भरने में महत्वपूर्ण।

(ख) द्वितीयक पोषक तत्व- * सल्फर (S) – प्रोटीन निर्माण, तेलहन फसलों की गुणवत्ता और एंजाइम क्रियाओं के लिए

आवश्यक। * कैल्शियम (Ca) और मैग्नीशियम (Mg) - कोशिका निर्माण, प्रकाश संश्लेषण और पौधों के स्वास्थ्य में सहायक।

(ग) सूक्ष्म पोषक तत्व- जिंक, बोरॉन, आयरन, मैंगनीज, कॉपर आदि बहुत कम मात्रा में चाहिए होते हैं, पर इनकी कमी होने पर फसल की वृद्धि बुरी तरह प्रभावित होती है।

3. बुंदेलखंड की मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी के प्रमुख कारण

* **वर्षा की अनिश्चितता और मृदा अपरदन-** बुंदेलखंड में वर्षा कम ही नहीं, बल्कि अत्यधिक अनियमित भी होती है। जब कम समय में तेज बारिश होती है, तो खेतों की ऊपरी उपजाऊ मिट्टी बह जाती है। बुंदेलखंड में शीट एरोजन, रील एरोजन और गली एरोजन जैसी समस्याएँ कई इलाकों में देखी जाती हैं, जो पोषक तत्वों की हानि को तेज करती हैं।

* **जैविक कार्बन की कमी-** मिट्टी में जैविक कार्बन पोषक तत्वों का भंडार होता है। यही मिट्टी की संरचना, नमी धारण क्षमता, सूक्ष्मजीव गतिविधि और पोषक तत्वों की उपलब्धता को बनाए रखता है। बुंदेलखंड में पशुधन आधारित खाद, हरी खाद, कम्पोस्ट और फसल अवशेषों का पर्याप्त उपयोग नहीं हो पाता। फसल कटाई के बाद अवशेष जलाने या बाहर ले जाने से मिट्टी में जैविक पदार्थ की वापसी कम हो जाती है। परिणामस्वरूप मिट्टी "भूखी" होती जाती है।

* **असंतुलित उर्वरक उपयोग-** कई किसान मुख्य रूप से यूरिया या केवल NPK उर्वरकों पर निर्भर रहते हैं। इससे फसल को तत्काल हरियाली तो मिल जाती है, पर मिट्टी का समग्र पोषण नहीं हो पाता।

* **लगातार एक जैसी फसलें लेना-** जहाँ सिंचाई या नमी उपलब्ध होती है, वहाँ गेहूँ, चना, सरसों, अरहर जैसी फसलें बार-बार ली जाती हैं। हर फसल मिट्टी से कुछ खास पोषक तत्व अधिक मात्रा में खींचती है। यदि उतनी ही मात्रा में पोषक तत्व वापस न दिए जाएँ, तो न्यूट्रिएंट माइनिंग यानी पोषक तत्वों का लगातार क्षय होने लगता है।

* **कम सिंचाई और नमी की कमी-** सूखी मिट्टी में पोषक तत्व घुलकर पौधों की जड़ों तक आसानी से नहीं पहुँच पाते। नमी की कमी के कारण पौधों द्वारा पोषक तत्वों का अवशोषण कम हो जाता है।

4. पोषक तत्वों की कमी का कृषि पर प्रभाव

* फसल उत्पादन में गिरावट * पौधों की कमजोर वृद्धि और पीलेपन की समस्या * जड़ विकास पर नकारात्मक प्रभाव * दानों और उपज की गुणवत्ता में कमी * सूखा सहन करने की क्षमता में कमी * भूमि की दीर्घकालीन उत्पादकता में गिरावट

5. बुंदेलखंड की प्रमुख फसलों पर पोषक तत्वों की कमी का प्रभाव

गेहूँ- गेहूँ में नाइट्रोजन और जिंक की कमी से पौधे पीले, कमजोर और कम बालियों वाले हो जाते हैं। दाने छोटे रह जाते हैं और उत्पादन घटता है।, चना और अन्य दलहन- दलहनी फसलों को फॉस्फोरस, सल्फर और बोरॉन की पर्याप्त उपलब्धता चाहिए। कमी होने पर जड़ ग्रंथियाँ कम बनती हैं, फलियाँ कम लगती हैं और दानों का विकास प्रभावित होता है।, सरसों- सरसों में सल्फर और बोरॉन की कमी उपज और तेल प्रतिशत दोनों को कम कर सकती है। फूल-फलन प्रभावित होने से दाने कम बनते हैं।

01/2025-26

दिलीप व्यास शोधार्थी (पीएच.डी.), कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

मृदा संरक्षण की दिशा में आईसीएआर का भूमि बचाओ अभियान

देश की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा का आधार स्वस्थ मृदा है। बढ़ते रासायनिक उर्वरकों के असंतुलित उपयोग, मृदा अपरदन, कार्बनिक पदार्थों की कमी तथा जलवायु परिवर्तन के कारण भूमि की उर्वरता प्रभावित हो रही है। इसी चुनौती से निपटने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आई.सी.ए.आर.) द्वारा 'भूमि बचाओ अभियान' के अंतर्गत किसानों को मृदा संरक्षण एवं संतुलित पोषण प्रबंधन के प्रति जागरूक किया जा रहा है। देश की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा का आधार स्वस्थ मृदा है।

बढ़ते रासायनिक उर्वरकों के असंतुलित उपयोग, मृदा अपरदन, कार्बनिक पदार्थों की कमी तथा जलवायु परिवर्तन के कारण भूमि की उर्वरता प्रभावित हो रही है। इसी चुनौती से निपटने हेतु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आई.सी.ए.आर.) द्वारा 'भूमि बचाओ अभियान' के अंतर्गत किसानों को मृदा संरक्षण एवं संतुलित पोषण प्रबंधन के प्रति जागरूक किया जा रहा है। इस अभियान का उद्देश्य किसानों को मृदा परीक्षण, मृदा स्वास्थ्य कार्ड, संतुलित उर्वरक उपयोग, जैविक एवं प्राकृतिक खेती, हरी खाद, फसल अवशेष प्रबंधन, सूक्ष्म पोषक तत्वों का संतुलित प्रयोग तथा जल संरक्षण जैसी तकनीकों को अपनाने के लिए प्रेरित करना है। कृषि विज्ञान केन्द्र (के.वी.के.), आईसीएआर संस्थान तथा कृषि विश्वविद्यालय प्रशिक्षण, किसान गोष्ठी, खेत प्रदर्शन और जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से इस अभियान को गाँव-गाँव तक पहुँचा रहे हैं।

भूमि बचाओ अभियान के प्रमुख लाभ

* मृदा की उर्वरता एवं जैविक कार्बन में वृद्धि।
* संतुलित उर्वरक उपयोग से उत्पादन लागत में कमी।
* जल संरक्षण एवं पर्यावरण सुरक्षा को बढ़ावा।
* फसल उत्पादकता एवं गुणवत्ता में सुधार।
* दीर्घकालीन टिकाऊ कृषि प्रणाली का विकास।

किसानों के लिए वैज्ञानिक सुझाव

1. **नियमित मृदा परीक्षण कराएं:** प्रत्येक 2-3 वर्ष में खेत की मिट्टी का परीक्षण कराएं और मृदा स्वास्थ्य कार्ड की अनुशंसाओं के अनुसार ही उर्वरकों का प्रयोग करें।

2. **संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन अपनाएं:** केवल यूरिया पर निर्भर न रहें। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस , पोटाश के साथ-साथ जिंक, सल्फर, बोरॉन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों का भी आवश्यकता अनुसार उपयोग करें।

3. **जैविक कार्बन बढ़ाएं:** प्रति वर्ष खेत में गोबर की सड़ी खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद तथा फसल अवशेष मिलाएं। इससे मिट्टी की संरचना, जल धारण क्षमता एवं सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ती है।

4. **फसल चक्र अपनाएं:** गेहूँ-धान जैसे एक ही फसल चक्र के स्थान पर दलहनी एवं तिलहनी फसलों को शामिल करें। इससे मृदा की उर्वरता बनी रहती है और रोग-कीटों का प्रकोप भी कम होता है।

5. **फसल अवशेष न जलाएं:** पराली एवं अन्य फसल अवशेषों को जलाने के बजाय खेत में मिलाकर कम्पोस्ट या मल्च के रूप में उपयोग करें। इससे कार्बनिक पदार्थ बढ़ते हैं और प्रदूषण भी कम होता है।

6. **जल संरक्षण तकनीक अपनाएं:** ड्रिप, स्प्रिंकलर, वर्षा जल संचयन तथा मल्चिंग जैसी तकनीकों से जल की बचत करें और मिट्टी में नमी बनाए रखें।

7. **मृदा अपरदन रोकें:** ढाल वाले क्षेत्रों में मेड़बंदी, समोच्च खेती, घास की पट्टियाँ एवं वृक्षारोपण अपनाकर मिट्टी के कटाव को रोकें।

8. **जैव उर्वरकों का उपयोग करें:** राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, पी.एस.बी. (फॉस्फेट घुलनशील बैक्टीरिया) जैसे जैव उर्वरकों का उपयोग कर रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करें।

9. **प्राकृतिक एवं एकीकृत कृषि अपनाएं:** जहाँ संभव हो, प्राकृतिक खेती, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन (छ्ड) तथा एकीकृत कीट प्रबंधन अपनाएं ताकि मिट्टी का स्वास्थ्य लंबे समय तक सुरक्षित रहे।

10. **कृषि विशेषज्ञों से नियमित सलाह लें:** कृषि विज्ञान केंद्र (के.वी.के.) कृषि विश्वविद्यालय एवं कृषि विभाग के वैज्ञानिकों से समय-समय पर प्रशिक्षण एवं तकनीकी सलाह प्राप्त करें और केवल प्रमाणित बीज एवं उर्वरकों का उपयोग करें।

* प्रत्येक 2-3 वर्ष में मृदा परीक्षण अवश्य कराएं।
* मृदा स्वास्थ्य कार्ड की सिफारिशों के अनुसार उर्वरकों का प्रयोग करें।
* जैविक खाद, हरी खाद एवं फसल अवशेषों का खेत में उपयोग बढ़ाएँ।
* फसल चक्र एवं दलहनी फसलों को अपनाकर मिट्टी की उर्वरता बनाए रखें।
* कृषि विज्ञान केंद्रों से वैज्ञानिक सलाह लेकर आधुनिक मृदा संरक्षण तकनीकों को अपनाएँ।

किसानों के लिए वैज्ञानिक सुझाव

1. **नियमित मृदा परीक्षण कराएं:** प्रत्येक 2-3 वर्ष में खेत की मिट्टी का परीक्षण कराएं और मृदा स्वास्थ्य कार्ड की अनुशंसाओं के अनुसार ही उर्वरकों का प्रयोग करें।

2. **संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन अपनाएं:** केवल यूरिया पर निर्भर न रहें। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस , पोटाश के साथ-साथ जिंक, सल्फर, बोरॉन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों का भी आवश्यकता अनुसार उपयोग करें।

3. **जैविक कार्बन बढ़ाएं:** प्रति वर्ष खेत में गोबर की सड़ी खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद तथा फसल अवशेष मिलाएं। इससे मिट्टी की संरचना, जल धारण क्षमता एवं सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ती है।

4. **फसल चक्र अपनाएं:** गेहूँ-धान जैसे एक ही फसल चक्र के स्थान पर दलहनी एवं तिलहनी फसलों को शामिल करें। इससे मृदा की उर्वरता बनी रहती है और रोग-कीटों का प्रकोप भी कम होता है।

5. **फसल अवशेष न जलाएं:** पराली एवं अन्य फसल अवशेषों को जलाने के बजाय खेत में मिलाकर कम्पोस्ट या मल्च के रूप में उपयोग करें। इससे कार्बनिक पदार्थ बढ़ते हैं और प्रदूषण भी कम होता है।

6. **जल संरक्षण तकनीक अपनाएं:** ड्रिप, स्प्रिंकलर, वर्षा जल संचयन तथा मल्चिंग जैसी तकनीकों से जल की बचत करें और मिट्टी में नमी बनाए रखें।

7. **मृदा अपरदन रोकें:** ढाल वाले क्षेत्रों में मेड़बंदी, समोच्च खेती, घास की पट्टियाँ एवं वृक्षारोपण अपनाकर मिट्टी के कटाव को रोकें।

8. **जैव उर्वरकों का उपयोग करें:** राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, पी.एस.बी. (फॉस्फेट घुलनशील बैक्टीरिया) जैसे जैव उर्वरकों का उपयोग कर रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करें।

9. **प्राकृतिक एवं एकीकृत कृषि अपनाएं:** जहाँ संभव हो, प्राकृतिक खेती, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन (INM) तथा एकीकृत कीट प्रबंधन अपनाएं ताकि मिट्टी का स्वास्थ्य लंबे समय तक सुरक्षित रहे।

10. **कृषि विशेषज्ञों से नियमित सलाह लें:** कृषि विज्ञान केन्द्र (के.वी.के.) कृषि विश्वविद्यालय एवं कृषि विभाग के वैज्ञानिकों से समय-समय पर प्रशिक्षण एवं तकनीकी सलाह प्राप्त करें और केवल प्रमाणित बीज एवं उर्वरकों का उपयोग करें।

* प्रत्येक 2-3 वर्ष में मृदा परीक्षण अवश्य कराएं।
* मृदा स्वास्थ्य कार्ड की सिफारिशों के अनुसार उर्वरकों का प्रयोग करें।
* जैविक खाद, हरी खाद एवं फसल अवशेषों का खेत में उपयोग बढ़ाएँ।
* फसल चक्र एवं दलहनी फसलों को अपनाकर मिट्टी की उर्वरता बनाए रखें।
* कृषि विज्ञान केंद्रों से वैज्ञानिक सलाह लेकर आधुनिक मृदा संरक्षण तकनीकों को अपनाएं।

निष्कर्ष

स्वस्थ भूमि ही समृद्ध कृषि की आधारशिला है। आईसीएआर का भूमि बचाओ अभियान किसानों को मृदा संरक्षण के प्रति जागरूक कर टिकाऊ कृषि, सुरक्षित खाद्य उत्पादन तथा भावी पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यदि प्रत्येक किसान अपनी भूमि के स्वास्थ्य का ध्यान रखे, तो कृषि उत्पादन के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण का लक्ष्य भी सफलतापूर्वक प्राप्त किया जा सकता है।

डॉ. अजय कुमार (वरिष्ठ वैज्ञानिक)
डॉ. अमित कुमार केशरी विषय वस्तु विशेषज्ञ कृषि प्रसार, के.वी.के. कौशाम्बी) (उ.प्र.)

डायरेक्ट सीडेड राइस (Direct Seeded Rice-DSR) धान उत्पादन की आधुनिक एवं जल-संरक्षण तकनीक

प्रस्तावना: भारत विश्व के प्रमुख धान उत्पादक देशों में से एक है। देश की खाद्य सुरक्षा में धान का महत्वपूर्ण योगदान है। परंपरागत रूप से धान की खेती रोपाई विधि द्वारा की जाती है, जिसमें पहले नर्सरी तैयार की जाती है और बाद में पौधों को मुख्य खेत में रोपा जाता है। यह विधि अधिक श्रम, समय तथा पानी की मांग करती है। वर्तमान समय में जल संकट, मजदूरों की कमी तथा खेती की बढ़ती लागत को देखते हुए धान उत्पादन की नई तकनीकों की आवश्यकता महसूस की जा रही है। ऐसी ही एक उन्नत तकनीक है डायरेक्ट सीडेड राइस (Direct Seeded Rice-DSR)। डायरेक्ट सीडेड राइस वह तकनीक है जिसमें धान के बीजों को सीधे खेत में बोया जाता है और नर्सरी तैयार करने तथा रोपाई करने की आवश्यकता नहीं होती। यह तकनीक पानी, श्रम एवं लागत की बचत करते हुए धान उत्पादन को अधिक लाभकारी बनाती है।

DSR क्या है?

DSR एक ऐसी कृषि तकनीक है जिसमें धान के बीजों को सीधे खेत में ड्रिल मशीन या सीड-कम-फर्टिलाइजर ड्रिल द्वारा बोया जाता है। इस विधि में खेत को लगातार पानी से भरा रखने की आवश्यकता नहीं होती। उचित नमी वाले खेत में बीजों की बुवाई की जाती है और अंकुरण के बाद फसल सामान्य रूप से विकसित होती है। **इस तकनीक को मुख्य रूप से दो प्रकारों में विभाजित किया जाता है-**

1.सूखी बुवाई (Dry DSR) - इसमें खेत की जुताई करके पाटा लगाने के बाद मशीन द्वारा बुवाई कर देते हैं और जमाव के लिए हल्की सिंचाई करते हैं या वर्षा का इंतजार करते हैं।

2.गीली बुवाई (Wet DSR) – इसमें पहले खेत में एक गहरी सिंचाई करने के बाद जब खेत जुताई करने योग्य हो जाए तो जुताई करके खेत को तैयार करने के बाद मशीन द्वारा बुवाई करते हैं।

दोनों विधियों में से कौन सी विधि अपनानी है यह मौसम एवं संसाधनों की उपलब्धता पर निर्भर करता है। अगर सिंचाई की सुविधा हो तो नम विधि अपनाना अच्छा होता है।

DSR तकनीक का महत्व

वर्तमान कृषि परिदृश्य में DSR तकनीक का महत्व लगातार बढ़ रहा है क्योंकि— * भूजल स्तर में गिरावट हो रही है। * सिंचाई जल की उपलब्धता कम होती जा रही है। * कृषि मजदूरों की कमी बढ़ रही है। * उत्पादन लागत में निरंतर वृद्धि हो रही है। * जलवायु परिवर्तन कृषि को प्रभावित कर रहा है।

ऐसी परिस्थितियों में DSR तकनीक किसानों को कम लागत में बेहतर उत्पादन प्राप्त करने का अवसर प्रदान करती है।

DSR के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ

DSR तकनीक की सफलता के लिए निम्नलिखित परिस्थितियाँ आवश्यक हैं— * समतल खेत (लेजर लैंड लेवलिंग किया हुआ) * अच्छी जल निकासी व्यवस्था * खरपतवार नियंत्रण की सुविधा * समय पर सिंचाई की उपलब्धता * गुणवत्तायुक्त एवं प्रमाणित बीज

खेत की तैयारी

DSR में खेत की तैयारी अत्यंत महत्वपूर्ण होती है क्योंकि असमतल खेतों में अंकुरण तथा पौधों की वृद्धि प्रभावित हो सकती है। खेत की 2-3 बार जुताई करने के बाद पाटा लगाकर मिट्टी को भुरभुरा बनाएं। खेत को लेजर लैंड लेवलिंग के द्वारा पूरी तरह समतल करें जिससे पानी की बचत होती है तथा फसल की वृद्धि समान रूप से होती है। आवश्यकतानुसार गोबर की सड़ी हुई खाद मिलाएं। अंतिम जुताई के समय आधार उर्वरक डालें।

बीज एवं बुवाई

बीज दर-DSR में सामान्यतः 20-25 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है।

बीज उपचार-बीजों को फफूंदनाशक एवं जैव उर्वरकों से उपचारित करना चाहिए ताकि रोगों की संभावना कम हो सके। 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज को कार्बेन्डाजिम से शोधित करते हैं।

बुवाई का समय-DSR की बुवाई सामान्यतः मई के अंतिम सप्ताह से जून के तीसरे सप्ताह तक की जाती है।

बुवाई की विधि

* सीड ड्रिल या जीरो टिल ड्रिल का प्रयोग करें।
* कतार से कतार दूरी लगभग 20 सेंटीमीटर रखें।
* बीज की गहराई 2-3 सेंटीमीटर रखें।

पोषक तत्व प्रबंधन-DSR में संतुलित उर्वरक प्रबंधन आवश्यक है। नाइट्रोजन की अनुशंसित मात्रा को 3-4 भागों में विभाजित करके देना चाहिए - आधार मात्रा, सक्रिय वृद्धि अवस्था, कल्ले बनने की अवस्था एवं बालियाँ निकलने की अवस्था। फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय देना लाभकारी होता है। जिंक की कमी वाले क्षेत्रों में जिंक सल्फेट का प्रयोग आवश्यक है। जैव उर्वरक एजोस्पिरिलम तथा फॉस्फेट घुलनशील जीवाणुओं का प्रयोग पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाता है।

सिंचाई प्रबंधन- DSR तकनीक की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक है। परंपरागत धान की खेती में खेत को लंबे समय तक पानी से भरा रखा जाता है, जबकि DSR में ऐसी आवश्यकता नहीं होती। बुवाई के बाद अंकुरण हेतु पर्याप्त नमी बनाए रखी जाती है तथा आवश्यकता अनुसार सिंचाई की जाती है। मिट्टी में दरारें पड़ने से पहले सिंचाई करना उपयुक्त माना जाता है। विभिन्न शोध अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि DSR तकनीक द्वारा परंपरागत रोपाई विधि की तुलना में 15 से 30% तक पानी की बचत की जा सकती है। जल संरक्षण की दृष्टि से यह तकनीक भविष्य की कृषि हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जा रही है।

खरपतवार प्रबंधन - इस तकनीक में सबसे महत्वपूर्ण प्रबंधन खरपतवार नियंत्रण का होता है जिसमे बुवाई के पहले सिंचाई करने से खरपतवारों का जमाव आ जाने से जुताई करके इनको नष्ट कर सकते हैं। रासायनिक नियंत्रण के परिपेक्ष्य में बताया कि जमाव पूर्व एवं जमाव के बाद खरपतवार नाशी का प्रयोग प्रभावकारी होता है। जमाव पूर्व खरपतवार नाशी पेंडामेथिलीन 3.3 ली. प्रति हे. का प्रयोग नम विधि में बोई गई खेत में बुवाई के दूसरे दिन प्रयोग करना चाहिए । इसमें उपरोक्त मात्रा को 150 लीटर या 200 लीटर पानी में घोलकर करें। जमाव के बाद खरपतवारनाशी के रूप में विसपाइरी बैक सोडियम 10 एस एल, 100 मिली एवं पाईराइजा सल्फयूरान 80 ग्राम दवा को बुवाई के 25 से 35 दिन के बाद 120 से 150 लीटर पानी में घोल बनाकर स्प्रे करने से सभी प्रकार के खरपतवार नष्ट हो जाते हैं ,जिससे फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा न के बराबर होती है एवं फसल की बढ़वार अच्छी होती है और आवश्यकता पड़ने पर यांत्रिक निराई। अंततः उत्पादन अच्छा प्राप्त होता है।

रोग एवं कीट प्रबंधन-धान की अन्य फसलों की तरह इसमें भी ब्लास्ट, शीथ ब्लाइट तथा जीवाणु झुलसा जैसे रोग देखने को मिल सकते हैं। इसी प्रकार तना छेदक, पत्ती लपेटक और भूरा फुदका जैसे कीट भी नुकसान पहुँचा सकते हैं। इनकी रोकथाम के लिए नियमित निगरानी, संतुलित उर्वरक उपयोग तथा समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन (IPM) पद्धति अपनाना आवश्यक है। समय पर नियंत्रण उपाय अपनाकर फसल को सुरक्षित रखा जा सकता है तथा उत्पादन में होने वाली हानि को कम किया जा सकता है।

DSR तकनीक के लाभ

1. **पानी की बचत:** परंपरागत रोपाई विधि की तुलना में 15-30 प्रतिशत तक पानी की बचत होती है।
2. **श्रम लागत में कमी:** रोपाई हेतु मजदूरों की आवश्यकता नहीं होती, जिससे श्रम लागत कम होती है।
3. **समय की बचत:** नर्सरी तैयार करने तथा रोपाई में लगने वाला समय बच जाता है।
4. **उत्पादन लागत में कमी:** कम मजदूरी एवं कम सिंचाई के कारण कुल लागत घटती है।
5. **पर्यावरण संरक्षण:** मीथेन गैस का उत्सर्जन अपेक्षाकृत कम होता है, जिससे पर्यावरणीय प्रभाव घटता है।
6. **समय पर गेहूँ की बुवाई:** धान की जल्दी कटाई होने से अगली फसल गेहूँ की समय पर बुवाई संभव हो जाती है।

DSR तकनीक की सीमाएँ-खेत का समतलीकरण आवश्यक होने के कारण प्रारंभिक निवेश बढ़ सकता है। खरपतवार नियंत्रण पर विशेष ध्यान देना पड़ता है तथा बुवाई के बाद प्रारंभिक अवस्था में नमी का उचित प्रबंधन आवश्यक होता है। यदि किसान को तकनीक की पर्याप्त जानकारी न हो तो अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं हो पाते। अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में जलभराव की समस्या भी इसकी सफलता को प्रभावित कर सकती है। इसलिए किसानों को इस तकनीक को अपनाने से पहले कृषि विशेषज्ञों की सलाह अवश्य लेनी चाहिए। जिसमे लेजर लैंड लेवलिंग अपनाएं, प्रमाणित एवं उच्च अंकुरण क्षमता वाले बीजों का प्रयोग, खरपतवार नियंत्रण पर विशेष ध्यान एवं संतुलित उर्वरक प्रबंधन करने की सलाह दी जाती हैं। साथ ही साथ समय पर सिंचाई एवं जल निकासी की व्यवस्था रखें।

निष्कर्ष-डायरेक्ट सीडेड राइस (DSR) धान उत्पादन की एक आधुनिक, टिकाऊ, वैज्ञानिक एवं संसाधन-संरक्षण तकनीक है। जल संकट, श्रमिकों की कमी और बढ़ती उत्पादन लागत जैसी समस्याओं के समाधान में यह तकनीक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। उचित खेत प्रबंधन, खरपतवार नियंत्रण एवं वैज्ञानिक अनुशंसाओं के पालन से DSR के माध्यम से अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। भविष्य में जलवायु-स्मार्ट कृषि के विकास में DSR तकनीक का महत्व और अधिक बढ़ने की संभावना है। अतः किसानों को इस तकनीक को अपनाकर धान उत्पादन को अधिक लाभकारी एवं टिकाऊ बनाने का प्रयास करना चाहिए। यदि किसान वैज्ञानिक अनुशंसाओं के अनुसार इस तकनीक को अपनाएँ और उचित प्रबंधन करें, तो वे अधिक उत्पादन, बेहतर लाभ तथा सतत कृषि विकास के लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

जैविक खेती: सतत कृषि की ओर एक कदम

✍ **आशीष रजक** सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

✍ **डॉ. आशुतोष सिंह** सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, श्री विश्वनाथ पीजी कॉलेज कलान, सुल्तानपुर यू.पी.

प्रस्तावना

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ देश की बड़ी आबादी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। बढ़ती जनसंख्या की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पिछले कुछ दशकों में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा खरपतवारनाशकों का अत्यधिक उपयोग किया गया। इससे कृषि उत्पादन में वृद्धि तो हुई, लेकिन इसके साथ-साथ मृदा की उर्वरता में कमी, जल प्रदूषण, पर्यावरण असंतुलन तथा मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव भी देखने को मिले। इन समस्याओं के समाधान के रूप में जैविक खेती एक महत्वपूर्ण विकल्प बनकर उभरी है। जैविक खेती न केवल पर्यावरण के अनुकूल है, बल्कि यह सतत कृषि विकास की दिशा में भी एक प्रभावी कदम है।

जैविक खेती का अर्थ

जैविक खेती वह कृषि पद्धति है जिसमें फसल उत्पादन के लिए रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, वृद्धि नियामकों तथा अन्य कृत्रिम पदार्थों का उपयोग नहीं किया जाता। इसके स्थान पर गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद, जैव उर्वरक तथा जैविक कीट नियंत्रण विधियों का उपयोग किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य मृदा की उर्वरता बनाए रखना, पर्यावरण की रक्षा करना तथा सुरक्षित एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थों का उत्पादन करना है।

जैविक खेती के उद्देश्य

1. मृदा की उर्वरता एवं उत्पादकता को बनाए रखना।
2. पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देना।
3. रासायनिक प्रदूषण को कम करना।
4. सुरक्षित एवं गुणवत्तायुक्त खाद्य पदार्थों का उत्पादन करना।
5. प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना।
6. कृषि को दीर्घकालिक रूप से टिकाऊ बनाना।

जैविक खेती के प्रमुख घटक

1. जैविक खाद (Organic fertilizer)

जैविक खेती में पोषक तत्वों की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार की जैविक खादों का उपयोग किया जाता है।

* गोबर की खाद (FYM) * कम्पोस्ट खाद * वर्मी कम्पोस्ट * हरी खाद * फसल अवशेष

2. जैव उर्वरक (Organic fertilizer)

जैव उर्वरक सूक्ष्मजीवों पर आधारित होते हैं जो

पौधों को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराते हैं।

* राइजोबियम * एजोटोबैक्टर * एजोस्पिरिलम * फॉस्फेट घुलनशील जीवाणु (PSB) * नीलहरित शैवाल

3. जैविक कीट नियंत्रण (Biological Pest Control)

फसलों को कीटों एवं रोगों से बचाने के लिए जैविक उपाय अपनाए जाते हैं।

I. नीम आधारित उत्पाद
II. ट्राइकोडर्मा
III. बैसिलस थुरिन्जिएन्सिस (Bt) IV. फेरोमोन ट्रैप
V. प्रकाश प्रपंच (Light Trap)

4. फसल चक्र (crop rotation)

विभिन्न फसलों को क्रमवार उगाने से मृदा की उर्वरता बनी रहती है तथा रोग एवं कीटों का प्रकोप कम होता है।

जैविक खेती के लाभ

1. मृदा स्वास्थ्य में सुधार

जैविक खादों के प्रयोग से मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ती है, जिससे मृदा की संरचना एवं जलधारण क्षमता में सुधार होता है।

2. पर्यावरण संरक्षण

रासायनिक पदार्थों का उपयोग न होने के कारण जल, वायु एवं मृदा प्रदूषण कम होता है।

3. मानव स्वास्थ्य के लिए लाभकारी

जैविक उत्पादों में रासायनिक अवशेष नहीं होते, जिससे स्वास्थ्य संबंधी जोखिम कम होते हैं।

4. जैव विविधता का संरक्षण

जैविक खेती लाभकारी कीटों, पक्षियों एवं सूक्ष्मजीवों के संरक्षण में सहायता करती है।

5. उत्पादन की गुणवत्ता में सुधार

जैविक उत्पाद अधिक पौष्टिक, स्वादिष्ट एवं सुरक्षित माने जाते हैं।

6. दीर्घकालिक लाभ

यह खेती प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करती है और कृषि को लंबे समय तक टिकाऊ बनाती है।

जैविक खेती की चुनौतियाँ

1. प्रारंभिक वर्षों में उत्पादन कम हो सकता है।
2. जैविक खादों की पर्याप्त उपलब्धता एक समस्या है।
3. जैविक उत्पादों के विपणन की उचित व्यवस्था का अभाव।
4. किसानों में तकनीकी ज्ञान की कमी।
5. जैविक प्रमाणन (Certification) की प्रक्रिया जटिल एवं खर्चीली हो सकती है।

भारत में जैविक खेती की स्थिति

भारत विश्व के प्रमुख जैविक कृषि उत्पादक देशों में से एक है। देश के कई राज्यों में जैविक खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। विशेष रूप से Sikkim को भारत का पहला पूर्ण जैविक राज्य घोषित किया गया है। इसके अतिरिक्त Madhya Pradesh, Rajasthan, Uttarakhand तथा Uttar Pradesh में भी जैविक खेती का क्षेत्र लगातार बढ़ रहा है।

सतत कृषि में जैविक खेती की भूमिका

सतत कृषि का उद्देश्य वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना है। जैविक खेती मृदा, जल, पर्यावरण तथा जैव विविधता के संरक्षण के माध्यम से सतत कृषि के उद्देश्यों को पूरा करती है। यह कृषि उत्पादन को पर्यावरण के साथ संतुलित रखते हुए ग्रामीण विकास एवं किसानों की आय बढ़ाने में भी सहायक है।

निष्कर्ष

जैविक खेती आधुनिक कृषि की चुनौतियों का एक प्रभावी समाधान है। यह न केवल मृदा की उर्वरता एवं पर्यावरण संरक्षण में योगदान देती है, बल्कि सुरक्षित एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थों के उत्पादन को भी सुनिश्चित करती है। वर्तमान समय में सतत कृषि विकास के लिए जैविक खेती को अपनाना अत्यंत आवश्यक है। यदि किसानों को उचित प्रशिक्षण, तकनीकी सहायता तथा बाजार सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाएँ, तो जैविक खेती भारत की कृषि व्यवस्था को अधिक टिकाऊ, लाभकारी और पर्यावरण-अनुकूल बना सकती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

'डिजिटल खेती, स्मार्ट किसान: कृषि विस्तार सेवाओं में तकनीकी क्रांति'

मोहित कुमार खंगार, रिंकू यादव, ऋषभ श्रीवास्तव
पीएच.डी शोधार्थी, कृषि प्रसार एवं संचार विभाग, रानी लक्ष्मीबाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झांसी (उ.प्र.)

आशुतोष शर्मा सहायक प्राध्यापक, कृषि प्रसार एवं संचार विभाग, रानी लक्ष्मीबाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झांसी

मयंक शर्मा एम.एससी. शोधार्थी, कृषि प्रसार एवं संचार विभाग, रानी लक्ष्मीबाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झांसी

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है और ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लाखों लोगों की आजीविका का प्रमुख स्रोत बनी हुई है। आज भी भारत की एक बड़ी जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि और संबद्ध क्षेत्रों पर निर्भर है। यह क्षेत्र राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा, रोजगार सृजन और ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण योगदान देता है। हालांकि, अपने महत्व के बावजूद, भारतीय कृषि को घटती हुई कृषि उत्पादकता, जलवायु परिवर्तनशीलता, कीट एवं रोग प्रकोप, भूमि जोतों के विखंडन और समय पर जानकारी की कमी जैसी कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इन चुनौतियों का एक महत्वपूर्ण समाधान कृषि विस्तार सेवाओं को मजबूत करने में निहित है। कृषि विस्तार वह प्रणाली है जिसके माध्यम से वैज्ञानिक ज्ञान, शोध निष्कर्ष और आधुनिक प्रौद्योगिकियां अनुसंधान संस्थानों और विश्वविद्यालयों से किसानों तक पहुंचाई जाती हैं। प्रभावी विस्तार सेवाएं किसानों को अपनी कृषि पद्धतियों में सुधार करने, नई तकनीकों को अपनाने तथा उत्पादकता एवं आय बढ़ाने में मदद करती हैं।

परंपरागत रूप से, भारत में कृषि विस्तार सेवाएं क्षेत्र भ्रमण, प्रदर्शनों, किसान बैठकों, प्रशिक्षण कार्यक्रमों और कृषि मेलों के माध्यम से प्रदान की जाती रही हैं। सरकारी विभागों और कृषि विश्वविद्यालयों के विस्तार कार्यकर्ता गांवों का दौरा करके किसानों को उन्नत बीजों, उर्वरकों, सिंचाई विधियों और कीट प्रबंधन तकनीकों के बारे में शिक्षित करते हैं। रेडियो और टेलीविजन कार्यक्रमों ने भी कृषि जानकारी के प्रसार में भूमिका निभाई है। यद्यपि इन पारंपरिक विस्तार विधियों ने कृषि विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, फिर भी इनकी कई सीमाएं हैं। भारत में 14 करोड़ से अधिक किसान हैं, लेकिन विस्तार कार्यकर्ताओं की संख्या सीमित है। परिणामस्वरूप, विस्तार अधिकारियों के लिए प्रत्येक किसान तक नियमित रूप से पहुंचना कठिन हो जाता है। दूरदराज और बिखरे हुए गांवों में रहने वाले किसान अक्सर विस्तार सेवाओं की पहुंच से बाहर रह जाते हैं। इसके अलावा, कृषि जानकारी अक्सर सही समय पर आवश्यक होती है, जैसे कीट आक्रमण या अत्यधिक मौसम की स्थिति के दौरान, और पारंपरिक विस्तार प्रणालियां कभी-कभी तत्काल सहायता प्रदान करने में असफल रहती हैं। हाल के वर्षों में, डिजिटल प्रौद्योगिकियों के तीव्र विकास ने कृषि विस्तार सेवाओं को बदलने के नए अवसर खोले हैं। स्मार्टफोन, इंटरनेट कनेक्टिविटी और डिजिटल प्लेटफॉर्म की बढ़ती उपलब्धता ने कृषि जानकारी को तेजी से और कुशलतापूर्वक पहुंचाना संभव बना दिया है। कृषि विस्तार सेवाओं के डिजिटलीकरण में मोबाइल एप्लिकेशन, वेबसाइट, ऑनलाइन सलाहकार प्रणाली, एसएमएस अलर्ट और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जैसी सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकियों का उपयोग शामिल है ताकि किसानों को कृषि जानकारी और सलाहकार सेवाएं प्रदान की जा सकें। डिजिटल उपकरणों के माध्यम से, किसान मौसम पूर्वानुमान, फसल प्रबंधन प्रथाओं, कीट एवं रोग नियंत्रण, उर्वरक सिफारिशों और बाजार मूल्यों के बारे में वास्तविक समय की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। भारत सरकार ने डिजिटल कृषि को बढ़ावा देने और विस्तार सेवाओं को मजबूत करने के लिए कई पहल की हैं। डिजिटल परिवर्तन का समर्थन करने वाला सबसे महत्वपूर्ण राष्ट्रीय कार्यक्रम डिजिटल इंडिया है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य डिजिटल बुनियादी ढांचे में सुधार करना, डिजिटल साक्षरता को बढ़ावा देना, और सरकारी सेवाओं को ऑनलाइन प्लेटफॉर्म के माध्यम से सुलभ बनाना है। इस पहल के तहत, कई कृषि सेवाएं डिजिटल माध्यमों से प्रदान की जा रही हैं, जिससे किसानों के लिए

महत्वपूर्ण जानकारी और सेवाओं तक पहुंचना आसान हो गया है।

एक अन्य महत्वपूर्ण पहल e-NAM है, जो देशभर के कृषि बाजारों को जोड़ने वाला एक ऑनलाइन व्यापार मंच है। इस प्लेटफॉर्म की शुरुआत से पहले, किसानों के पास अपनी उपज बेचने के सीमित विकल्प थे और वे अक्सर स्थानीय व्यापारियों पर निर्भर रहते थे। द्र-ह्रूके माध्यम से, किसान वास्तविक समय के बाजार मूल्यों की जांच कर सकते हैं और अपनी उपज विभिन्न राज्यों के खरीदारों को बेच सकते हैं, जिससे बेहतर पारदर्शिता और उचित मूल्य सुनिश्चित होते हैं। यह डिजिटल बाजार किसानों को उनकी सौदेबाजी की शक्ति बढ़ाने और बाजार पहुंच का विस्तार करने में मदद करता है। किसान कॉल सेंटर जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से डिजिटल सलाहकार सेवाओं को भी मजबूत किया जा रहा है। यह सेवा किसानों को टोल-फ्री नंबर के माध्यम से कृषि विशेषज्ञों से संपर्क करने और फसल खेती, कीट प्रबंधन, मृदा स्वास्थ्य और पशुधन देखभाल पर सलाह प्राप्त करने की सुविधा देती है। किसान अपनी स्थानीय भाषा में सीधे वैज्ञानिकों और विस्तार विशेषज्ञों से बात कर सकते हैं, जिससे यह सेवा अधिक सुलभ और उपयोगी बन जाती है। ऐसे डिजिटल संचार उपकरण किसानों को समस्याओं का शीघ्र समाधान करने और फसल नुकसान को कम करने में मदद करते हैं। मोबाइल प्रौद्योगिकी डिजिटल कृषि विस्तार के सबसे शक्तिशाली उपकरणों में से एक बन गई है। किसानों को कृषि जानकारी प्रदान करने के लिए कई मोबाइल एप्लिकेशन विकसित किए गए हैं। व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले एप्लिकेशनों में से एक किसान सुविधा है। यह एप्लिकेशन मौसम पूर्वानुमान, बाजार मूल्यों, पौध संरक्षण उपायों, इनपुट डीलरों और कृषि सलाह पर जानकारी प्रदान करता है। किसान अपने स्मार्टफोन पर आसानी से इस जानकारी तक पहुंच सकते हैं, जिससे वे फसल प्रबंधन और विपणन के संबंध में बेहतर निर्णय ले सकते हैं। डिजिटल कृषि विस्तार में रिमोट सेंसिंग, भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS), कृत्रिम बुद्धिमत्ता और डेटा एनालिटिक्स जैसी उन्नत प्रौद्योगिकियों का उपयोग भी शामिल है। ये प्रौद्योगिकियां फसल की स्थिति की निगरानी करने, कीट प्रकोप की भविष्यवाणी करने और मृदा स्वास्थ्य डेटा का विश्लेषण करने में मदद करती हैं। उदाहरण के लिए, उपग्रह चित्र सूखा प्रभावित क्षेत्रों की पहचान करने या फसल वृद्धि पैटर्न की निगरानी करने में मदद कर सकते हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता उपकरण बड़े डेटासेट का विश्लेषण कर सकते हैं और किसानों को फसल चयन, उर्वरक उपयोग और सिंचाई प्रबंधन के संबंध में व्यक्तिगत सिफारिशें प्रदान कर सकते हैं। ये नवाचार किसानों को संसाधन उपयोग को अनुकूलित करने और कृषि उत्पादकता में सुधार करने में मदद करते हैं। डिजिटल विस्तार सेवाओं का एक अन्य महत्वपूर्ण लाभ किसानों, शोधकर्ताओं और विस्तार कार्यकर्ताओं के बीच बेहतर संचार है। डिजिटल प्लेटफॉर्म ज्ञान प्रदाताओं और किसानों के बीच एक सेतु का निर्माण करते हैं। किसान रोगग्रस्त पौधों की तस्वीरें अपलोड कर सकते हैं और थोड़े समय में विशेषज्ञ सिफारिशें प्राप्त कर सकते हैं। वे ऑनलाइन चर्चा मंचों में भाग ले सकते हैं, प्रशिक्षण वीडियो देख सकते हैं, और आभासी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में शामिल हो सकते हैं। ये प्लेटफॉर्म विस्तार कार्यकर्ताओं को डिजिटल संदेशों और सलाह के माध्यम से एक साथ हजारों किसानों तक पहुंचने में भी सक्षम बनाते हैं। डिजिटल प्लेटफॉर्म कृषि विपणन और मूल्य श्रृंखला विकास में सुधार करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किसान ऑनलाइन प्लेटफॉर्म के माध्यम से व्यापारियों, इनपुट आपूर्तिकर्ताओं, प्रसंस्करणकर्ताओं और निर्यातकों से जुड़ सकते हैं। वे इनपुट उपलब्धता, ऋण सुविधाओं, फसल बीमा योजनाओं और सरकारी सब्सिडी के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। डिजिटल रिकॉर्ड प्रणालियां फार्म डेटा बनाए रखने, उत्पादन स्तरों को ट्रैक करने और सब्सिडी वितरण में पारदर्शिता सुनिश्चित करने में मदद कर सकती हैं। ऐसी प्रणालियां नीति निर्माताओं को बेहतर कृषि कार्यक्रम डिजाइन करने और सेवा वितरण में सुधार करने में मदद करती हैं।

डिजिटलीकरण जलवायु-स्मार्ट कृषि का भी समर्थन करता है। अप्रत्याशित वर्षा, बढ़ते तापमान और अत्यधिक मौसम की घटनाओं के कारण जलवायु परिवर्तन किसानों के लिए एक बड़ी चुनौती बन गया है। डिजिटल उपकरण मौसम परिवर्तनों के बारे में प्रारंभिक चेतावनी प्रदान कर सकते हैं।

01/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

बकरी प्रबंधन का महत्व एवं सामान्य देखभाल

✍डॉ. पंकज कुमार मौर्य
एसोसिएट प्रोफेसर (VPY)
✍डॉ. मोहम्मद इरफान
✍डॉ. आकर्ष त्यागी, डॉ. आनंद अवस्थी
✍डॉ. अनंदिता खर्ब
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय,
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

बकरी पालन कम लागत में अधिक लाभ देने वाला व्यवसाय है, इसलिए इसे "गरीब की गाय" कहा जाता है। इससे दूध, मांस, खाद और बच्चों की बिक्री से आय प्राप्त होती है। सफल पालन के लिए सही नस्ल का चयन, संतुलित आहार, स्वच्छ आवास, उचित प्रजनन, टीकाकरण, कृमिनाशन और रोग नियंत्रण आवश्यक हैं। खरीदते समय स्वस्थ, सक्रिय, अच्छी शारीरिक बनावट वाली बकरी तथा प्रजनन के लिए मजबूत, नस्लीय गुणों वाला बकरा चुनना चाहिए। शेड सूखा, साफ, हवादार और नमी रहित होना चाहिए। बच्चों, गर्भित तथा दुग्ध देने वाली बकरियों को अलग रखना बेहतर रहता है। स्वच्छ पानी हमेशा उपलब्ध कराएं तथा नियमित रूप से खुर काटना, सफाई, जूँ-किलनी नियंत्रण और नए पशुओं को 10-14 दिन क्वारंटीन में रखने के बाद ही झुंड में शामिल करें।

नवजात बच्चों का प्रबंधन और दूध पिलाना- बकरी के बच्चों की देखभाल जन्म के तुरंत बाद शुरू हो जाती है। सबसे पहले नाक और मुंह की सफाई कर बच्चे को सामान्य श्वास लेने में सहायता करनी चाहिए। यदि मां बच्चे को न चाटे, तो उसे साफ सूखे कपड़े से पोंछकर सुखाना चाहिए। नाभि को 3-4 सेमी दूरी पर बांधकर काटें और उस पर टिंचर आयोडीन लगाएं, जिससे संक्रमण से बचाव हो सके। जन्म के 30-60 मिनट के भीतर बच्चे को खीस (कोलोस्ट्रम) अवश्य पिलानी चाहिए, क्योंकि यह रोग प्रतिरोधक क्षमता और ऊर्जा का मुख्य स्रोत है। यदि बच्चा स्वयं दूध न पी सके, तो सहायता से या बोतल/निप्पल द्वारा दूध पिलाएं। पहले 3-4 दिनों तक केवल खीस और मां का दूध दें तथा थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बार-बार दूध पिलाएं। यदि मां का दूध पर्याप्त न हो, तो दूसरी स्वस्थ बकरी या आवश्यकता होने पर हल्का गुनगुना गाय का दूध दिया जा सकता है।

नवजात से 3 माह तक आहार प्रबंधन

आयु	आहार व्यवस्था
जन्म से 7 दिन	केवल खीस और मां का दूध, शरीर को गर्म और सूखा रखना
8–30 दिन	मां का दूध 2–3 बार, थोड़ी मात्रा में कोमल हरी पत्तियां और साफ पानी की आदत
1–2 माह	दूध के साथ 50–100 ग्राम क्रीप फीड, कोमल चारा और साफ पानी
2–3 माह	दूध धीरे–धीरे कम करें, क्रीप फीड 100–200 ग्राम, हरा चारा बढ़ाएं
3 माह	धीरे–धीरे दूध छुड़ाना, बच्चों को अलग आहार पर लाना

15 दिन की आयु से बच्चों को क्रीप फीड (अनाज, चोकर, खली, खनिज मिश्रण एवं नमक) तथा साफ पानी देना शुरू करना चाहिए। इससे उनकी वृद्धि तेज होती है। आहार हमेशा ताजा और फफूंद रहित होना चाहिए।

बच्चों को ठंड, नमी और तेज हवा से बचाकर सूखी एवं गर्म बिछावन में रखना चाहिए। यदि बच्चा दूध न पिए, सुस्त हो, दस्त, पेट फूलना या शरीर ठंडा होने जैसे लक्षण दिखें, तो तुरंत पशु चिकित्सक से संपर्क करना चाहिए।

बढ़ते बच्चों और वयस्क बकरियों का आहार प्रबंधन

* बकरी एक ब्राउज़र पशु है, जो घास के साथ झाड़ियों, पत्तियों और कोमल टहनियों को भी खाती है। अच्छे स्वास्थ्य एवं उत्पादन के लिए हरा चारा, सूखा चारा, दाना, खनिज मिश्रण, नमक और स्वच्छ पानी का संतुलित आहार आवश्यक है।
* 3 माह की आयु के बाद बच्चों को दूध छुड़ाकर प्रोटीन एवं ऊर्जा युक्त बढ़वार वाला आहार देना चाहिए, जिससे उनकी वृद्धि, समय पर प्रजनन और उत्पादन क्षमता अच्छी बनी रहे।

3 से 12 माह तक बच्चों का आहार

आयु	अनुमानित दाना	हरा चारा
3 माह	150 ग्राम	200 ग्राम
4 माह	200 ग्राम	250 ग्राम
5 माह	225 ग्राम	275 ग्राम
6 माह	250 ग्राम	300 ग्राम
7 माह	275 ग्राम	325 ग्राम
8 माह	300 ग्राम	350 ग्राम
9-12 माह	300 ग्राम	350 ग्राम या अधिक

वयस्क बकरी को प्रतिदिन शरीर के वजन का 3-4% सूखा पदार्थ चाहिए। सामान्यतः 25-30 किग्रा बकरी को 2-3 किग्रा हरा चारा, 0.5-1 किग्रा सूखा चारा और 100-200 ग्राम दाना दिया जा सकता है। दाने में अनाज, चोकर, खली, खनिज मिश्रण और नमक का संतुलित मिश्रण होना चाहिए। कैल्शियम, फॉस्फोरस, कॉपर, जिंक आदि खनिज तथा नमक नियमित देना आवश्यक है। बासी या फफूंदयुक्त चारा न दें और नया आहार 5-7 दिनों में धीरे-धीरे शुरू करें।

प्रजनन, गर्भित बकरी और प्रजनक बकरे का प्रबंधन

* सफल बकरी पालन के लिए उचित प्रजनन प्रबंधन आवश्यक है। बकरी सामान्यतः 8-12 माह की आयु में प्रजनन योग्य होती है, लेकिन पर्याप्त वजन और अच्छे स्वास्थ्य के बाद ही गाभिन कराना चाहिए।
* बकरी में मदकाल 18-21 दिन के अंतराल पर आता है। इसके प्रमुख लक्षण हैं–बेचैनी, बार-बार मिमियाना, पूंछ हिलाना, योनि से साफ श्लेष्मा निकलना तथा नर के प्रति आकर्षण। गर्मी आने के 12-18 घंटे बाद बकरा मिलाना सर्वोत्तम माना जाता है।
* एक स्वस्थ बकरा 25-30 बकरियों के लिए पर्याप्त होता है। प्रजनन से पहले उसे संतुलित आहार, खनिज मिश्रण और स्वच्छ पानी देना चाहिए तथा अधिक मोटा नहीं होने देना चाहिए।

गर्भित बकरी का प्रबंधन

* बकरी की गर्भावधि 145-150 दिन होती है। अंतिम 45 दिन सबसे महत्वपूर्ण होते हैं। इस अवधि में 250-350 ग्राम अतिरिक्त दाना, अच्छा हरा व सूखा चारा, खनिज मिश्रण और स्वच्छ पानी देना चाहिए।
* गर्भित बकरी को फिसलन, भीड़, तनाव और लंबी चराई से बचाकर अंतिम महीने में अलग, साफ एवं सूखे बाड़े में रखना चाहिए। प्रसव से 10-15 दिन पहले प्रसव स्थान तैयार कर लेना चाहिए।
* प्रसव के प्रमुख लक्षण हैं–थन फूलना, योनि से श्लेष्मा निकलना, बेचैनी और बार-बार उठना-बैठना। सामान्य प्रसव में हस्तक्षेप न करें, लेकिन कठिन प्रसव, बच्चे की गलत स्थिति या दुर्गंधयुक्त स्राव होने पर तुरंत पशु चिकित्सक से संपर्क करें।
* गर्भावस्था में बकरी को न अधिक मोटा और न ही कुपोषित होने दें, क्योंकि दोनों स्थितियाँ प्रसव और दूध उत्पादन को प्रभावित करती हैं।

दुग्ध देने वाली बकरियों का प्रबंधन और मौसम के अनुसार देखभाल

दुग्धावस्था- दूध देने वाली बकरी को सामान्य आहार के साथ 200-300 ग्राम दाना/लीटर दूध (अधिक उत्पादन पर 400-500 ग्राम), हरा व सूखा चारा, खनिज मिश्रण तथा पर्याप्त स्वच्छ पानी देना चाहिए। दूध निकालते समय थन की सफाई रखें और थनैला के लक्षण दिखने पर तुरंत पशु चिकित्सक से संपर्क करें।

मौसमी प्रबंधन-

गर्मी: छाया, हवादार शेड, स्वच्छ पानी और सुबह-शाम चराई करें।

वर्षा: शेड सूखा रखें, नमी व कीचड़ से बचाएँ, समय पर टीकाकरण एवं कृमिनाशन करें।

सर्दी: सूखी बिछावन, ठंड से सुरक्षा, धूप तथा ऊर्जा युक्त आहार दें।

टीकाकरण, रोग रोकथाम और कृमिनाशन

स्वच्छ आवास, संतुलित आहार, साफ पानी, बीमार पशुओं को अलग रखना, नियमित टीकाकरण और कृमिनाशन बकरी पालन में रोगों की रोकथाम के सबसे प्रभावी उपाय हैं।

महत्वपूर्ण टीकाकरण कार्यक्रम

रोग	पहला टीका	दोबारा टीकाकरण
पी.पी.आर.	3–6 माह की आयु में	लगभग 3 वर्ष बाद या स्थानीय सलाह अनुसार
खुरपका–मुंहपका	3–4 माह की आयु से	प्रत्येक 6 माह पर
एंटेरोटॉक्सिमिया	3–6 माह की आयु में	वर्षा ऋतु से पहले, सामान्यतः साल में एक बार
गलघोंटू	3–6 माह की आयु में	वर्षा ऋतु से पहले सालाना
बकरी चेचक	3–5 माह की आयु में	सालाना या स्थानीय पशु चिकित्सक की सलाह अनुसार
एंथ्रेक्स	रोगग्रस्त क्षेत्र में	सालाना, सरकारी सलाह अनुसार

टीकाकरण केवल स्वस्थ बकरियों को कराना चाहिए। बीमार, बुखार या दस्त से ग्रस्त पशुओं को टीका न लगाएं। टीका शीत श्रृंखला (Cold chain) में सुरक्षित हो तथा प्रशिक्षित व्यक्ति/पशु चिकित्सक द्वारा लगाया जाए। गर्भित बकरियों में टीकाकरण पशु चिकित्सक की सलाह से ही करें।

कृमिनाशन कार्यक्रम- आंतरिक परजीवी बकरियों में वजन कम होना, दस्त, खून की कमी, बाल रूखे होना, दूध कम होना, बच्चों की धीमी वृद्धि और मृत्यु तक का कारण बन सकते हैं। इसलिए नियमित कृमिनाशन बहुत जरूरी है।

अवस्था	कृमिनाशन
बच्चे	1–1.5 माह की आयु से पशु चिकित्सक की सलाह अनुसार शुरू करें
बढ़ते बच्चे	हर 2–3 माह पर, विशेषकर वर्षा ऋतु में
वयस्क बकरियां	साल में 3 बार—वर्षा से पहले, वर्षा के बाद और सर्दी में
गर्भित बकरी	प्रसव से 2–3 सप्ताह पहले सुरक्षित दवा से, पशु चिकित्सक की सलाह से
नया खरीदा पशु	झुंड में मिलाने से पहले कृमिनाशन और अलग निगरानी

कृमिनाशक दवा शरीर के वजन के अनुसार दें। एक ही दवा का बार-बार प्रयोग न करें तथा गर्भित, कमजोर या दुग्ध देने वाली बकरियों में दवा पशु चिकित्सक की सलाह से दें।

बाह्य परजीवी नियंत्रण: जूँ, किलनी और खुजली से बचाव हेतु शेड की नियमित सफाई तथा उचित कीटनाशक का प्रयोग करें। दवा का उपयोग बच्चों, गर्भित और दुग्ध देने वाली बकरियों में सावधानी से करें।

दैनिक प्रबंधन कैलेंडर और आवश्यक सावधानियां- बकरी पालन में सफलता नियमित दिनचर्या से मिलती है। पशु को प्रतिदिन ध्यान से देखना चाहिए। जो बकरी अलग खड़ी है, चारा नहीं खा रही, सुस्त है, दस्त कर रही है, लंगड़ा रही है, खांस रही है या अधिक मिमिया रही है, उसे तुरंत अलग करके जांच करनी चाहिए।

दैनिक कार्य: प्रतिदिन बकरियों का स्वास्थ्य निरीक्षण करें। शेड की सफाई, स्वच्छ पानी, संतुलित आहार, समय पर दाना, दूध दुहना तथा बीमार पशुओं को अलग रखें।

साप्ताहिक/मासिक प्रबंधन: सप्ताह में एक बार शेड की गहरी सफाई, खुर व शरीर की जांच करें। हर माह शरीर की स्थिति एवं प्रजनन रिकॉर्ड (मदकाल, मिलान, गर्भ, प्रसव) अपडेट करें।

मुख्य सावधानियां: बासी चारा, गंदा पानी और अचानक आहार परिवर्तन से बचें। नए पशुओं को क्वारंटीन में रखें, बीमार पशुओं को अलग करें तथा समय पर टीकाकरण और कृमिनाशन कराएँ।

सफल बकरी पालन का सूत्र: स्वच्छ शेड + संतुलित आहार + स्वच्छ पानी + उचित प्रजनन + बच्चों की देखभाल + नियमित टीकाकरण/कृमिनाशन + रिकॉर्ड प्रबंधन = अधिक उत्पादन और लाभ।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

भारत में जल संकट की वर्तमान स्थिति

✍अभिषेक सिंह, शिवम कुमार पाठक
सस्य विज्ञान विभाग, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

✍डॉ. ललित कुमार सनोदिया

✍डॉ अखिलेश कुमार सिंह सहायक प्रोफेसर, कृषि संकाय, प्रो. राजेंद्र सिंह (रज्जू भैया) विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

प्रस्तावना

भारत विश्व के उन देशों में शामिल है जहाँ कृषि अर्थव्यवस्था की रीढ़ मानी जाती है। देश की लगभग आधी से अधिक आबादी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। कृषि उत्पादन का प्रमुख आधार जल है, क्योंकि बिना पर्याप्त जल के फसलों का उत्पादन संभव नहीं है। लेकिन वर्तमान समय में भारत गंभीर जल संकट का सामना कर रहा है। बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, भूजल का अत्यधिक दोहन, जलवायु परिवर्तन तथा जल संसाधनों के असंतुलित उपयोग ने इस संकट को और अधिक गहरा बना दिया है। जल संकट केवल पानी की उपलब्धता तक सीमित नहीं है, बल्कि यह कृषि उत्पादन, खाद्य सुरक्षा, किसानों की आय, ग्रामीण विकास और देश की आर्थिक प्रगति को भी प्रभावित कर रहा है।

भारत में जल संसाधनों की स्थिति

भारत विश्व की लगभग 18 प्रतिशत जनसंख्या का घर है, जबकि उसके पास विश्व के लगभग 4 प्रतिशत मीठे जल संसाधन ही उपलब्ध हैं। यही कारण है कि देश में जल संसाधनों पर लगातार दबाव बढ़ रहा है। भारत में वर्षा का मुख्य स्रोत दक्षिण-पश्चिम मानसून है, जिससे वर्षभर होने वाली कुल वर्षा का लगभग 75ड्ड80 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। लेकिन वर्षा का वितरण पूरे देश में समान नहीं है। कुछ क्षेत्रों में अत्यधिक वर्षा होती है, जबकि कई क्षेत्रों में वर्षा सामान्य से बहुत कम होती है।

कृषि क्षेत्र में जल संकट की वर्तमान स्थिति

भारत की लगभग आधी कृषि भूमि आज भी वर्षा आधारित है। ऐसे क्षेत्रों में मानसून की अनिश्चितता सीधे कृषि उत्पादन को प्रभावित करती है। यदि वर्षा समय पर नहीं होती या सामान्य से कम होती है, तो किसानों की फसलें प्रभावित होती हैं और उत्पादन घट जाता है कई स्थानों पर भूजल का स्तर इतना नीचे पहुँच चुका है कि किसानो को अधिक गहराई तक बोरिंग करनी पड़ती है, जिससे सिंचाई की लागत बढ़ जाती है। छोटे और सीमांत किसानों के लिए यह आर्थिक रूप से बड़ी चुनौती बन जाती है।

जल संकट के प्रमुख कारण

1. **भूजल का अत्यधिक दोहन**

भारत में सिंचाई के लिए सबसे अधिक उपयोग भूजल का होता है। आधुनिक बोरवेल और ट्यूबवेल के माध्यम से लगातार जल निकाला जा रहा है, जबकि भूजल पुनर्भरण की गति बहुत धीमी है। इससे अनेक क्षेत्रों में जल स्तर लगातार गिर रहा है।

2. **अनियमित मानसून**

जलवायु परिवर्तन के कारण मानसून का स्वरूप बदल रहा है। कहीं अत्यधिक वर्षा होती है तो कहीं लंबे समय तक सूखा पड़ता है। इससे कृषि उत्पादन में अनिश्चितता बढ़ती जा रही है।

3. **जलवायु परिवर्तन**

बढ़ते तापमान, हीटवेव, सूखा और बाढ़ जैसी घटनाओं की आवृत्ति बढ़ने से जल संसाधनों पर अतिरिक्त दबाव पड़ रहा है। इससे सिंचाई की आवश्यकता बढ़ती है जबकि जल की उपलब्धता घटती जाती है।

4. **पारंपरिक सिंचाई पद्धतियाँ**

देश के अनेक क्षेत्रों में अभी भी बाढ़ सिंचाई (Flood Irrigation) का उपयोग किया जाता है, जिसमें पानी की बड़ी मात्रा व्यर्थ चली जाती है। जल उपयोग की दक्षता कम होने के कारण जल संकट और बढ़ जाता है।

5. **अधिक पानी वाली फसलों की खेती**

धान, गन्ना और कुछ अन्य फसलें अधिक पानी की मांग करती हैं। इन फसलों की खेती ऐसे क्षेत्रों में भी की जाती है जहाँ जल संसाधन सीमित हैं। इससे भूजल पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है।

6. **वर्षा जल संचयन की कमी**

भारत में वर्षा का अधिकांश जल बिना संग्रहण के बह जाता है। यदि इस जल का संरक्षण किया जाए तो सिंचाई और पेयजल दोनों की उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है।

7. **बढ़ती जनसंख्या और शहरीकरण**

जनसंख्या वृद्धि के कारण घरेलू, औद्योगिक और कृषि क्षेत्रों में जल की मांग लगातार बढ़ रही है। इससे उपलब्ध जल संसाधनों पर दबाव बढ़ता जा रहा है।

कृषि पर जल संकट का प्रभाव

* जल संकट का सबसे अधिक प्रभाव कृषि क्षेत्र पर पड़ता है।
* फसल उत्पादन में कमी आती है।
* किसानों की आय घट जाती है।
* सिंचाई की लागत बढ़ जाती है।
* खेती का जोखिम बढ़ जाता है।
* ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी और पलायन बढ़ सकता है।
* पशुपालन भी प्रभावित होता है क्योंकि पशुओं के लिए पानी और चारे की कमी हो जाती है।

प्रभावित क्षेत्र

देश के कई राज्यों में जल संकट गंभीर रूप ले चुका है।

* **पंजाब और हरियाणा** - भूजल का अत्यधिक दोहन।
* **राजस्थान** - कम वर्षा और मरुस्थलीय क्षेत्र।
* **महाराष्ट्र** - बार-बार सूखे की स्थिति।
* **कर्नाटक और तमिलनाडु** - वर्षा की अनिश्चितता और भूजल संकट।
* **बुंदेलखंड (उत्तर प्रदेश-मध्य प्रदेश)** - लगातार सूखा और सीमित जल संसाधन।
* **गुजरात के कुछ भाग** - भूजल स्तर में लगातार गिरावट।

भविष्य की चुनौतियाँ

यदि वर्तमान स्थिति में सुधार नहीं हुआ तो भविष्य में कृषि के लिए पर्याप्त जल उपलब्ध कराना कठिन हो सकता है। बढ़ती जनसंख्या के कारण खाद्यान्न की मांग बढ़ेगी, लेकिन जल की कमी उत्पादन क्षमता को प्रभावित कर सकती है। इससे खाद्य सुरक्षा, किसानों की आय और ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर गंभीर प्रभाव पड़ सकता है।

निष्कर्ष

भारत में जल संकट की वर्तमान स्थिति अत्यंत गंभीर है और इसका सबसे अधिक प्रभाव कृषि क्षेत्र पर दिखाई देता है। भूजल का लगातार घटता स्तर, अनियमित मानसून, जलवायु परिवर्तन, पारंपरिक सिंचाई पद्धतियाँ तथा जल संरक्षण की कमी इस समस्या के प्रमुख कारण हैं। इस चुनौती का समाधान केवल नए जल स्रोत खोजने में नहीं, बल्कि उपलब्ध जल का वैज्ञानिक, संतुलित और कुशल उपयोग करने में है।

जैन बीज भण्डार
एवं पशु आहार
मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल: 9977638510

04/2025-26

शिमला मिर्च में एकीकृत कीट एवं रोग प्रबंधन

✍ **नीतू चौधरी** विद्यावाचस्पति, कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानन्द राजस्थान, कृषि महाविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

शिमला मिर्च पॉलीहाउस में अपेक्षाकृत लंबी अवधि (9-10 महीने) की फसल है, इसलिए पौधे के हिस्से (वनस्पति, पुष्प और फल) उपज, गुणवत्ता और उत्पाद के बाजार मूल्य पर प्रतिकूल प्रभाव के लिए अधिक उजागर होते हैं। इसलिए फसल के सही चरण में उनकी पहचान और प्रबंधन को महत्व दिया जाना चाहिए। शिमला मिर्च में प्रमुख कीट और रोग, उनके लक्षण और उनका प्रबंधन नीचे दिया गया है। कीटों और रोगों के प्रबंधन में एकीकृत दृष्टिकोण अपनाने पर मुख्य ध्यान दिया गया है, जो कीटनाशक भार, रसायनों की लागत को कम करने और कीटों और रोगों के पुनरुत्थान से बचने में मदद करता है।

कीट और प्रबंधन

थ्रिप्स

लक्षण: थ्रिप्स पत्तियों को ऊपर की ओर मोड़ते हैं, रस चूसते हैं और पत्तियों की वृद्धि, पौधों की वृद्धि, उपज और उपज के बाजार मूल्य को कम करते हैं। यह पत्तियों के क्षेत्र को भी कम करता है और पौधों द्वारा पोषक तत्वों और पानी के अवशोषण में बाधा डालता है। अधिक संक्रमण के कारण पत्तियां काली पड़ जाती हैं और सूख जाती हैं और फल अनियमित हो जाते हैं।

प्रबंध: पत्तियों, फूलों और फलों सहित प्रभावित पौधों के हिस्सों को हटा दें। गिरे हुए सभी पौधों के हिस्सों को हटाकर भूखंड को साफ रखें। पोंगामिया तेल (5-8 मिली/ली) या नीम के बीज की गिरी का अर्क (NSKE 4%) या IIHR द्वारा विकसित पोंगामिया/नीम साबुन (7 ग्राम/ली) या फ़िप्रोनिल (1 मिली/ली) या क्लोरोपायरीफॉस (2 मिली/ली) या एसीफ़ेट (1.5 ग्राम/ली) या इमिडाक्लोप्रिड (0.5 मिली/ली) का छिड़काव करें। क्लोरोपायरीफ़ॉस (4 मिली/ली) या इमिडाक्लोप्रिड (0.5 मिली/ली) का उपयोग करके मिट्टी को गीला करें।

माइट्स

लक्षण: युवा लार्वा और वयस्क पत्तियों, कलियों और फलों को खाते हैं, पौधे के हिस्सों से रस चूसते हैं जिससे पत्तियाँ नीचे की ओर मुड़ जाती हैं। पत्ती, फल और पौधों का आकार छोटा हो जाता है, फल और फूल झड़ जाते हैं जिससे उपज का बाजार मूल्य प्रभावित होता है। उच्च आर्द्रता के साथ बढ़ते तापमान के साथ इस कीट का संक्रमण बढ़ता है।

प्रबंध: पत्तियों, फूलों और फलों सहित कीटों से क्षतिग्रस्त पौधों के हिस्सों को हटा दें और पोंगामिया तेल (5-8 मिली/ली) या पोंगामिया/नीम साबुन (8-10 ग्राम/ली) या डाइकोफोल (2 मिली/ली) या वेटेबल सल्फर (2 मिली/ली) या एबामेक्टिन (0.5 मिली/ली) या इकोमाइट या प्रोपार्गाइट या क्लोरोफेनापायर (1 मिली/ली) या फेनाजाक्विन (1 मिली/ली) का छिड़काव करें।

एफिड्स

लक्षण: निम्फ और वयस्क एफिड्स पत्ती की शिराओं और नई पत्तियों से रस चूसते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पौधे की वृद्धि कम हो जाती है और उपज में कमी आती है। इसके संक्रमण से न केवल पत्तियां मुड़ जाती हैं, बल्कि वायरल रोग भी फैलते हैं।

प्रबंध: एफिड्स के संक्रमण के लिए नियमित अंतराल पर पौधों पर कड़ी नज़र रखें। पोंगामिया / नीम साबुन (8-10 ग्राम/ली) या इमिडाक्लोप्रिड (0.5 मिली/ली) या थियोमेथोक्साम (0.5 ग्राम/ली) या डाइमेथोएट (2 मिली/ली) का छिड़काव करें।

फल छेदक

लक्षण: फल छेदक कीट रात के समय बहुत सक्रिय होते हैं। वयस्क कीट बड़ी संख्या में फलों, फूलों और पत्तियों पर अंडे देते हैं और अंडों से निकलने वाले शिशु फलों और पत्तियों को खाते हैं, जिससे फसलों को भारी नुकसान होता है और उपज की गुणवत्ता पर बुरा असर पड़ता है। जब भी रात का तापमान कम होता है, ठंड और उच्च आर्द्रता के साथ संक्रमण बढ़ जाता है। चूंकि अंडे समूह में दिए जाते हैं, इसलिए लार्वा भी एक स्थान पर पत्तियों पर झुंड बनाकर भोजन करता है, जिसे आसानी से पहचाना और नष्ट किया जा सकता है।

प्रबंध: नवजात और वयस्क कीटों को उठाकर नष्ट कर दें। आम तौर पर, अंडे समूहों में रखे जाते हैं और उनमें से बच्चे निकलते हैं, जिन्हें दूर से पहचानना आसान होता है। इसलिए, उन्हें तुरंत पहचान कर नष्ट कर देना चाहिए। थायोडिकार्ब (1 मिली/ली) या कार्बारिल (3 ग्राम/ली) या इंडोक्सकार्ब (1 मिली/ली) या राइनैक्सीपायर (0.5 मिली/ली) या क्लोरोफेनफर (1.5 मिली/ली) या फिप्रोनिल (1 मिली/ली) का छिड़काव करें। छिड़काव के अलावा, वयस्क वयस्कों को मेथोमाइल बैटिंग के अधीन किया जाना चाहिए, जो एक सुरक्षित, स्वस्थ और प्रभावी अभ्यास है।

मेथोमाइल बैटिंग प्रक्रिया: 10 किलो धान की भूसी और 1 किलो गुड़ का घोल तैयार करें और 6-8 घंटे के लिए स्टोर करें। मिश्रण में ड्र किलो मेथोमिल मिलाएं। मिश्रण की छोटी-छोटी गोलियां बनाई जाती हैं जिन्हें पौधों की जड़ के पास और पॉली हाउस/नेट हाउस के आसपास फैलाया जाता है ताकि फल छेदक के संक्रमण से बचा जा सके। इसे रात के समय लगाया जाना चाहिए और घरेलू या पालतू जानवरों को रात भर नेट/पॉलीहाउस के अंदर और आसपास घूमने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

1. नेमाटोड

लक्षण: सोलेनेसियस फसलों में निमेटोड आमतौर पर तब देखे जाते हैं जब उन्हें एक ही खेत में लगातार 3-4 बार उगाया जाता है। शुरुआत में पत्तियों का पीलापन देखा जा सकता है, उसके बाद पत्तियों के आकार, संख्या में कमी और फलों के आकार में 15 प्रतिशत की भारी कमी देखी जा सकती है। जब संक्रमित पौधे को उखाड़कर देखा जाता है, तो संक्रमण के स्तर के आधार पर जड़ों पर बड़ी संख्या में निमेटोड नोड्यूल से भरी छोटी और बड़ी गाठें देखी जा सकती हैं।

प्रबंध: नेमाटोड से बचने के लिए गेंदा, स्वीट कॉर्न और गोभी जैसी गैर-सोलेनेसियस फसलों के साथ फसल चक्र अपनाएँ। जैव-कीटनाशकों से समृद्ध नीम केक (जैसा कि पहले बताया गया है) को क्यारियों में रोपाई से 4-5 दिन पहले 800 किलोग्राम/एकड़ की दर से डालना चाहिए। रोपण के समय कार्बोफ्यूरान (फ्यूराडान) कणिकाओं को 20 किलोग्राम/एकड़ की दर से डालें। पौधों पर नेमाटोड संक्रमण पर कड़ी नज़र रखें, खासकर दूसरी और तीसरी फसल में। छिड़काव करते समय कीटनाशकों को हमेशा स्प्रेडर या स्टिकर के साथ मिलाना चाहिए। बेहतर परिणाम के लिए पौधों को ऊपर से नीचे तक स्प्रे के संपर्क में आना चाहिए और छिड़काव करते समय पूरे शरीर को पूरे कपड़े, मास्क, दस्ताने और एप्रन से ढकने का ध्यान रखना चाहिए।

रोग और प्रबंधन

डम्पिंग ऑफ

लक्षण: संक्रमण युवा पौधों के आधार पर ज़मीन की सतह से ठीक ऊपर होता है, जिससे पौधे मुरझा जाते हैं और बाद में उनकी मृत्यु हो जाती है। रोपाई के दौरान पौधों को होने वाले किसी भी नुकसान से मुख्य खेत में नए संक्रमण या नर्सरी से आने वाले संक्रमण के अलावा डैम्पिंग ऑफ या पौध मुरझाने की समस्या भी हो सकती है।

प्रबंध: कार्बेन्डाजिम (1 ग्राम/ली) या मेटालैक्सिल एमजेड (2 ग्राम/ली) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम/ली) या कैप्टान (3 ग्राम/ली) को लगभग 25-50 मिली/पौधा की दर से पौधे के आधार तक डालें।

पाउडरी फफूंद

लक्षण: यह रोग शुरू में पत्ती की सतह पर छोटे पीले धब्बों और निचली सतह पर पाउडर जैसी सामग्री के रूप में दिखाई देता है, जिससे पत्ती की पूरी निचली सतह पर पाउडर जैसी वृद्धि हो जाती है, जिससे बाद में पत्तियां सूख जाती हैं और गिर जाती हैं। यह रोग पत्तियों और फलों की वृद्धि को कम कर देता है, जिससे उपज की गुणवत्ता और मात्रा कम हो जाती है।

प्रबंध: पोंगामिया/नीम तेल (7 मि.ली./ली.) + सल्फर डब्ल्यूडीजी-80 (2 ग्राम/ली.) या वेटेबल सल्फर (2 ग्राम/ली.) या हेक्साकोनाजोल (0.5 मि.ली./ली.) या माइक्लोबुटानिल (1 ग्राम/ली.) या डाइनोकैप (1 मि.ली./ली.) या एज़ोक्सीस्ट्रोबिन (0.5 मि.ली./ली.) या पेनकोनाजोल (0.5 मि.ली./ली.) या फ्लूसिलाजोल (0.5 मि.ली./ली.) का छिड़काव करें।

सर्कोस्पोरा लीफ स्पॉट

लक्षण: सर्कोस्पोरा प्रारम्भ में पत्ती की सतह पर छोटे पीले धब्बे के रूप में दिखाई देता है, जो बाद में गहरे भूरे रंग के धब्बों में बदल जाता है, जो पूरे पत्ते पर फैल जाता है, जिसके परिणामस्वरूप पत्ती गिर जाती है।

प्रबंध: क्लोरोथैलोनिल (2.5 ग्राम/ली) या मेन्कोजेब (2.5 ग्राम/ली) या कार्बेन्डाजिम (1 ग्राम/ली) का छिड़काव करें

फाइटोप्थेरा

लक्षण: यह रोग फलने और फूलने की अवस्था के दौरान दिखाई देता है, जिसके परिणामस्वरूप पत्ती की सतह पर छोटे तेल जैसे धब्बे बन जाते हैं, जिससे पौधे सड़ जाते हैं और काले पड़ जाते हैं। बाद में पौधे कमजोर हो जाते हैं और 2-3 दिनों में मर जाते हैं। भारी और लगातार बारिश के साथ उच्च आर्द्रता 18 रोग की उपस्थिति और इसके तेजी से फैलने में सहायक होती है। फाइटोप्थेरा रोग नेट हाउस में अपेक्षाकृत अधिक गंभीर होता है, जिससे 40-80 प्रतिशत फसल को नुकसान हो सकता है।

प्रबंध: कॉपर हाइड्रोक्सी क्लोराइड (3 ग्राम/लीटर) या बोर्डो मिश्रण (1%) या मेटालैक्सिल एमजेड (2 ग्राम/लीटर) या डाइमेथोमॉर्फ + मैन्कोजेब (1 ग्राम + 2.5 ग्राम/लीटर) या फोसेटाइल एल्युमीनियम (2 ग्राम/लीटर) या एज़ोक्सीस्ट्रोबिन (0.5 मिली/लीटर) का छिड़काव करें। गंभीर रूप से संक्रमित पौधों के हिस्सों को नष्ट कर देना चाहिए। गंभीर रूप से प्रभावित नेट-हाउस में शिमला मिर्च की खेती से बचना बेहतर है।

वायरल रोग

लक्षण: विषाणु जनित रोग एफिड्स और थ्रिप्स के माध्यम से फैलते हैं, जिससे पत्तियों के बीच में पीले धब्बे के साथ-साथ ऊपर और नीचे की ओर मुड़ने लगते हैं और कभी-कभी फलों पर भी। भारी संक्रमण के कारण पत्तियां गिर जाती हैं, पौधे की वृद्धि रुक जाती है और फलों की गुणवत्ता और मात्रा कम हो जाती है। विषाणु से प्रभावित फल बिक्री योग्य नहीं होते।

प्रबंध: नायलॉन कवर (50 जाल) के नीचे नर्सरी बेड उगाएं, एफिड्स, माइट्स और थ्रिप्स का उचित प्रबंधन करें जो रोग संचारित करने वाले वैक्टर के रूप में कार्य करते हैं और रोगग्रस्त/संक्रमित पौधों का निपटान, वायरल रोगों के संक्रमण को नियंत्रित करें।

✍ **श्री खेता राम** सहायक आचार्य (वृक्षायुर्वेद)
✍ **प्रो. सुमित नथानी** विभागाध्यक्ष,वृक्षायुर्वेद विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान,जयपुर (मानद वि.वि.)

वृक्षायुर्वेद श्रृंखला-उपवनक्रिया: वृक्षायुर्वेद में उपवन निर्माण एवं प्राकृतिक जल संरक्षण:- प्राचीन ज्ञान से आधुनिक कृषि की ओर

"यदि खेत हरा-भरा है, जल स्वच्छ है और प्रकृति संतुलित है, तभी किसान समृद्ध है।"

भारत की कृषि परंपरा केवल अन्न उत्पादन तक सीमित नहीं रही, बल्कि प्रकृति के साथ संतुलित जीवन जीने की कला भी सिखाती है। हजारों वर्ष पूर्व रचित वृक्षायुर्वेद में ऐसे अनेक सिद्धांत मिलते हैं जो आज के प्राकृतिक खेती, जल संरक्षण और सतत कृषि (Sustainable Agriculture) के लिए अत्यंत उपयोगी हैं। उपवन निर्माण, जलाशयों की स्थापना तथा प्राकृतिक जल शोधन का वर्णन इसका उत्कृष्ट उदाहरण है।

उपवन: केवल बगीचा नहीं, प्रकृति का जीवंत विद्यालय-वृक्षायुर्वेद में उपवन को ऐसा स्थान माना गया है जहाँ वृक्ष, लताएँ, पुष्प, पक्षी, जल और मनुष्य एक-दूसरे के पूरक बनकर रहते हैं। यह केवल सौंदर्य का प्रतीक नहीं, बल्कि पर्यावरण संरक्षण, जैव विविधता और मानसिक स्वास्थ्य का भी आधार है।

लतागृह: प्राकृतिक शीतलता का अद्भुत उदाहरण-लताओं से निर्मित लतागृह (Pergola) गर्मी के मौसम में प्राकृतिक ठंडक प्रदान करता है। चमेली जैसी सुगंधित लताएँ वातावरण को सुगंधित बनाती हैं, मधुमक्खियों एवं परागण करने वाले कीटों को आकर्षित करती हैं और जैव विविधता को बढ़ावा देती हैं।

क्रीड़ापर्वत: प्रकृति और मनोरंजन का संगम-वृक्षायुर्वेद में कृत्रिम चट्टानों, गुफाओं, हरित कुटियों और लताओं से युक्त क्रीड़ापर्वत का वर्णन मिलता है। यहाँ मोरों की उपस्थिति को विशेष महत्व दिया गया है, क्योंकि वे प्राकृतिक रूप से साँपों की संख्या को नियंत्रित करने में सहायक माने जाते हैं।

जलाशय: जल संरक्षण का प्राचीन मॉडल-पुष्करिणी, सरोवर और तड़ाग केवल जल संग्रहण के साधन नहीं थे, बल्कि भूजल संरक्षण, सूक्ष्म जलवायु निर्माण और जैव विविधता के केंद्र भी थे। इनके किनारों पर वृक्षारोपण तथा कमल, कुमुद और नीलोत्पल जैसे जलीय पौधों का रोपण जल की गुणवत्ता और सौंदर्य दोनों को बढ़ाता था।

प्राकृतिक जल शोधन की वैज्ञानिक विधि -वृक्षायुर्वेद में मुस्ता, उशीर, नागकेसर, आमलकी और कटक फल जैसी औषधीय वनस्पतियों से जल शोधन का उल्लेख मिलता है। आधुनिक वैज्ञानिक अध्ययनों में भी इनमें से कई पौधों के जल शुद्धिकरण एवं रोगाणुरोधी गुणों की पुष्टि हुई है। यह दर्शाता है कि हमारे ऋषियों को जल की गुणवत्ता के महत्व का गहरा ज्ञान था।

आज के किसान क्या सीख सकते हैं? -यदि किसान अपने खेतों में छोटे तालाब, मेड़बंदी, छायादार वृक्ष, औषधीय पौधे और जैव विविधता को बढ़ावा दें, तो इससे- * वर्षा जल का संरक्षण होगा। * भूजल स्तर में सुधार होगा। * परागण करने वाले कीटों की संख्या बढ़ेगी। * पक्षियों एवं लाभकारी जीवों का संरक्षण होगा। * खेत का तापमान नियंत्रित रहेगा। * उत्पादन की स्थिरता एवं गुणवत्ता में सुधार होगा।

समय की आवश्यकता

जलवायु परिवर्तन और घटते जल संसाधनों के इस दौर में वृक्षायुर्वेद का ज्ञान केवल ऐतिहासिक धरोहर नहीं, बल्कि भविष्य की टिकाऊ कृषि का मार्गदर्शक है। आधुनिक विज्ञान और प्राचीन भारतीय ज्ञान का समन्वय ही किसानों की समृद्धि तथा पर्यावरण संरक्षण का सशक्त आधार बन सकता है।

निष्कर्ष

प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करना ही वृक्षायुर्वेद का मूल संदेश है। यदि प्रत्येक किसान अपने खेत को केवल उत्पादन का साधन नहीं, बल्कि एक "जीवंत उपवन" के रूप में विकसित करे, तो कृषि अधिक लाभकारी, पर्यावरण-अनुकूल और आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित बन सकती है।

"वृक्ष बचेंगे, जल बचेगा; जल बचेगा, तो भविष्य सुरक्षित रहेगा।"

उपवनक्रिया :-केवल बगीचा नहीं, प्रकृति का जीवंत विद्यालय

12/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

जितेंद्र कुमार शर्मा
हर्ष वर्धन सिंह शेखावत
विजय कमल मीना, लेखा
नीशु जोशी एवं सौरभ जोशी कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर (राजस्थान)

मिर्च में लगने वाले प्रमुख रोग एवं उनका समेकित प्रबंधन

भूमिका

मिर्च (Capsicum annuum L) भारत की एक महत्वपूर्ण मसाला एवं सब्जी फसल है। इसका उपयोग हरी एवं सूखी दोनों अवस्थाओं में किया जाता है। भारत विश्व के प्रमुख मिर्च उत्पादक देशों में शामिल है तथा राजस्थान, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, कर्नाटक, मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र इसके प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। मिर्च की अच्छी गुणवत्ता एवं अधिक उत्पादन प्राप्त करने में विभिन्न रोग सबसे बड़ी बाधा हैं। यदि इन रोगों की समय पर पहचान एवं समेकित प्रबंधन नहीं किया जाए तो 30-80 प्रतिशत तक उपज की हानि हो सकती है। अतः किसानों के लिए आवश्यक है कि वे रोगों की पहचान कर समय पर उचित प्रबंधन अपनाएं।

1. आर्द्र गलन 'Damping off'-यह रोग मुख्यतः पौधशाला में दिखाई देता है तथा Pythium, Rhizoctonia एवं Fusarium जैसे कवकों द्वारा होता है।

प्रमुख लक्षण

* बीज अंकुरित होने से पहले ही सड़ जाते हैं।
* नवजात पौधे भूमि सतह से गलकर गिर जाते हैं।
* पौधशाला में स्थान-स्थान पर पौधों के खाली धब्बे दिखाई देते हैं।

प्रबंधन

* रोगमुक्त एवं प्रमाणित बीज का प्रयोग करें।
* बीजोपचार कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम अथवा थायरम ़ कार्बेन्डाजिम 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज से करें।
* ट्राइकोडर्मा विरिडे 10 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज का उपचार लाभकारी है।
* पौधशाला में जल निकास की उचित व्यवस्था रखें।
* रोग दिखाई देने पर मेटालेक्सिल ़ मैंकोजेब का घोल बनाकर ड्रेंचिंग करें।

2. मुरझान 'Fusarium Wilt'

यह रोग Fusarium oxysporum f.sp. capsici नामक कवक द्वारा होता है।

प्रमुख लक्षण * पौधों की निचली पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं। * धीरे-धीरे पूरा पौधा मुरझा जाता है।

* तने को काटने पर संवहनी ऊतक भूरे दिखाई देते हैं।

प्रबंधन * फसल चक्र अपनाएं। * रोगग्रस्त पौधों को निकालकर नष्ट करें। * ट्राइकोडर्मा युक्त जैव एजेंट का प्रयोग करें। * खेत में जलभराव न होने दें। * आवश्यकतानुसार कार्बेन्डाजिम का प्रयोग करें।

3. एन्थ्रेक्नोज एवं फल सड़न यह रोग Colletotrichum spp. द्वारा होता है तथा पकने वाले फलों में अधिक दिखाई देता है।

मिर्च का एन्थ्रेक्नोज (पत्ती धब्बा रोग)

मिर्च का फल सड़न रोग

प्रमुख लक्षण * फलों पर गोल धँसे हुए काले धब्बे बनते हैं। * धब्बों के मध्य गुलाबी अथवा नारंगी रंग के बीजाणु दिखाई देते हैं। * फल सड़कर बाजार मूल्य खो देते हैं।

प्रबंधन

* रोगग्रस्त फल तोड़कर नष्ट करें।
* खेत में स्वच्छता रखें।
* संतुलित उर्वरक दें।
* एजोक्सीस्ट्रोबिन, टेबुकोनाजोल अथवा डाइफेनोकोनाजोल का अनुशंसित मात्रा में छिड़काव करें।

4. पाउडरी मिल्ड्यू

यह रोग Leveillula taurica द्वारा होता है।

प्रमुख लक्षण

* पत्तियों की निचली सतह पर सफेद चूर्ण जैसा आवरण बनता है।
* पत्तियाँ पीली होकर समय से पहले झड़ जाती हैं।
* फलन एवं उत्पादन में कमी आती है।

प्रबंधन

* उचित दूरी पर पौध लगाएं।
* अधिक नाइट्रोजन उर्वरक न दें।
* गंधक 80 WP अथवा हेक्साकोनाजोल या टेबुकोनाजोल का छिड़काव करें।
* आवश्यकता अनुसार 10द15 दिन के अंतराल पर पुनः छिड़काव करें।

5. पत्ती धब्बा रोग

प्रमुख लक्षण

* पत्तियों पर छोटे भूरे गोल धब्बे बनते हैं।
* धब्बों के चारों ओर पीला घेरा दिखाई देता है।
* अधिक संक्रमण होने पर पत्तियाँ झड़ जाती हैं।

प्रबंधन * रोगग्रस्त पत्तियाँ नष्ट करें।

* फसल अवशेषों को खेत में न छोड़ें।
* मैंकोजेब अथवा क्लोरोथैलोनिल का छिड़काव करें।

6. जीवाणुजनित पत्ती धब्बा

यह रोग Xanthomonas spp. द्वारा होता है।

प्रमुख लक्षण * पत्तियों पर पानी से भीगे हुए छोटे धब्बे बनते हैं। * बाद में धब्बे भूरे होकर सूख जाते हैं। * फल पर भी छोटे उभरे हुए धब्बे बनते हैं।

प्रबंधन * रोगमुक्त बीज का प्रयोग करें। * बीजोपचार करें। * संक्रमित पौधों को हटाएं। * कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के साथ स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का अनुशंसित मात्रा में छिड़काव करें।

7. लीफ कर्ल रोग

यह रोग वायरस द्वारा होता है तथा सफेद मक्खी इसके प्रसार का प्रमुख माध्यम है।

प्रमुख लक्षण

* पत्तियाँ ऊपर की ओर मुड़ जाती हैं। * पौधे बौने रह जाते हैं। * फूल एवं फल कम बनते हैं।

प्रबंधन * रोगग्रस्त पौधों को तुरंत निकालें। * सफेद मक्खी का नियंत्रण करें। * पीले चिपचिपे ट्रैप लगाएं। * खेत के चारों ओर अवरोधक फसल लगाएं। * अनुशंसित कीटनाशियों का समय पर प्रयोग करें।

8. मोजेक रोग

प्रमुख लक्षण * पत्तियों पर गहरे एवं हल्के हरे रंग का मोजेक दिखाई देता है। * पत्तियाँ सिकुड़ जाती हैं। * पौधे की वृद्धि रुक जाती है।

प्रबंधन

* रोगमुक्त बीज का प्रयोग करें। * एफिड एवं अन्य रस चूसने वाले कीटों का नियंत्रण करें।
* संक्रमित पौधों को निकालकर नष्ट करें।
* खेत में खरपतवार नियंत्रण रखें।

समेकित रोग प्रबंधन

* प्रमाणित एवं रोगमुक्त बीज का उपयोग करें।
* बीजोपचार अवश्य करें।
* ट्राइकोडर्मा जैसे जैव एजेंट का प्रयोग करें।
* संतुलित उर्वरक एवं उचित सिंचाई अपनाएं।
* खेत में जलभराव न होने दें।
* संक्रमित पौधों एवं फलों को नष्ट करें।
* खरपतवार नियंत्रण करें।
* नियमित निरीक्षण कर रोग की प्रारम्भिक अवस्था में नियंत्रण करें।
* केवल अनुशंसित मात्रा में ही फफूंदनाशी एवं जीवाणुनाशी दवाओं का प्रयोग करें।
* एक ही रसायन का बार-बार उपयोग न करें तथा विभिन्न समूहों के रसायनों का क्रमिक प्रयोग करें।

निष्कर्ष-मिर्च की सफल खेती के लिए रोगों की समय पर पहचान एवं समेकित रोग प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। रोगमुक्त बीज, बीजोपचार, संतुलित पोषण, खेत की स्वच्छता, जैविक उपायों तथा आवश्यकता अनुसार अनुशंसित रसायनों के समन्वित उपयोग से रोगों की तीव्रता कम की जा सकती है। यदि किसान प्रारम्भिक अवस्था में ही रोगों की पहचान कर उचित प्रबंधन अपनाते हैं तो उत्पादन एवं गुणवत्ता दोनों में उल्लेखनीय वृद्धि संभव है। समेकित रोग प्रबंधन न केवल उत्पादन बढ़ाता है बल्कि पर्यावरण संरक्षण एवं सुरक्षित कृषि की दिशा में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
नई दिल्ली

पुष्पेन्द्र यादव, रोहन सेरावत, शुभ्रांशु सिंह
कृषि विस्तार प्रभाग, भाकृअनुप, कृषि अनुसंधान भवन–I, पूसा नई दिल्ली– 110012

कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके): किसानों की आय वृद्धि में भूमिका, उपलब्धियां एवं भविष्य की संभावनाएं

भूमिका-भारत कृषि प्रधान देश है और बड़ी आबादी कृषि एवं संबद्ध गतिविधियों पर निर्भर है। बढ़ती लागत, छोटे जोत, जलवायु परिवर्तन, बाजार अस्थिरता, फसलोत्तर हानि और तकनीकी प्रसार की सीमाएँ किसानों की आय को प्रभावित करती हैं। इसलिए आय वृद्धि के लिए उत्पादन के साथ लागत में कमी, संसाधन दक्षता, विविधीकरण, मूल्य संवर्धन, उद्यमिता और बेहतर बाजार संपर्क आवश्यक हैं। इस दिशा में ICAR के कृषि विज्ञान केंद्र (KVKs) अनुसंधान एवं किसानों के बीच सेतु बनकर वैज्ञानिक तकनीकों के खेत स्तर पर प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

कृषि विज्ञान केंद्र क्या है?-कृषि विज्ञान केंद्र एक जिला स्तरीय कृषि प्रौद्योगिकी प्रसार संस्थान है, जिसकी स्थापना भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) द्वारा किसानों, ग्रामीण युवाओं, महिला कृषकों तथा कृषि विस्तार अधिकारियों को वैज्ञानिक प्रशिक्षण, तकनीकी परामर्श और नवीन कृषि तकनीकों का प्रदर्शन उपलब्ध कराने के उद्देश्य से की गई है। KVK की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यहाँ केवल सैद्धांतिक जानकारी नहीं दी जाती, बल्कि "सीखो और करके देखो" (Learning by Doing) की अवधारणा पर कार्य किया जाता है। किसी भी तकनीक को बड़े स्तर पर प्रसारित करने से पहले उसे स्थानीय परिस्थितियों में किसानों के खेतों पर परीक्षण (On Farm Testing) तथा प्रदर्शन (Frontline Demonstration) के माध्यम से सत्यापित किया जाता है।

कृषि विज्ञान केंद्रों के प्रमुख उद्देश्य

कृषि विज्ञान केंद्रों के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं- * अनुसंधान संस्थानों द्वारा विकसित तकनीकों को किसानों तक पहुँचाना। * स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार तकनीकों का परीक्षण एवं परिष्करण। * किसानों, महिलाओं एवं ग्रामीण युवाओं का कौशल विकास। * कृषि आधारित उद्यमिता को बढ़ावा देना। * प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करते हुए टिकाऊ कृषि को प्रोत्साहित करना। * किसानों को वैज्ञानिक निर्णय लेने हेतु समयबद्ध सलाह उपलब्ध कराना।

किसानों की आय बढ़ाने में कृषि विज्ञान केंद्रों की भूमिका

1. **ऑन-फार्म परीक्षण (On Farm Testing - OFT)**- देश के विभिन्न भागों में मिट्टी, जलवायु, वर्षा तथा कृषि प्रणालियों में काफी भिन्नता होती है। इसलिए किसी भी नई तकनीक को सीधे लागू करने के बजाय KVK पहले किसानों के खेतों पर उसका परीक्षण करता है। इन परीक्षणों से यह पता चलता है कि कौन-सी तकनीक स्थानीय परिस्थितियों में सबसे अधिक लाभकारी है।

2. **फ्रंट लाइन प्रदर्शन (Front Line Demonstrations - FLDs)**- फ्रंट लाइन प्रदर्शन KVK की सबसे प्रभावी गतिविधियों में से एक है। इसमें उन्नत किस्मों एवं वैज्ञानिक कृषि तकनीकों का प्रदर्शन किसानों के खेतों पर किया जाता है।

FLD के माध्यम से किसान स्वयं देखते हैं कि नई तकनीक अपनाने पर— * उत्पादन बढ़ता है। * उर्वरकों एवं कीटनाशकों का संतुलित उपयोग होता है। * सिंचाई जल की बचत होती है। * लागत घटती है। * शुद्ध लाभ में वृद्धि होती है। इसी कारण FLD को वैज्ञानिक तकनीकों के प्रसार का सबसे सफल माध्यम माना जाता है।

3. **किसानों का कौशल विकास**-कृषि विज्ञान केंद्र पूरे वर्ष किसानों, महिला कृषकों, ग्रामीण युवाओं तथा किसान उत्पादक संगठनों (FPOs) के लिए उन्नत फसल उत्पादन, बागवानी, पशुपालन, मत्स्य पालन, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, जैविक एवं प्राकृतिक खेती, खाद्य प्रसंस्करण,

डिजिटल कृषि, ड्रोन तकनीक तथा संरक्षित खेती (Protected Cultivation) जैसे विभिन्न विषयों पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करते हैं।

4. **कृषि विविधीकरण (Crop Diversification)**-एक ही फसल पर निर्भर रहना आज के समय में जोखिमपूर्ण हो गया है। जलवायु परिवर्तन तथा बाजार मूल्य में उतार-चढ़ाव के कारण किसानों को भारी नुकसान उठाना पड़ सकता है। KVK किसानों को दलहन, तिलहन, बागवानी, औषधीय पौधे, मोटे अनाज (श्री अन्न), सब्जियाँ, फूलों की खेती तथा बहुफसली प्रणाली अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। कृषि विविधीकरण से– * जोखिम कम होता है। * वर्षभर आय प्राप्त होती है। * पोषण सुरक्षा बढ़ती है। * बाजार के अधिक अवसर मिलते हैं।

5. **एकीकृत कृषि प्रणाली (Integrated Farming System - IFS)**-आज केवल फसल उत्पादन से किसानों की आय बढ़ाना पर्याप्त नहीं है। KVK फसल के साथ डेयरी, बकरी पालन, मुर्गी पालन, मत्स्य पालन, मशरूम, वर्मी कम्पोस्ट एवं कृषि वानिकी को जोड़कर एकीकृत कृषि प्रणाली (IFS) को बढ़ावा देते हैं। इसमें एक उद्यम के अवशेष का उपयोग दूसरे में संसाधन के रूप में होता है, जिससे लागत घटती है, संसाधनों का पुनर्चक्रण होता है और वर्षभर आय के अवसर बढ़ते हैं।

6. **उच्च मूल्य वाली कृषि (High Value Agriculture)**-KVK किसानों को पारंपरिक खेती के साथ-साथ पॉलीहाउस एवं नेट हाउस में खेती, विदेशी सब्जियों, फूलों की खेती, बीज उत्पादन, औषधीय एवं सुगंधित पौधों तथा जैविक उत्पादों जैसी उच्च मूल्य वाली कृषि गतिविधियों को अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं।

7. **मृदा स्वास्थ्य एवं समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन (INM)**-मिट्टी की उर्वरता कृषि उत्पादन की आधारशिला है। KVK मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों के संतुलित उपयोग की सलाह देते हैं तथा जैव उर्वरक, हरी खाद, वर्मी कम्पोस्ट, नैनो उर्वरक और फसल अवशेष प्रबंधन जैसी तकनीकों को बढ़ावा देते हैं। इन उपायों को अपनाने से उत्पादन लागत में कमी आती है, पोषक तत्वों के उपयोग की दक्षता बढ़ती है तथा दीर्घकाल में मिट्टी की गुणवत्ता और उत्पादकता में सुधार होता है।

8. **समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन (Integrated Pest Management - IPM)**-KVK किसानों को समेकित कीट प्रबंधन (IPM) अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं, जिसमें जैविक, यांत्रिक, सांस्कृतिक एवं आवश्यकता-आधारित रासायनिक उपायों का संतुलित उपयोग किया जाता है। फेरोमोन ट्रैप, येलो स्टिकी ट्रैप, जैव-कीटनाशक एवं प्रतिरोधी किस्मों के प्रयोग से कीटनाशक लागत एवं फसल हानि कम होती है तथा पर्यावरण संरक्षण के साथ किसानों की आय बढ़ाने में सहायता मिलती है।

9. **जलवायु स्मार्ट कृषि (Climate Smart Agriculture)**-जलवायु परिवर्तन, अनियमित वर्षा, तापमान वृद्धि, सूखा, बाढ़ एवं नए कीट-रोग कृषि के लिए प्रमुख चुनौतियाँ हैं। KVK जलवायु-अनुकूल किस्मों, संरक्षण कृषि, फसल विविधीकरण, मौसम आधारित सलाह, वर्षा जल संचयन तथा सूक्ष्म सिंचाई को बढ़ावा देते हैं। डिजिटल माध्यमों से समय पर मौसम एवं कृषि सलाह उपलब्ध कराकर किसानों के जोखिम को कम करने और आय में स्थिरता लाने में सहायता की जाती है।

10. **जल संरक्षण एवं सूक्ष्म सिंचाई तकनीक**-जल कृषि उत्पादन का सबसे महत्वपूर्ण संसाधन है और देश के अनेक क्षेत्रों में भूजल स्तर तेजी से गिर रहा है। ऐसे में "प्रति बूंद अधिक फसल" की अवधारणा को अपनाना समय की आवश्यकता है। कृषि विज्ञान केंद्र किसानों को ड्रिप एवं स्प्रिंकलर सिंचाई, वर्षा जल संचयन, मल्चिंग, लेजर लैंड लेवलिंग, फसल जल बजट तथा मृदा नमी संरक्षण जैसी जल प्रबंधन तकनीकों का प्रदर्शन एवं प्रशिक्षण प्रदान करते हैं।

11. **कृषि यंत्रीकरण एवं डिजिटल कृषि**-आज KVK किसानों को ड्रोन, AI, IoT, स्मार्ट सेंसर, GPS, सटीक कृषि एवं मोबाइल आधारित सलाह जैसी आधुनिक तकनीकों से जोड़ रहे हैं। इनके उपयोग से समय, श्रम एवं उत्पादन लागत में कमी, संसाधन उपयोग दक्षता में वृद्धि तथा उर्वरक एवं कीटनाशकों के संतुलित प्रयोग से फसल उत्पादकता और किसानों की लाभप्रदता बढ़ती है।

12. **मूल्य संवर्धन एवं कृषि प्रसंस्करण**-कृषि उत्पादों के प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन से किसानों को बेहतर बाजार मूल्य और अतिरिक्त आय मिलती है। KVK किसानों, महिला समूहों एवं ग्रामीण युवाओं को जैम, सॉस, अचार, मिलेट उत्पाद तथा मसालों की ग्रेडिंग, पैकेजिंग एवं प्रसंस्करण का प्रशिक्षण देकर उत्पाद की शेल्फ लाइफ, बाजार मूल्य और आय बढ़ाने में सहयोग करते हैं।

13. **कृषि उद्यमिता एवं ग्रामीण रोजगार**-आज का किसान केवल उत्पादक ही नहीं, बल्कि सफल उद्यमी भी बन सकता है। KVK किसानों एवं ग्रामीण युवाओं को मशरूम, मधुमक्खी पालन, डेयरी, बकरी पालन, पौधशाला, बीज उत्पादन, खाद्य प्रसंस्करण एवं कस्टम हायरिंग जैसे कृषि एवं संबद्ध उद्यमों के लिए प्रशिक्षण और तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। इससे स्वरोजगार एवं अतिरिक्त आय के अवसर बढ़ते हैं और कृषि को लाभकारी एवं टिकाऊ व्यवसाय के रूप में विकसित करने में सहायता मिलती है।

14. **किसान उत्पादक संगठन (FPO) की सुदृढ़ता**-छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए अकेले बाजार में प्रतिस्पर्धा करना कठिन होता है। इस समस्या के समाधान में किसान उत्पादक संगठन (FPO) महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। कृषि विज्ञान केंद्र FPOs को गुणवत्तापूर्ण उत्पादन, व्यवसाय योजना तैयार करने, बीज एवं उर्वरकों की सामूहिक खरीद, मूल्य श्रृंखला विकास, प्रसंस्करण एवं ब्रांडिंग तथा सामूहिक विपणन जैसे क्षेत्रों में तकनीकी सहयोग प्रदान करते हैं। FPO के माध्यम से किसान सामूहिक रूप से इनपुट की खरीद और कृषि उत्पादों की बिक्री कर बेहतर मोलभाव कर सकते हैं, जिससे उत्पादन लागत में कमी, बाजार तक बेहतर पहुँच, बेहतर मूल्य प्राप्ति तथा बिचौलियों पर निर्भरता में कमी आती है।

15. **महिला एवं युवा सशक्तिकरण**-ग्रामीण विकास में महिलाओं और युवाओं की भागीदारी अत्यंत महत्वपूर्ण है। कृषि विज्ञान केंद्र महिलाओं के लिए पोषण वाटिका (NARI-Nutri-sensitive Agricultural Resources and Innovation), मशरूम उत्पादन, मधुमक्खी पालन, खाद्य प्रसंस्करण, सिलाई एवं कृषि आधारित लघु उद्योगों का प्रशिक्षण आयोजित करते हैं। इसी प्रकार ग्रामीण युवाओं को आधुनिक कृषि, ड्रोन संचालन, डिजिटल कृषि, कृषि स्टार्टअप तथा एग्री-बिजनेस से जोड़कर स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध कराए जा रहे हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

मिनी ऑयल एक्सपेलर: सरसों के बीजों का प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन एवं ग्रामीण उद्यमिता का प्रभावी यंत्र

डॉ. मो. इरफान अहमद अंसारी सह-प्राध्यापक सह वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रधान अन्वेषक, अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (फसलोपरांत अभियंत्रण एवं प्रौद्योगिकी) कृषि अभियंत्रण विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची-834006, (झारखण्ड)

श्रुति पाण्डेय, बबली कुमारी

सूरज प्रसाद कुशवाहा बी.टेक. (कृषि अभियांत्रिकी), अष्टम सेमेस्टर, कृषि अभियांत्रिकी महाविद्यालय बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची-834006, (झारखण्ड)

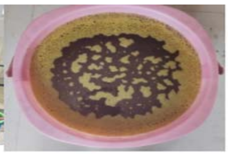

प्रस्तावना- भारत विश्व के प्रमुख तिलहन उत्पादक देशों में से एक है। देश के विभिन्न राज्यों में सरसों की व्यापक खेती की जाती है। ये फसलें न केवल खाद्य तेलों की उपलब्धता सुनिश्चित करती हैं, बल्कि किसानों की आय, खाद्य एवं पोषण सुरक्षा तथा कृषि-आधारित उद्योगों के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। खाद्य तेल मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत आवश्यक हैं, क्योंकि इनमें आवश्यक वसीय अम्ल, वसा में घुलनशील विटामिन तथा प्राकृतिक जैव सक्रिय यौगिक पाए जाते हैं, जो शरीर की वृद्धि, विकास, ऊर्जा आपूर्ति तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यद्यपि भारत में तिलहनों का उत्पादन निरंतर बढ़ रहा है, फिर भी खाद्य तेलों की बढ़ती मांग के कारण देश आज भी अपनी आवश्यकता का एक बड़ा भाग आयात करता है। ऐसी स्थिति में स्थानीय स्तर पर तिलहनों के वैज्ञानिक प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन को बढ़ावा देना आवश्यक है। झारखंड में प्रतिवर्ष पर्याप्त मात्रा में तिलहनों का उत्पादन होने के बावजूद अधिकांश किसान अपनी उपज को कच्चे बीज के रूप में ही बेच देते हैं। स्थानीय स्तर पर वैज्ञानिक तेल निष्कर्षण एवं प्रसंस्करण सुविधाओं के अभाव में उन्हें मूल्य संवर्धन का लाभ नहीं मिल पाता है। यदि उत्पादन क्षेत्रों के निकट ही मिनी ऑयल एक्सपेलर आधारित प्रसंस्करण इकाइयाँ स्थापित की जाएँ, तो किसान स्थानीय स्तर पर तिलहनों का प्रसंस्करण कर शुद्ध खाद्य तेल तैयार कर अधिक लाभ अर्जित कर सकते हैं। तिलहनों से तेल निकालने की प्रमुख यांत्रिक विधियाँ हॉट प्रेसिंग तथा कोल्ड-प्रेसिंग हैं। हॉट प्रेसिंग में उच्च तापमान के कारण तेल की प्राप्ति अधिक होती है, किन्तु इससे तेल के प्राकृतिक स्वाद, सुगंध, विटामिन एवं कुछ जैव सक्रिय यौगिक प्रभावित हो सकते हैं। इसके विपरीत, कोल्ड-प्रेसिंग तकनीक में बिना अधिक ताप एवं रासायनिक विलायकों के उपयोग के तेल निकाला जाता है, जिससे आवश्यक वसीय अम्ल, प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट, विटामिन तथा अन्य पोषक तत्व सुरक्षित रहते हैं। साथ ही, प्राप्त तेल खली भी रसायन-मुक्त एवं उच्च गुणवत्ता वाली होती है, जिसका उपयोग पशु आहार, जैविक उर्वरक तथा वर्मी कम्पोस्ट निर्माण में किया जा सकता है। यद्यपि इस विधि में तेल की प्राप्ति अपेक्षाकृत कुछ कम होती है, फिर भी उच्च गुणवत्ता, स्वास्थ्यवर्धक गुणों तथा प्राकृतिक एवं रसायन-मुक्त तेलों की बढ़ती उपभोक्ता मांग के कारण इसका महत्व निरंतर बढ़ रहा है। मिनी ऑयल एक्सपेलर ऐसी ही एक सरल, किफायती एवं प्रभावी यंत्र है, जिसके माध्यम से किसान, किसान उत्पादक संगठन, स्वयं सहायता समूह, महिला उद्यमी, कृषि स्नातक, स्टार्टअप तथा ग्रामीण युवा स्थानीय स्तर पर तेल निष्कर्षण कर मूल्य संवर्धन का लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इस यंत्र द्वारा तेल के साथ-साथ प्राप्त तेल खली भी एक मूल्यवान उप-उत्पाद है, जिसका उपयोग उच्च प्रोटीनयुक्त पशु आहार, जैविक उर्वरक तथा वर्मी कम्पोस्ट निर्माण में किया जाता है। इस प्रकार एक ही कच्चे माल से अनेक मूल्यवर्धित उत्पाद प्राप्त होते हैं, जिससे किसानों की आय में वृद्धि होती है।

मिनी ऑयल एक्सपेलर- मिनी ऑयल एक्सपेलर एक यांत्रिक तेल निष्कर्षण मशीन है, जिसका उपयोग सरसों के बीजों से तेल निकालने के लिए किया जाता है। वैज्ञानिक तेल निष्कर्षण प्रक्रिया में बीजों की सफाई, ग्रेडिंग, शुष्कीकरण जैसे पूर्व-प्रसंस्करण चरण शामिल होते हैं, जिससे तेल निष्कर्षण दक्षता एवं उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार होता है। स्वच्छ एवं सूखे बीजों को फीड हॉपर के माध्यम से स्क्रू एक्सपेलर में डाला जाता है, जहाँ स्क्रू शाफ्ट एवं बैरल द्वारा उत्पन्न उच्च दाब के कारण बीजों से तेल निकलकर तेल निकासी चैनल से संग्रह टैंक में एकत्र हो जाता है, जबकि शेष ठोस पदार्थ तेल खली के रूप में बाहर निकलता है। यंत्र से प्राप्त तेल को फिल्टर प्रेस द्वारा छानकर अधिक स्वच्छ एवं आकर्षक बनाया जा सकता है। मिनी ऑयल एक्सपेलर में सामान्यतः फीड हॉपर, स्क्रू एक्सपेलर, बैरल, तेल निकासी चैनल, खली निकास व्यवस्था, विद्युत मोटर एवं बेल्ट-पुली आधारित पावर ट्रांसमिशन प्रणाली प्रमुख भाग होते हैं। इस यंत्र को लगभग 7 हॉर्सपावर की विद्युत मोटर एवं बेल्ट-पुली आधारित शक्ति संचरण प्रणाली द्वारा संचालित किया जाता है। इसकी क्षमता लगभग 30-40 किलोग्राम बीज प्रति घंटा है, जो सरसों सहित विभिन्न तिलहनी बीजों के प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त है। इनकी मजबूत संरचना, कम रखरखाव आवश्यकता तथा ग्रामीण परिस्थितियों के अनुकूल डिजाइन इन्हें लघु स्तर के प्रसंस्करण उद्यमों के लिए उपयुक्त बनाते हैं। मिनी ऑयल एक्सपेलर द्वारा सरसों के बीजों से निकाले गए तेल का चित्र नीचे दर्शाया गया है।

पैकेजिंग, लेबलिंग, ब्रांडिंग, विपणन तथा आवश्यक पंजीकरण: मिनी ऑयल एक्सपेलर आधारित तेल प्रसंस्करण उद्यम की सफलता केवल गुणवत्तापूर्ण तेल उत्पादन पर ही निर्भर नहीं करती, बल्कि वैज्ञानिक पैकेजिंग, लेबलिंग, प्रभावी ब्रांडिंग, सुदृढ़ विपणन तथा आवश्यक वैधानिक पंजीकरण भी समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। उपयुक्त पैकेजिंग खाद्य तेल को प्रकाश, ऑक्सीजन, नमी एवं बाहरी संदूषण से सुरक्षित रखकर ऑक्सीकरण की प्रक्रिया को धीमा करती है तथा उसकी गुणवत्ता, ताजगी एवं शेल्फ लाइफ बनाए रखती है। खाद्य तेलों की पैकेजिंग के लिए सामान्यतः पॉलीएथिलीन टेरेफ्थेलेट बोतलें, उच्च घनत्व पॉलीएथिलीन बोतलें एवं कैन, बहुपरत लैमिनेटेड पाउच, टिन कंटेनर तथा काँच की बोतलों का उपयोग किया जाता है, जबकि बड़े पैमाने पर भंडारण एवं परिवहन के लिए स्टेनलेस स्टील टैंक उपयुक्त माने जाते हैं। पैकेजिंग सामग्री खाद्य-ग्रेड, मजबूत, रिसाव-रोधी तथा FSSAI एवं BIS मानकों के अनुरूप होनी चाहिए। प्रत्येक पैकेज पर उत्पाद का नाम, शुद्ध मात्रा, पोषण संबंधी जानकारी, निर्माण तिथि, उपयोग अवधि, बैच संख्या, अधिकतम खुदरा मूल्य, निर्माता का विवरण तथा FSSAI लाइसेंस संख्या सहित आवश्यक लेबलिंग स्पष्ट रूप से होना चाहिए। इससे उत्पाद की विश्वसनीयता बढ़ती है तथा उपभोक्ताओं का विश्वास सुदृढ़ होता है। स्थानीय पहचान पर आधारित ब्रांड विकसित कर किसान उत्पादक संगठन, स्वयं सहायता समूह, महिला उद्यमी एवं ग्रामीण युवा अपने कोल्ड-प्रेस्ड खाद्य तेलों का बेहतर मूल्य प्राप्त कर सकते हैं। वर्तमान में शुद्ध, रसायन-मुक्त एवं प्राकृतिक खाद्य तेलों की बढ़ती मांग के कारण स्थानीय ब्रांडों के लिए व्यापक बाजार उपलब्ध है। किसान बाजार, सहकारी संस्थाएँ, किराना एवं खुदरा दुकानें, सुपरमार्केट, ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म तथा सोशल मीडिया आधारित डिजिटल विपणन स्थानीय, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय बाजारों तक पहुँच बनाने के प्रभावी माध्यम हैं। उद्यम के सुचारु संचालन हेतु उद्यम (MSME) पंजीकरण, FSSAI लाइसेंस, आवश्यकतानुसार GST पंजीकरण, स्थानीय व्यापार लाइसेंस तथा ब्रांड नाम से उत्पाद के विपणन के लिए ट्रेडमार्क पंजीकरण कराना लाभदायक होता है।

सफल संचालन हेतु आवश्यक सावधानियां- मिनी ऑयल एक्सपेलर आधारित तेल प्रसंस्करण इकाई के सफल एवं लाभदायक संचालन के लिए सरसों के बीजों की गुणवत्ता, मशीन का उचित रखरखाव, गुणवत्ता नियंत्रण तथा प्रभावी विपणन पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। वर्षभर पर्याप्त मात्रा में उच्च गुणवत्ता वाले तिलहनी बीजों की उपलब्धता सुनिश्चित की जानी चाहिए तथा तेल निष्कर्षण से पूर्व बीजों की वैज्ञानिक सफाई, ग्रेडिंग, उपयुक्त नमी नियंत्रण करना चाहिए, जिससे तेल की गुणवत्ता एवं निष्कर्षण दक्षता में वृद्धि होती है। मशीन के कुशल संचालन के लिए प्रशिक्षित ऑपरेटर, नियमित एवं निर्बाध विद्युत आपूर्ति तथा स्क्रू, बैरल, बेयरिंग, बेल्ट एवं अन्य चलित भागों का समय-समय पर निरीक्षण, स्नेहन एवं रखरखाव आवश्यक है, जिससे मशीन की कार्यक्षमता बनी रहती है और अनावश्यक खराबी एवं उत्पादन हानि से बचा जा सकता है। इन सभी सावधानियों का पालन कर मिनी ऑयल एक्सपेलर आधारित तेल प्रसंस्करण इकाई को एक लाभकारी, टिकाऊ एवं सफल ग्रामीण कृषि-आधारित उद्यम के रूप में विकसित किया जा सकता है।

मिनी ऑयल एक्सपेलर से ग्रामीण उद्यमिता विकास: मिनी ऑयल एक्सपेलर केवल सरसों के बीजों से तेल निकालने का एक यंत्र नहीं है, बल्कि यह मूल्य संवर्धन, ग्रामीण उद्यमिता, रोजगार सृजन तथा किसानों की आय वृद्धि का एक प्रभावी माध्यम है। कम पूंजी निवेश, सरल संचालन, कम रखरखाव तथा स्थानीय स्तर पर सरसों के बीजों की उपलब्धता के कारण यह कृषि-आधारित सूक्ष्म एवं लघु उद्योग के रूप में अत्यंत व्यवहारिक एवं लाभदायक तकनीक है। यदि किसान सरसों को कच्चे बीज के रूप में बेचने के बजाय उनका स्थानीय स्तर पर प्रसंस्करण कर शुद्ध खाद्य तेल एवं तेल खली के रूप में विपणन करें, तो उन्हें अधिक मूल्य प्राप्त होने के साथ-साथ मूल्य संवर्धन का प्रत्यक्ष लाभ भी मिलता है। स्थानीय स्तर पर उत्पादित कोल्ड-प्रेस्ड तेलों की बढ़ती मांग को देखते हुए उद्यमी आकर्षक पैकेजिंग, ब्रांडिंग एवं प्रत्यक्ष विपणन के माध्यम से प्रीमियम मूल्य प्राप्त कर सकते हैं। मिनी ऑयल एक्सपेलर आधारित इकाइयाँ किसान उत्पादक संगठनों, स्वयं सहायता समूहों (SHG), महिला उद्यमियों, कृषि स्नातकों, स्टार्टअप्स तथा ग्रामीण युवाओं के लिए स्वरोजगार एवं सफल कृषि-आधारित उद्यम स्थापित करने का उत्कृष्ट अवसर प्रदान करती हैं। विशेष रूप से झारखंड जैसे राज्यों में ऐसी इकाइयाँ किसानों एवं आदिवासी समुदायों हेतु आय के नए स्रोत विकसित कर सकती हैं। यदि इन उद्यमों को तकनीकी प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता, गुणवत्तापूर्ण पैकेजिंग, ब्रांडिंग तथा प्रभावी बाजार संपर्क से जोड़ा जाए, तो स्थानीय ब्रांडों का विकास होगा, महिलाओं की आर्थिक भागीदारी बढ़ेगी, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के नए अवसर सृजित होंगे तथा कृषि-आधारित उद्योगों को प्रोत्साहन मिलेगा। इस प्रकार, कम निवेश, स्थानीय स्तर पर मूल्य संवर्धन, बेहतर उत्पाद गुणवत्ता, बढ़ती उपभोक्ता मांग तथा व्यापक उद्यमिता की संभावनाओं के कारण मिनी ऑयल एक्सपेलर आधारित तेल प्रसंस्करण तकनीक किसानों एवं ग्रामीण उद्यमियों के लिए एक टिकाऊ, लाभकारी एवं भविष्य उन्मुख कृषि-आधारित व्यवसाय मॉडल के रूप में उभर सकती है।

निष्कर्ष: मिनी ऑयल एक्सपेलर सरसों के बीजों के वैज्ञानिक प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन एवं गुणवत्तापूर्ण खाद्य तेल उत्पादन के लिए एक सरल, कम लागत वाली एवं प्रभावी यंत्र है। इसके माध्यम से के बीजों का स्थानीय स्तर पर प्रसंस्करण कर शुद्ध एवं कोल्ड-प्रेस्ड तेल के साथ-साथ मूल्यवान तेल खली का उत्पादन किया जा सकता है, जिससे किसानों एवं ग्रामीण उद्यमियों की आय में वृद्धि हो सकती है। किसान उत्पादक संगठन, स्वयं सहायता समूह, महिला उद्यमियों, कृषि स्नातकों एवं ग्रामीण युवाओं हेतु यह तकनीक कम निवेश में स्वरोजगार एवं कृषि-आधारित उद्यम स्थापित करने का उत्कृष्ट अवसर प्रदान कर सकती है। झारखंड जैसे राज्यों में मिनी ऑयल एक्सपेलर आधारित इकाइयाँ किसानों की आय वृद्धि, महिला सशक्तिकरण, ग्रामीण रोजगार सृजन तथा आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

फसल अवशेष प्रबंधन: पर्यावरण संरक्षण, उपयोग एवं सतत कृषि की दिशा में एक प्रभावी पहल

डॉ. कृशानु वरिष्ठ शोध अध्येता, आईसीएआर-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान केंद्र ,करनाल (132001), हरियाणा

श्वेता यादव शोध छात्रा, आईसीएआर-आईसीएआर-राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (132001), हरियाणा

डॉ. शैलेन्द्र प्रताप सिंह सहायक प्राध्यापक IFTM यूनिवर्सिटी मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश

डॉ. स्वर्णिमा तिवारी विभाग वनस्पति विज्ञान, स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय मेरठ

डॉ शची तिवारी विभाग वनस्पति विज्ञान, स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय मेरठ 250005

पराली जलाने के नुकसान

पराली जलाने से पर्यावरण एवं मृदा स्वास्थ्य के साथ-साथ हमारे स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। इससे उत्पन्न वायु प्रदूषण से आंखों में जलन से लेकर श्वसन एवं हृदय संबंधी रोगों के प्रभाव में बढ़ोतरी देखी गई है। दिल्ली में उत्पन्न धुंध की समस्या से वहां के लोगों की औसत आयु में 6 वर्ष की कमी दर्ज की गई है। इससे उत्पन्न वायु प्रदूषण का प्रभाव हमारे अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा है। वायु प्रदूषण के कारण दिल्ली में पर्यटकों से आमद मे 25-30% की कमी आई है।

1 टन फसल अवशेष जलाने से उत्सर्जित होता है-

Particulate matter	3 kg
कार्बन डाइऑक्साइड	1460 kg
कार्बन मोनोऑक्साइड	60 kg
सल्फर डाइऑक्साइड	2 kg
नाइट्रस ऑक्साइड	3.8 kg
मीथेन	2.7 kg
राख	199 kg

1. फसल अवशेष जलाने से हानिकारक गैसों का उत्सर्जन होता है। जो हमारे पर्यावरण एवं स्वास्थ्य के लिए नुसानदायक होता है। दिल्ली एनसीआर में oct-nov माह मे धुंध की समस्या पराली जलाने से संबंधित है।
2. फसल अवशेष जलाने से एरोसॉल के कण निकलते है, जो हवा को प्रदूषित करता है।
3. मिट्टी के कार्बनिक पदार्थो को नुकसान पहुंचाता है।मृदा की उर्वरता समाप्त हो जाती है।
4. फसल अवशेषों को जलाने से उनके जड़, तना पत्तियों में संचित लाभदायक पोषक तत्व नष्ट हो जाते है।
5. लाभदायक मित्र कीट जल कर मर जाते हैं जिसके कारण वातावरण में विपरीत प्रभाव पड़ता है।
6. पशुओं के चारे की व्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ता है
7. फसल अवशेषों को जलाने से मृदा ताप में बढ़ोतरी होती है, जिसके कारण वातावरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इससे मृदा के तापमान में 42° तक बढ़ोतरी होती है, जो मृदा में उपस्थित सूक्ष्म जीवों को 2.5 सेंटीमीटर की गहराई तक विस्थापित कर देता है या मार देता है।
8. फसल अवशेष जलाने पर अगल बगल के खेतों में आग लगने की संभावना एवं खड़ी फसल अथवा आबादी में अग्नि कांड होने की संभावना बनी रहती है।

फसल अवशेषों के उपयोग

फसल अवशेष को जलाने के बजाय किसान नई विकल्प अपना सकते है। इसके अनेक उपयोग हैं, फसल अवशेष किसानों के लिए कई प्रकार से लाभकारी है-

1 टन फसल अवशेष खेत में मिलाने से प्राप्त पोषक तत्व

नाइट्रोजन	10-15 kg
पोटाश	30-40 kg
सल्फर	5-7 kg
ऑर्गेनिक कार्बन	600-800 kg

1. चॉपर द्वारा फसल अवशेष को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटने के बाद बायो वेस्ट डी कंपोजर का छिड़काव करके तथा डिस्क प्लाऊ से गहरी जुताई करके बेहतरीन खाद में बदल सकते है।
2. मिट्टी में मिलाने से मिट्टी की उर्वरता बढ़ जाती है। पराली में पाए जाने वाले नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम, सल्फर मिट्टी में कार्बनिक पदार्थो की मात्रा बढ़ाते हैं जिससे जिससे खेत में उर्वरकों की आवश्यकता कम पड़ती है। अतः उत्पादन लागत में कमी आती है।
3. फसल अवशेष को खेत में ही छोड़ देने से मिट्टी में नमी बनी रहती है, जिससे भूमिगत जल स्तर में सुधार होता है।
4. इसका उपयोग पशुओं के चारे के रूप में, बिछौने के रूप में एवं छप्पर बनाने में किया जाता है।
5. इसका उपयोग कंपोस्ट खाद बनाने में किया जाता है।
6. पुआल का उपयोग सजावटी सामान बनाने में किया जाता है, जो एक अतिरिक्त आय के स्रोत के रूप में सहायक होता है।
7. इससे तैयार भूसे का उपयोग मशरूम उत्पादन में किया जाता है।
8. पदार्थो की पैकेजिंग में फसल अवशेष का उपयोग किया जाता है।

इसका उपयोग कागज उद्योग, बायोमास आधारित पावर प्लांट जैव एथेनॉल उत्पादन इत्यादि में किया जाता है।

पराली प्रबंधन का रोहतास मॉडल

बिहार कृषि विश्वविद्यालय पराली प्रबंधन का यह मॉडल बिहार के रोहतास जिले में अपनाई जा रही है। इसके तहत बेलर मशीन का प्रयोग करके पराली का प्रबंधन किया जा रहा है।

* बेलर खेतों में पड़े धान के बचे अवशेष यानी पराली का गट्ठर तैयार करती है। इसका वजन 25 किलो से लेकर 40 किलो तक होता है। एक बीघा धान के खेत से लगभग 10 से 12 क्विंटल पराली निकलती है।
* 1 एकड़ क्षेत्र में लगभग 1800 रुपए राउंड बेलर मशीन चलाने का खर्च आता है एवं 13 से 16 क्विंटल पुआल इकट्ठा होता है, इसे रु. 2 प्रति किलो की दर से बेचने पर रु. 2600 से रु. 3200 तक लाभ कमाया जा सकता है।
* इकट्ठा किए गए पराली के बंडलो को पशु चारे के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। बरसात के महीने तक अगर इसे सुरक्षित रखा जाए तो 5000 से 6000 रु. प्रति क्विंटल पशु चारा बेचा जा सकता है। इसे किसानों की आमदनी भी बढ़ेगी और पराली जलाए जाने वाले प्रदूषण से भी निजात मिलेगी।

आधुनिक मशीनों से फसल अवशेष प्रबंधन

आधुनिक मशीनें फसल की कटाई एवं अवशेषों को इकट्ठा करने का काम आसान कर देती है।

* **हैप्पी सीडर मशीन**-खेत में फसलों के अवशेष होने के बावजूद इससे फसलों की बुवाई सीधी लाइन में की जा सकती है।
* सुपर एक्स्ट्रा मैनेजमेंट सिस्टम कंबाइन हार्वेस्टर के साथ जोड़कर पराली को बारीक काटकर मिट्टी पर फैलाया जाता है।
* बेलर- यह फसल अवशेषों का गट्ठर बनाने का कार्य करती है।
* चॉपर, मल्चर -फसल अवशेषों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटने का काम करती है।

भारत सरकार की विभिन्न योजनाओं के तहत किसानों को फसल अवशेष प्रबंधन की मशीनें किफायती दाम पर उपलब्ध करवा रही है।

विभिन्न योजनाओं के तहत सरकार इन मशीनों पर 50-80% तक अनुदान दे रही है। किसान इन मशीनों से संबंधित जानकारी हेतु टोल फ्री नंबर 1800 180 2117 अथवा जिला कृषि उप सहायक या कृषि अभियंता से संपर्क कर सकते है।

पूसा डी कंपोजर

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (IARI) द्वारा एक ऐसा समाधान खोजा गया है, जिससे बिना खर्चे के पराली को खाद के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। पूसा डी कंपोजर एक बायो एंजाइम है, जिसका छिड़काव करने पर फसल अवशेष 20 से 25 दिनों में खाद में बदल जाते है, जिससे मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार होता है

पराली जलाए जाने पर जुर्माने का प्रावधान

यदि कोई किसान अपने खेत में पराली जलाता है, तो राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण (NGT) के अनुसार उसे 6 साल की सजा या रु. 15000 तक का जुर्माना देना पड़ सकता है।

* 2 एकड़ में फसल अवशेष जलाने पर -2500 रु. जुर्माना
* 2-5 एकड़ में फसल अवशेष जलाने पर-5000रु. जुर्माना
* 5 एकड़ से अधिक में फसल अवशेष जलाने पर- 15000 रु. जुर्माना

सरसों में स्केलेरोटिनिया स्टेम रॉट का आणविक विधियों द्वारा शीघ्र निदान एवं प्रभावी रोकथाम

दिनेश, शिखा यशवीर आणविक जीव विज्ञान और जैव प्रौद्योगिकी विभाग, बायोटेक्नोलॉजी कॉलेज, चौधरी चरण सिंह हरियाणा एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी, हिसार-हरियाणा

राकेश कुमार पादप रोग विज्ञान विभाग, एग्रीकल्चर कॉलेज, चौधरी चरण सिंह हरियाणा एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी, हिसार-125004, हरियाणा

मनोहर लाल वनस्पति विज्ञान और पादप कार्यिकी विभाग, बेसिक साइंसेज और ह्यूमैनिटीज कॉलेज, चौधरी चरण सिंह हरियाणा एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी, हिसार-125004, हरियाणा

कृष्ण पाल सिंह जीवभौतिकी विभाग, महात्मा ज्योतिबा फुले रोहिलखंड यूनिवर्सिटी, बरेली-243006, उत्तर प्रदेश

पादप रोगज़नक: वह जीव जो किसी पौधे पर रोग उत्पन्न कर सकता है, पादप रोगज़नक कहलाता है। पौधों में रोगज़नकों के कारण होने वाले रोगों के अध्ययन को पादप रोगविज्ञान कहा जाता है। खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) का अनुमान है कि रोग, कीड़े और खरपतवार 925त्र फसल की विफलता का कारण बनते हैं। उदाहरण के लिए, इटली में हर साल राइस ब्लास्ट रोग से चावल नष्ट हो जाता है। उदाहरण के लिए, फाइटोफ्थोरा इन्फेस्टैन्स, जो आलू में लेट ब्लाइट का कारण बनता है, आयरलैंड में प्रसिद्ध अकाल का कारण बना। इसकी शुरुआत 1845 के दौरान यूरोप में अलग-अलग स्थानों पर हुई, जिसका मुख्य केंद्र बेल्जियम था। दुनिया भर में कम कृषि उत्पादकता का कारण पौधों के रोगज़नक हैं, जिनमें मुख्य कारण पुराने, नए और विकसित हो रहे पौधों के संक्रामक रोग हैं।

पौधों के रोगज़नकों के हमले का पूर्वानुमान लगाना पौधों के स्वास्थ्य की निगरानी करने का एक महत्वपूर्ण तरीका है। इसके माध्यम से ग्रीनहाउस और क्षेत्र की स्थितियों में रोग संक्रमण का प्रबंधन किया जा सकता है और बीमारी फैलने का खतरा कम हो जाता है और नए पौधों के रोगज़नकों, विशेष रूप से अंतरराष्ट्रीय सीमाओं पर संगरोध रोगज़नकों के विकास को रोका जा सकता है। कई क्षेत्रों में रोगजनकों की पहचान महत्वपूर्ण है। दवा की खोज, खाद्य सुरक्षा, पौधों की ताकत, जैविक लड़ाई और नैदानिक अनुसंधान, यह अनुमान लगाया गया कि रोग संक्रमण के कारण लगभग 20-30% खेत की फसलें वार्षिक रूप से क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। किसानों को यह बताया गया है कि सोयाबीन रस्ट, जो एक फंगल जनित रोग है, के संक्रमण से 20% तक छुटकारा दिलाकर कुछ मिलियन डॉलर का मुनाफा कमाते हैं। आजकल, पौधों के रोगजनकों, विशेष रूप से फंगल रोगजनकों की उपस्थिति का पता लगाने के लिए दृश्य मूल्यांकन सबसे व्यापक रूप से उपयोग की जाने वाली विधि है। रोग का पता लगाने के पारंपरिक तरीकों में कई नुकसान हैं, जिसके कारण वैकल्पिक तरीकों की खोज करनी पड़ती है। पादप रोग की समस्याओं के निदान के लिए कई रणनीतियों का व्यापक रूप से उपयोग किया गया है, जिनमें डीएनए-आधारित पद्धतियां और इम्यूनोपरख, संक्रमित पादप सामग्री से निकाले गए रोगज़नक प्रोटीन और न्यूक्लिक एसिड का पता लगाने के लिए, प्रत्यक्ष प्रयोगशाला आधारित तकनीकों के अलावा पौधों के लक्षणों का दृश्य निरीक्षण भी शामिल है। पारंपरिक तरीकों में से एक कल्चरिंग और प्लेटिंग तकनीक है जिसका उपयोग जीवाणु संक्रमण का पता लगाने के लिए किया जाता है। दूसरी ओर, श्रमसाध्य प्रक्रिया के कारण अतिरिक्त विधियाँ आवश्यक हैं। कुछ परिस्थितियों में, कैम्पिलोबैक्टर बैक्टीरिया का पता लगाने के दौरान, नकारात्मक परिणाम प्राप्त करने के लिए 4-9 दिनों की आवश्यकता होती है और सकारात्मक परिणाम प्राप्त करने के लिए 14-16 दिन लगते हैं। प्रक्रिया को पूरा करने के लिए संवर्धन विधियों को हफ्तों या महीनों का समय मिलता है और जब तत्काल परिणाम की आवश्यकता होती है तो यह लागू नहीं होता है। यह चयनात्मक मीडिया पर निर्भर करता है जिसमें कुछ अवरोधक या विशिष्ट पदार्थ होते हैं जो विकासशील कालोनियों को ख़राब करते हैं और विशिष्ट रंग देते हैं (साल्मोनेला निदान से इंद्रधनुष एंजाइम लिंक्ड इम्युनोसॉरबेंट परख, कई प्रतिरक्षाविज्ञानी प्रतिक्रियाओं में संक्रामक रोगों से एंटीबॉडी सांद्रता का पता लगाने के लिए स्वर्ण मानक है। इन विधियों में एंजाइमों के साथ लेबल किए गए एंटीबॉडी शामिल होते हैं, जैसे हॉर्सरैडिश पेरोक्सीडेज (एचआरपी) और क्षारीय फॉस्फेट (एपी)। पारंपरिक एलिसा कंप्यूटरीकरण और एक साथ कई परखों की कार्यप्रणाली को बढ़ाकर उन्नत हो गई है, कई बाधाएं अब भी हैं जैसे कि विश्लेषण के लिए प्रसार समय बढ़ाने के लिए लंबी कुल परख अवधि की आवश्यकता, अधिक मात्रा में नमूने और अभिकर्मकों की मात्रा की आवश्यकता और ये लगभग प्रयोगशाला पर आधारित हैं

फ्लो साइटोमेट्री द्वारा पौधों के अर्क की सीधी जांच से कल्चर प्लेटों पर कॉलोनी के विकास की प्रतीक्षा किए बिना नकारात्मक लॉट को जल्दी जारी करने की अनुमति मिल जाएगी। मृत और जीवित कोशिकाओं को अलग-अलग रंगों में रंगकर कोशिकाओं की व्यवहार्यता का आकलन करने के लिए झिल्ली अखंडता के आधार पर फ्लोरोसेंट मार्करों का चयन किया जा सकता है। थर्मल इमेजिंग पौधों के तनाव को दर्शाने, पता लगाने और मापने का एक मजबूत तरीका है जो अजैविक और जैविक कारकों द्वारा पानी की स्थिति और उसके पेट के व्यवहार को संशोधित करता है। समय के तुलनात्मक रूप से छोटे अंतराल में किसी भी पदार्थ के तापमान को सत्यापित करने के लिए, यह बहुत फायदेमंद है क्योंकि यह गैर-स्थायी, गैर-संपर्क और गैर-विनाशकारी सेंसर है। थर्मोग्राफिक कैमरे 9-14μm की श्रृंखला में अवरक्त किरणों का निदान करते हैं और नकली रंगीन आंकड़ों में तापमान के तथ्य दिखाते हैं। इस तकनीक का उपयोग करते हुए, 470 एनएम पर गेहूं की पत्तियों में पत्ती के जंग और पाउडर फफूंदी संक्रमण का सटीक पता लगाने के लिए क्लोरोफिल प्रतिदीप्ति के अस्थायी और स्थानिक विविधताओं का विश्लेषण किया गया। रोगज़नक संक्रमण और पोषक तत्वों की कमी का शीघ्र पता लगाने के लिए क्लोरोफिल प्रतिदीप्ति इमेजिंग तकनीक थर्मल इमेजिंग की तुलना में अधिक संवेदनशील प्रतीत होती है। फंगल रोगजनकों से संक्रमित होने पर, पौधों में विशिष्ट पदार्थ जमा हो सकते हैं, जैसे कि सैलिसिलिक एसिड और फेनिलप्रोपेनॉइड यौगिक (जैसे सिनामिक एसिड, स्टिलबेन, कूमारिन और फ्लेवोनोइड) जो पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता में सबसे महत्वपूर्ण पदार्थ हैं. तदनुसार, नीले-हरे वर्णक्रमीय रेंज में प्रतिदीप्ति आशाजनक परिणाम दे सकती है, क्योंकि यह द्वितीयक मेटाबोलाइट्स के संचय को प्रतिबिंबित करने वाली एकल तनाव घटनाओं के प्रति बहुत संवेदनशील साबित हुई है।

पोलीमरेज श्रृंखला अभिक्रिया (PCR)-संवर्धन और चढ़ाना विधियों की तुलना में पीसीआर गैर-श्रमसाध्य है। विशेष पीसीआर भिन्नता के उपयोग के आधार पर, यह 5 से 24 घंटों के बीच और पहले के संवर्द्धन चरणों का उपयोग किए बिना निदान परिणाम देता है। विभिन्न पीसीआर वेरिएंट के बीच, मल्टीप्लेक्स पीसीआर सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि यह प्रत्येक लक्षित जीवाणु तनाव के विशेष जीन के लिए विभिन्न प्राइमरों की मदद से डीएनए के कोडिंग क्षेत्रों के प्रवर्धन द्वारा विभिन्न जीवों के समवर्ती निदान की अनुमति देता है।

कीटों का पता लगाने के लिए एआई-सक्षम प्रणाली- गहन शिक्षण पर आधारित छवि पहचान तकनीक का उपयोग करके, अब हम पौधों की बीमारियों और कीटों का स्वचालित पता लगा सकते हैं। यह मॉडल बनाने के लिए छवि वर्गीकरण, पहचान और छवि विभाजन विधियों का उपयोग करके काम करता है जो पौधों के स्वास्थ्य पर ÷नजर रख सकते हैं÷। एआई सिस्टम उपग्रह छवियों का उपयोग करते हैं और एआई एल्गोरिदम का उपयोग करके ऐतिहासिक डेटा के साथ उनकी तुलना करते हैं और पता लगाते हैं कि क्या कोई कीट उतरा है और किस प्रकार का कीट उतरा है जैसे टिड्डी, टिड्डा, आदि और किसानों को अलर्ट भेजते हैं। अपने स्मार्टफ़ोन पर ताकि किसान आवश्यक सावधानी बरत सकें और आवश्यक कीट नियंत्रण का उपयोग कर सकें, इस प्रकार एआई किसानों को कीटों से लड़ने में मदद करता है।

आप सरसों के स्केलेरोटिनिया स्टेम रॉट को कैसे नियंत्रित करते हैं? प्रयोगशाला और पिंजरे की स्थितियों में बहु-स्थानीय क्षेत्र अध्ययनों से पता चला है कि सरसों के स्केलेरोटिनिया रॉट को बीज उपचार (@ 10 ग्राम/किग्रा) और पत्तियों पर स्प्रे (@ 0.2%) 50 DAS पर टैल्क आधारित मिश्रित फॉर्मूलेशन (2×108 cfu/g) ट्राइकोडर्मा हैमेटम (HP-20)+T के साथ प्रबंधित किया जा सकता है।

फफूंदनाशक का उपयोग फफूंद रोग को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है, जो रोग पैदा करने वाले फफूंद या फफूंद बीजाणुओं को नष्ट करके उन्हें रोकता है। इन फफूंदनाशकों के नियमित उपयोग से पर्यावरण को भी खतरा हो सकता है क्योंकि इसके अवशेष मिट्टी में रह जाते हैं जो मिट्टी के जीवों पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। पिछले कुछ वर्षों से फफूंदनाशक के अत्यधिक उपयोग के कारण सूक्ष्मजीव, मिट्टी, मानव और पशु स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों पर अधिक प्रतिकूल परिणाम सामने आए हैं। नैनो प्रौद्योगिकी फंगल प्लांट रोगजनकों सहित कृषि कीटों को नियंत्रित करने और प्रबंधित करने के लिए पर्यावरण के अनुकूल और हरित पर्यावरण विकल्पों की सुविधा प्रदान कर सकती है। नैनो आकार की सीमा विभिन्न कीटनाशक अणुओं की जैव सक्रियता को बढ़ाने में मदद करती है। नैनो कीटनाशकों के कई लाभ हैं जिनमें कम मात्रा में सक्रिय यौगिक का उपयोग, उच्च प्रभावकारिता, लंबे समय तक स्थिरता के साथ पौधे के ऊतकों में आसानी से पारगम्य, नियंत्रित रिलीज और लक्षित कीटों के लिए विशिष्ट, और कम मात्रा में रसायनों में लागू होते हैं जो पर्यावरण प्रदूषण को कम करते हैं। उपर्युक्त रोग के नियंत्रण के लिए कार्बेन्डाजिम नैनोफॉर्मूलेशन की लक्षित डिलीवरी का पता लगाया जा सकता है। कार्बेन्डाजिम के नैनो-फार्मूलेशन का लाभ यह है कि इसमें कवकनाशी की कम मात्रा की आवश्यकता होती है और इसलिए यह पौधों में रोगजनक कवकों के नियंत्रण के लिए अधिक पर्यावरण-अनुकूल विधि है।

प्रबंध: * फसल चक्र अपनाएँ; अत्यधिक संवेदनशील फसलें चार साल में एक बार से ज़्यादा न लगाएँ, जिसमें सूखी खाने योग्य फलियाँ, सूरजमुखी, सरसों और कैनोला शामिल हैं। * पिछले चार या पाँच सालों में गंभीर स्केलेरोटिनिया वाले खेत के बगल में पौधे लगाने से बचें। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित करें। * अच्छी तरह से साफ किए हुए बीज बोएँ। कैनोला के घने स्टैंड से बचें।

केंचुआ खाद उत्पादन से बदली खेती की तस्वीर: फार्म वेस्ट को बनाया समृद्धि का आधार

आशीष शिवरान, पूनम यादव एवम अशोक ढिल्लों कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़

चौ- चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत में कृषि के सामने बढ़ती उत्पादन लागत, मिट्टी की घटती उर्वराशक्ति तथा पर्यावरणीय चुनौतियाँ किसानों के लिए गंभीर चिंता का विषय हैं। ऐसे समय में कुछ प्रगतिशील किसान नवाचार और वैज्ञानिक तकनीकों को अपनाकर न केवल अपनी आय बढ़ा रहे हैं, बल्कि अन्य किसानों के लिए भी प्रेरणा बन रहे हैं। हरियाणा के महेंद्रगढ़ जिले के कनीना ब्लॉक के गांव धनौदा निवासी श्री दीपक कुमार ऐसे ही एक युवा प्रगतिशील किसान हैं, जिन्होंने केंचुआ खाद (वर्मी कम्पोस्ट) उत्पादन को अपनाकर खेती में नई दिशा प्रदान की है।

पारंपरिक खेती से नवाचार की ओर

34 वर्षीय श्री दीपक कुमार स्नातकोत्तर शिक्षित किसान हैं और पिछले छह वर्षों से कृषि कार्य से जुड़े हुए हैं। उनके पास सिंचित भूमि है, जहां वे मुख्य रूप से बाजरा-सरसों तथा कपास-गेहूं फसल चक्र अपनाते हैं। इसके साथ ही वे डेयरी व्यवसाय भी करते हैं। प्रारंभ में वे अन्य किसानों की तरह रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों पर आधारित पारंपरिक खेती करते थे। समय के साथ रासायनिक उर्वरकों की कीमतों में वृद्धि, मिट्टी की घटती उर्वराशक्ति तथा खेती की बढ़ती लागत के कारण उनका लाभ लगातार कम होने लगा। अधिक लागत और सीमित आय ने उन्हें खेती में नए विकल्प तलाशने के लिए प्रेरित किया।

बदलाव की शुरुआत

वर्ष 2023 में श्री दीपक कुमार ने कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके), महेंद्रगढ़ द्वारा आर्य (ARYA) परियोजना के अंतर्गत आयोजित केंचुआ खाद निर्माण एवं जैविक खेती संबंधी प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लिया। प्रशिक्षण के दौरान उन्हें वैज्ञानिकों द्वारा बताया गया कि खेतों और डेयरी से निकलने वाले गोबर एवं फसल अवशेषों को वैज्ञानिक तरीके से उपयोग कर उच्च गुणवत्ता वाली जैविक खाद तैयार की जा सकती है। इससे रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होगी, मिट्टी का स्वास्थ्य सुधरेगा तथा अतिरिक्त आय का स्रोत भी विकसित होगा। इस प्रशिक्षण ने उनके सोचने का दृष्टिकोण बदल दिया और उन्होंने जैविक खेती की दिशा में कदम बढ़ाने का निर्णय लिया।

केंचुआ खाद इकाई की स्थापना

जून 2023 में उन्होंने लगभग 1.50 लाख रुपये का निवेश कर तीन वर्मी बेड, केंचुए, शेड तथा अन्य आवश्यक संसाधनों के साथ अपनी वर्मी कम्पोस्ट इकाई स्थापित की। उन्होंने डेयरी से प्राप्त गोबर, खेतों के फसल अवशेष तथा अन्य जैविक पदार्थों का उपयोग कर वैज्ञानिक तरीके से केंचुआ खाद का उत्पादन प्रारंभ किया। उन्होंने वर्मी बेड, एचडीपीई शीट, फसल अवशेषों की श्रेडिंग तथा उचित नमी प्रबंधन जैसी आधुनिक तकनीकों को अपनाया, जिससे गुणवत्तापूर्ण जैविक खाद का नियमित उत्पादन संभव हुआ। इससे खेत एवं पशुओं से निकलने वाले अपशिष्टों

का बेहतर उपयोग होने लगा और फसल अवशेषों को जलाने की आवश्यकता भी समाप्त हो गई।

आर्थिक बदलाव की नई कहानी

केंचुआ खाद उत्पादन शुरू करने के बाद श्री दीपक कुमार की खेती में उल्लेखनीय परिवर्तन देखने को मिला। उन्होंने अपनी फसलों में नियमित रूप से वर्मी कम्पोस्ट का उपयोग किया, जिससे मिट्टी की उर्वराशक्ति में सुधार हुआ तथा फसलों की उत्पादकता में लगभग 20-25 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। साथ ही रासायनिक उर्वरकों पर होने वाला खर्च भी काफी कम हो गया। उन्होंने तैयार वर्मी कम्पोस्ट को 25 किलोग्राम पैक में स्थानीय किसानों, नर्सरियों तथा जैविक खेती करने वाले किसानों को सीधे बेचना शुरू किया। इससे उनकी आय का एक नया एवं स्थायी स्रोत विकसित हुआ। आर्थिक दृष्टि से यह पहल अत्यंत सफल रही। जहां पहले उनकी खेती से शुद्ध लाभ लगभग ?1.20 लाख प्रति हेक्टेयर था, वहीं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन एवं विपणन अपनाने के बाद यह बढ़कर लगभग रू. 8.25 लाख प्रति हेक्टेयर तक पहुंच गया। सकल आय में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई तथा लाभ-लागत अनुपात (B Ratio) में सुधार दर्ज किया गया। इससे यह स्पष्ट हुआ कि वैज्ञानिक तकनीकों को अपनाकर कृषि को अधिक लाभकारी बनाया जा सकता है।

पर्यावरण संरक्षण में योगदान

श्री दीपक कुमार का मॉडल केवल आर्थिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने खेतों में फसल अवशेष जलाने की बजाय उनका उपयोग केंचुआ खाद बनाने में किया। इससे वायु प्रदूषण में कमी आई तथा मिट्टी में जैविक कार्बन एवं सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ी। गोबर एवं अन्य जैविक अपशिष्टों का वैज्ञानिक उपयोग होने से स्वच्छता एवं संसाधनों के संरक्षण को भी बढ़ावा मिला।

आज उनकी खेती रासायनिक उर्वरकों पर कम निर्भर है और अधिक टिकाऊ एवं पर्यावरण-अनुकूल बन चुकी है।

समाज के लिए प्रेरणा

श्री दीपक कुमार की सफलता ने आसपास के किसानों को भी नई दिशा दी है। उन्होंने अपनी इकाई के माध्यम से तीन स्थानीय लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने 25 से अधिक किसानों को केंचुआ खाद निर्माण एवं जैविक खेती का प्रशिक्षण एवं मार्गदर्शन देकर प्रेरित किया है। कृषि विज्ञान केंद्र, महेंद्रगढ़ ने भी उनके नवाचार एवं जैविक खेती को बढ़ावा देने के प्रयासों की सराहना की है। आज उनके गांव तथा आसपास के क्षेत्रों के किसान उनकी इकाई का भ्रमण कर इस तकनीक को अपनाने के लिए प्रेरित हो रहे हैं।

भविष्य की योजनाएँ

दीपक कुमार भविष्य में अपनी वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन क्षमता बढ़ाने, एक जैविक कृषि आदान केंद्र (Organic Input Centre) स्थापित करने तथा ऑनलाइन विपणन के माध्यम से अपने उत्पाद को व्यापक बाजार तक पहुंचाने की योजना बना रहे हैं। उनका उद्देश्य अधिक से अधिक किसानों को गुणवत्तापूर्ण जैविक खाद उपलब्ध कराना तथा टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देना है।

प्रेरणादायक संदेश

दीपक कुमार का मानना है कि यदि किसान वैज्ञानिक तकनीकों को अपनाएं और खेतों तथा पशुपालन से निकलने वाले अपशिष्टों का उचित उपयोग करें, तो खेती की लागत कम होने के साथ-साथ आय में भी उल्लेखनीय वृद्धि की जा सकती है।

उनका संदेश है–

"फसल अवशेषों को जलाने के बजाय उनका उपयोग केंचुआ खाद बनाने में करें। इससे मिट्टी की उर्वराशक्ति बढ़ेगी, पर्यावरण सुरक्षित रहेगा और किसानों की आय में निरंतर वृद्धि होगी।"

निष्कर्ष

श्री दीपक कुमार की सफलता इस बात का उत्कृष्ट उदाहरण है कि कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा प्रदान किए गए वैज्ञानिक प्रशिक्षण एवं तकनीकी मार्गदर्शन को अपनाकर एक सामान्य किसान भी कृषि उद्यमी बन सकता है। उनकी यात्रा यह सिद्ध करती है कि कृषि अपशिष्ट वास्तव में 'कचरा' नहीं, बल्कि आय का एक मूल्यवान संसाधन है। उनका मॉडल टिकाऊ कृषि, पर्यावरण संरक्षण और किसानों की आय वृद्धि–तीनों उद्देश्यों को एक साथ पूरा करता है तथा अन्य किसानों के लिए एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करता है।

एकता, किरण सिंह एवं संतोष कुमारी
संसाधन प्रबंधन एवं उपभोक्ता विज्ञान विभाग
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

व्यावसायिक स्वास्थ्य एवं व्यावसायिक जोखिम (Occupational Health and Hazards)

भूमिका: किसी भी देश के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में श्रमिकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उद्योग, कृषि, निर्माण, स्वास्थ्य सेवाएँ, शिक्षा तथा अन्य सभी क्षेत्रों में कार्यरत व्यक्ति राष्ट्र की प्रगति में योगदान देते हैं। यदि कार्यस्थल सुरक्षित एवं स्वास्थ्यवर्धक न हो, तो श्रमिकों के शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसलिए व्यावसायिक स्वास्थ्य (Occupational Health) एवं व्यावसायिक जोखिम (Occupational Hazards) का अध्ययन अत्यंत आवश्यक है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) तथा अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) के अनुसार प्रत्येक श्रमिक को सुरक्षित, स्वस्थ एवं सम्मानजनक कार्यस्थल उपलब्ध कराना प्रत्येक नियोक्ता का दायित्व है। कार्यस्थल पर होने वाली दुर्घटनाओं, बीमारियों तथा स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं की रोकथाम के लिए प्रभावी सुरक्षा उपाय अपनाना आवश्यक है।

व्यावसायिक स्वास्थ्य (Occupational Health) का अर्थ- व्यावसायिक स्वास्थ्य का तात्पर्य कार्यस्थल पर कार्य करने वाले व्यक्तियों के शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य की सुरक्षा तथा उसे बनाए रखने से है। इसका उद्देश्य केवल बीमारियों का उपचार करना नहीं, बल्कि उन्हें होने से पहले रोकना भी है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार व्यावसायिक स्वास्थ्य का उद्देश्य सभी व्यवसायों में कार्यरत व्यक्तियों के स्वास्थ्य को उच्चतम स्तर पर बनाए रखना तथा कार्य के कारण होने वाली बीमारियों और दुर्घटनाओं की रोकथाम करना है।

व्यावसायिक स्वास्थ्य के उद्देश्य

* श्रमिकों के स्वास्थ्य की सुरक्षा करना। * कार्यस्थल पर दुर्घटनाओं की रोकथाम करना। * व्यावसायिक रोगों को कम करना। * सुरक्षित एवं स्वच्छ कार्य वातावरण उपलब्ध कराना। * कर्मचारियों की कार्यक्षमता एवं उत्पादकता बढ़ाना। * मानसिक तनाव एवं थकान को कम करना। * स्वास्थ्य शिक्षा एवं सुरक्षा प्रशिक्षण प्रदान करना। * कार्यस्थल पर आपातकालीन चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध कराना।

व्यावसायिक जोखिम (Occupational Hazards) का अर्थ- कार्यस्थल पर उपस्थित ऐसे सभी कारक जो श्रमिक के स्वास्थ्य, सुरक्षा अथवा जीवन के लिए हानिकारक हों, उन्हें व्यावसायिक जोखिम कहा जाता है। ये जोखिम दुर्घटनाओं, चोटों, संक्रमणों तथा दीर्घकालिक रोगों का कारण बन सकते हैं।

व्यावसायिक जोखिमों के प्रकार

1. **भौतिक जोखिम (Physical Hazards)** ये कार्यस्थल के भौतिक वातावरण से उत्पन्न होते हैं।

उदाहरण: * अत्यधिक शोर * अत्यधिक गर्मी या ठंड * कंपन (Vibration) * विकिरण (Radiation) * खराब प्रकाश व्यवस्था * विद्युत दुर्घटनाएँ

स्वास्थ्य पर प्रभाव * सुनने की क्षमता में कमी * आँखों की समस्या * जलन एवं त्वचा रोग * दुर्घटनाएँ * थकान

2. **रासायनिक जोखिम (Chemical Hazards)**

रसायनों के संपर्क में आने से उत्पन्न जोखिम।

उदाहरण * अम्ल एवं क्षार * कीटनाशक * धूल * धुआँ * गैसें * सॉल्वेंट

स्वास्थ्य पर प्रभाव * श्वसन रोग * त्वचा रोग * कैंसर * एलर्जी * विषाक्तता

3. **जैविक जोखिम (Biological Hazards)-** जीवाणु, विषाणु, फफूंद एवं परजीवियों से होने वाले जोखिम।

उदाहरण * अस्पताल * प्रयोगशालाएँ * पशुपालन * अपशिष्ट प्रबंधन

रोग * तपेदिक (TB) * हेपेटाइटिस * COVID-19 * डेंगू * मलेरिया

4. एर्गोनॉमिक जोखिम (Ergonomic Hazards)

गलत कार्य मुद्रा एवं कार्यस्थल की अनुचित डिजाइन के कारण उत्पन्न जोखिम।

उदाहरण * लंबे समय तक कंप्यूटर पर कार्य करना * भारी भार उठाना * लगातार खड़े रहना * गलत मुद्रा में बैठना

स्वास्थ्य प्रभाव

* कमर दर्द * गर्दन दर्द * जोड़ों में दर्द * मांसपेशियों की समस्या

5. **मनोसामाजिक जोखिम (Psychosocial Hazards)**

कार्य के मानसिक एवं सामाजिक दबाव से उत्पन्न जोखिम।

उदाहरण * अत्यधिक कार्यभार * नौकरी की असुरक्षा * तनाव * उत्पीड़न * कार्यस्थल पर भेदभाव

स्वास्थ्य प्रभाव * अवसाद * चिंता * अनिद्रा * मानसिक थकान

6. **यांत्रिक जोखिम (Mechanical Hazards)**

मशीनों एवं उपकरणों से होने वाले जोखिम।

उदाहरण * मशीन में हाथ फँसना * कटना * गिरना * विस्फोट

प्रभाव * चोट * विकलांगता * मृत्यु

व्यावसायिक रोग (Occupational Diseases)

कुछ रोग विशेष व्यवसायों से जुड़े होते हैं।

व्यवसाय	**प्रमुख रोग**
खदान श्रमिक	सिलिकोसिस
कपड़ा उद्योग	बाइसिनोसिस
एस्बेस्टस उद्योग	एस्बेस्टोसिस
स्वास्थ्य कर्मचारी	हेपेटाइटिस, TB
कृषि श्रमिक	कीटनाशक विषाक्तता
कंप्यूटर कर्मचारी	कार्पल टनल सिंड्रोम

व्यावसायिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक

* कार्यस्थल की स्वच्छता * वायु गुणवत्ता * प्रकाश व्यवस्था * तापमान * कार्य अवधि * कार्य का प्रकार * सुरक्षा उपकरणों की उपलब्धता * कर्मचारी का स्वास्थ्य * प्रशिक्षण

व्यावसायिक जोखिमों की रोकथाम

1. **व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरण** * हेलमेट * दस्ताने * मास्क * सुरक्षा जूते * गॉगल्स * फेस शील्ड

2. **इंजीनियरिंग नियंत्रण** * उचित वेंटिलेशन * मशीन गार्ड * धूल नियंत्रण * शोर नियंत्रण * स्वचालित मशीनें

3. **प्रशासनिक नियंत्रण** * कार्य समय का उचित निर्धारण * नियमित प्रशिक्षण * सुरक्षा नियमों का पालन * चेतावनी संकेत* जोखिम मूल्यांकन

4. **चिकित्सा उपाय** * नियमित स्वास्थ्य परीक्षण * टीकाकरण * प्राथमिक उपचार * आपातकालीन चिकित्सा सुविधा * स्वास्थ्य परामर्श

कार्यस्थल पर सुरक्षा के सामान्य नियम

* सुरक्षा निर्देशों का पालन करें। * मशीनों का उपयोग प्रशिक्षण के बाद करें। * सुरक्षा उपकरण हमेशा पहनें। * कार्यस्थल को स्वच्छ रखें। * ज्वलनशील पदार्थों का सुरक्षित भंडारण करें। * विद्युत उपकरणों की नियमित जाँच करें। * दुर्घटना होने पर तुरंत सूचना दें।

भारत में व्यावसायिक स्वास्थ्य से संबंधित प्रमुख कानून

* कर्मचारी क्षतिपूर्ति अधिनियम (EmployeesÓ Compensation Act, 1923)

* कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम (Employees' State Insurance Act, 1948)

* कारखाना अधिनियम, 1948 (Factories Act, 1948)- ऐतिहासिक रूप से औद्योगिक सुरक्षा एवं स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण कानून। * व्यावसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कार्य दशाएँ संहिता, 2020 (Occupational Safety, Health and Working Conditions Code, 2020)

व्यावसायिक स्वास्थ्य सेवाएँ * स्वास्थ्य परीक्षण * रोगों की रोकथाम * दुर्घटना नियंत्रण * स्वास्थ्य शिक्षा * पोषण संबंधी सलाह * मानसिक स्वास्थ्य सहायता * आपातकालीन सेवाएँ * पुनर्वास सेवाएँ

व्यावसायिक स्वास्थ्य में नियोक्ता की भूमिका * सुरक्षित कार्यस्थल उपलब्ध कराना। * सुरक्षा उपकरण प्रदान करना। * कर्मचारियों को प्रशिक्षण देना। * नियमित स्वास्थ्य परीक्षण करवाना। * दुर्घटनाओं की रिपोर्टिंग एवं रोकथाम करना। * कानूनों का पालन सुनिश्चित करना।

कर्मचारी की जिम्मेदारियाँ * सुरक्षा नियमों का पालन करना। * PPE का सही उपयोग करना। * दुर्घटना की सूचना देना। * कार्यस्थल को स्वच्छ रखना। * प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाग लेना।

व्यावसायिक स्वास्थ्य का महत्व

* श्रमिकों का स्वास्थ्य सुरक्षित रहता है। * दुर्घटनाओं में कमी आती है। * उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ती है। * चिकित्सा व्यय कम होता है। * कार्य संतुष्टि बढ़ती है। * अनुपस्थिति कम होती है। * उद्योग का विकास होता है। * राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था मजबूत होती है।

वर्तमान चुनौतियाँ * असंगठित क्षेत्र में सुरक्षा की कमी। * जागरूकता का अभाव। * PPE का सीमित उपयोग। * रासायनिक जोखिमों में वृद्धि। * मानसिक तनाव एवं बर्नआउट। * स्वचालन एवं नई तकनीकों से उत्पन्न नए जोखिम।

सुझाव * प्रत्येक संस्थान में सुरक्षा नीति लागू की जाए। * नियमित सुरक्षा प्रशिक्षण आयोजित किए जाएँ। * स्वास्थ्य परीक्षण अनिवार्य किए जाएँ। * कार्यस्थल पर स्वच्छता एवं वेंटिलेशन में सुधार किया जाए। * मानसिक स्वास्थ्य सहायता उपलब्ध कराई जाए। * सुरक्षा कानूनों का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाए। * जोखिम मूल्यांकन समय-समय पर किया जाए।

निष्कर्ष-व्यावसायिक स्वास्थ्य एवं व्यावसायिक जोखिम किसी भी संगठन की सफलता और श्रमिकों के कल्याण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। सुरक्षित कार्यस्थल न केवल कर्मचारियों के स्वास्थ्य की रक्षा करता है, बल्कि उनकी कार्यक्षमता, उत्पादकता तथा जीवन की गुणवत्ता में भी सुधार करता है। आधुनिक औद्योगिक विकास के साथ नए प्रकार के जोखिम सामने आ रहे हैं, इसलिए नियोक्ता, कर्मचारी तथा सरकार सभी की संयुक्त जिम्मेदारी है कि कार्यस्थलों को सुरक्षित, स्वस्थ एवं जोखिम-मुक्त बनाया जाए। जागरूकता, प्रशिक्षण, आधुनिक सुरक्षा उपायों तथा प्रभावी कानूनों के माध्यम से व्यावसायिक दुर्घटनाओं एवं रोगों में उल्लेखनीय कमी लाई जा सकती है।

✍ **डॉ. सुनील कुमार मंडल** सहायक प्राध्यापक,
क्षेत्रीय अनुसंधा नकेन्द्र, झंझारपुर- 847403
डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा,
समस्तीपुर, (बिहार)

बिहार में मखाना की खेती : तालाब प्रणाली एवं खेत प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन

बिहार में मखाना का उत्पादन आधुनिक खेती प्रणाली और पारम्परिक तालाब प्रणाली से की जाती है। इन दोनों प्रणालियों के बीच मुख्य अंतर प्रबंधन और उत्पादकता का है। खेत प्रणाली में नियंत्रित पानी (1.0-1.5 फीट) और संतुलित उर्वरकों के साथ कृषि योग्य भूमि पर खेती की जाती है, जिससे उत्पादकता अधिक और प्रबंधन आसान होता है, परन्तु इस के विपरीत, पारम्परिक तालाब प्रणाली में गहरे पानी (4-6 फीट) का उपयोग किया जाता है, जिसमें मखाना फसल की कटाई के लिए गहरे पानी में जाना पड़ता है और यह पुरी तरह से पानी के स्तर पर निर्भर करता है।

इस प्रकार आधुनिक खेत प्रणाली, पारम्परिक तालाब प्रणाली की तुलना में अधिक लाभदायक, आधुनिक एवं कम मेहनत वाली तकनीक है, जिसे बिहार के किसान कई जिलो में काफी तेजी से अपना रहे हैं। खेत प्रणाली में मखाना की अच्छीगुणवत्ता के साथ उत्पादन से अन्तराष्ट्रीय बाजार में तेजी से मांग बढ़ रही है।

आधुनिक खेत प्रणाली मखाना उत्पादन को 'कृषि' के रूप में बदल देता है, जिस से यह प्रणाली किसानों के लिए प्रति हेक्टेयर अधिक लाभदायक होगया है, जब कि पारम्परिक तालाब प्रणाली में मेहनत अधिक और आधुनिक प्रबंधन का अभावर हता है।

आधुनिक खेती प्रणाली में उच्च गुणवत्ता के साथ उत्पादन करने पर मखाना निर्यात को बढ़ावा मिल रही है जो एक सशक्त कूंजी प्रदान करताहै। इस प्रकार किसानों की आय दिन प्रतिदिन बढ़ रही है।

तालाब और खेत प्रणालियों का तुलानात्मक विवरण

मानक (पैरामीटर)	पारम्परिक तालाब प्रणाली	आधुनिक खेत प्रणाली
स्थान	तालाब, झील, गडढ़े	कृषि क्षेत्र
पानी की आवश्यकता	लगभग 4 से 6 फीट	लगभग 1.0 से 1.5 फीट
पानी का स्त्रोत	बारहमासी जल निकायों के रूप में प्राकृतिक पानी	सिंचाई का पानी या कोई पानी के अन्य बारहमासी स्त्रोत- 25
बीज की आवश्यकता	नई तालाब: 80-90 कि.ग्रा./हे., पुरानी तालाब: 30-40 कि.ग्रा./हे.	20 किलोग्राम/हेक्टेयर
कृशि प्रणाली	प्राकृतिककृत (बुआई/प्रतिरोपण)	नियंत्रित (प्रतिरोपण)
पौध घनत्व	कम (असामान पौधों की संख्या)	अधिक (सामान पौधों की संख्या)
खाद एवं उर्वरक	स्थिर पानी में अधिक गहराई के कारण बहुत कठिनहै।	पौधारोपण के पहले और बाद में बहुत आसानी से प्रयोग किया जाता है।
खरपतवार प्रबंधन	बहुत कठिन एवं थकाऊ प्रकि याहै।	ब्हुत आसान प्रकि याहै।
फसल सुरक्षा प्रबंधन	बहुत कठिन	बहुत आसान
फसल कटाई की व्यवहार्यता	अत्यन्त थकाऊ एवं गहरा पानी के कारण यह केवल कुशल व प्रशिक्षित श्रमिकों के द्वारा ही किया जाता है।	अत्यन्त सरल एवं उथली पानी के कारण यह अकुशल व्यक्तियों के द्वारा भी किया जा सकता है।
फसल वृद्धि की गति	धीमी गति से होती है।	तेज गति से होती है।
फसल अवधि	लम्बी अवधि (8 से 10 महीने)	कम अवधि (5-6 महीने)
फसल सघनता	सामान्यत: एकल फसल (100 प्रतिशत)	प्राय: दोहरी व तिसरी फसल संभव (200-300 प्रतिशत)
फसल प्रणाली की गहनता	मखाना के साथ जलीय अखरोट, मखाना के साथ मछली पालन	मखाना-सिंघाड़ा, मखाना-बरसीम, मखाना-धान, मखाना-गेहूँ
एक वर्ष में अधिकतम फसलों की संख्या	दो	तीन
अनाज एवं चारे उत्पादन की संभावना	संभव नहीं है।	जलीय अखरोट, धान, गेहूँ, बरसीम और अन्य फसलों को नियमित आर्वतन में उगाया जा सकता है।
बीज उत्पादन कम	(1.8 से 2.2 टन/हे.)	30 से 40 प्रतिशत अधिक (2.6 से 3.0 टन/हेक्टेयर)
पूंजी	अधिक से बहुत अधिक (परिस्थिति नुसार)	मध्यम से निम्न
शुद्ध आय	निम्न से मध्यम	उच्च से बहुत उच्च
पर्यापरणीय परिस्थिति की	पारम्परिक, आधिक मानव श्रम और प्राकृतिक तालाब परिस्थिति की।	आधुनिक, कम मानव श्रम, कुशल और क्षेत्रीय परिस्थिति की।
भूमि उपयोग की संवेदनशीलता	अक्सर इस प्रणाली में एक वर्श लग जाता है तथा एक फसल के लिए ही सीमित होत है।	अत्यधिक टिकाऊ, पर्यावरण के अनुकूल। फसल-चक्र का कार्यान्वयन और गैर मौसम में दूसरी फसल उगा सकते हैं जैसे-मक्का, सिंघाड़ा, बरसीम।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज **खाद बीज एवं कीटनाशक**

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता : चीनोर रोड, छीमक, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

04/2025-26

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

✍ **नीलम उपाध्याय** पीएच.डी. शोधार्थी, उद्यानिकी विभाग, हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय (केंद्रीय विश्वविद्यालय), उत्तराखंड

जलवायु-स्मार्ट उद्यानिकी: बदलते मौसम में स्थायी उत्पादन की दिशा

परिचय

जलवायु परिवर्तन आज वैश्विक स्तर पर सबसे गंभीर चुनौतियों में से एक बन गया है। बढ़ता तापमान, अनियमित वर्षा, सूखा, बाढ़ तथा कीट-रोगों की बढ़ती घटनाएँ न केवल कृषि बल्कि उद्यानिकी क्षेत्र के लिए भी बड़ी चिंता का विषय हैं। फल, सब्ज़ी और फूल फसलों की उत्पादकता, गुणवत्ता और उपलब्धता इन परिवर्तनों से गहराई से प्रभावित होती है। ऐसे परिदृश्य में "जलवायु-स्मार्ट उद्यानिकी (Climate Smart Horticulture)" एक अभिनव दृष्टिकोण के रूप में उभरकर सामने आया है, जो उत्पादन, पर्यावरण और किसान की आय – तीनों के बीच संतुलन स्थापित करता है।

जलवायु परिवर्तन और उद्यानिकी पर प्रभाव

भारत जैसे कृषि-प्रधान देश में उद्यानिकी का योगदान कुल कृषि-उत्पादन का लगभग एक-तिहाई है। परंतु जलवायु परिवर्तन से इस क्षेत्र पर कई नकारात्मक प्रभाव पड़े हैं —

* असमय वर्षा और तापमान में असंतुलन से परागण और फल विकास प्रभावित होते हैं।
* जल की कमी से फसलों की वृद्धि रुक जाती है, विशेषकर टमाटर, खीरा और स्ट्रॉबेरी जैसी फसलों में।
* कीटों एवं रोगों का प्रकोप नए रूप में सामने आता है।
* गुणवत्ता में गिरावट और भंडारण अवधि घटने से किसानों को आर्थिक हानि होती है।

जलवायु-स्मार्ट उद्यानिकी की अवधारणा

संयुक्त राष्ट्र की खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार, "जलवायु-स्मार्ट कृषि" का उद्देश्य तीन प्रमुख लक्ष्यों को साधना है –* उत्पादकता में वृद्धि (Productivity) * लचीलापन या अनुकूलन क्षमता बढ़ाना (Resilience/Adaptation) * ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी (Mitigation)

उद्यानिकी में यह दृष्टिकोण उन तकनीकों और प्रथाओं का समावेश करता है जो जलवायु-जोखिमों को कम करते हुए उत्पादन को स्थिर रखती हैं।

मुख्य तकनीकें और उपाय

संरक्षित खेती (Protected Cultivation)

पॉलीहाउस, शेडनेट और लो-टनल खेती से पौधों को तापमान व आर्द्रता के उतार-चढ़ाव से सुरक्षा मिलती है। इससे टमाटर, शिमला मिर्च, खीरा, स्ट्रॉबेरी जैसी फसलों की पैदावार व गुणवत्ता दोनों बेहतर होती हैं।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली (Micro-Irrigation)

ड्रिप व स्प्रिंकलर से जल की 50त्न तक बचत संभव है। 'फर्टीगेशन' तकनीक से पौधों को पोषक तत्व सटीक मात्रा में मिलते हैं।

जलवायु-अनुकूल किस्में (Climate-Resilient Varieties)- उच्च तापमान, सूखा या रोग-प्रतिरोधी किस्में जैसे आम की 'आम्रपाली' या टमाटर की 'अर्का रक्षक' जैसी वैराइटीज़ किसानों को स्थिर उत्पादन देती हैं।

जैविक मल्चिंग और मृदा प्रबंधन-मल्चिंग से मिट्टी की नमी संरक्षित रहती है, खरपतवार कम होते हैं और मिट्टी का तापमान स्थिर रहता है।

सौर ऊर्जा आधारित नवाचार (Solar-Based Innovations)

सौर पंप, सोलर-ड्रायर और कोल्ड-स्टोरेज प्रणालियाँ न केवल ऊर्जा-कुशल हैं, बल्कि प्रदूषण भी कम करती हैं।

परागण प्रबंधन और जैव-विविधता संरक्षण-मधुमक्खी पालन जैसी गतिविधियाँ परागण को बढ़ाकर फलों की गुणवत्ता और उत्पादन में वृद्धि करती हैं।

सटीक कृषि (Precision Horticulture)-ड्रोन, सेंसर और GIS-आधारित तकनीकों से फसलों की स्वास्थ्य निगरानी, उर्वरक प्रबंधन और रोग पहचान संभव है।

सरकारी पहल और नीतियां

भारत सरकार जलवायु-स्मार्ट कृषि को बढ़ावा देने हेतु अनेक योजनाएँ चला रही है —* राष्ट्रीय बागवानी मिशन (NHM) * प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (PMKSY) * राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (RKVY) * ICAR-NICRA परियोजना (National Innovations on Climate Resilient Agriculture)

इन कार्यक्रमों के माध्यम से जलवायु-सहिष्णु तकनीकों, प्रशिक्षण और वित्तीय सहायता किसानों तक पहुँचाई जा रही है।

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए जलवायु-स्मार्ट उद्यानिकी अब एक विकल्प नहीं, बल्कि आवश्यकता बन चुकी है। यह तकनीक-आधारित, पर्यावरण-अनुकूल और आर्थिक रूप से लाभकारी प्रणाली है जो भविष्य की कृषि को सुरक्षित बना सकती है। किसानों, वैज्ञानिकों और नीति-निर्माताओं के समन्वय से ही इस दिशा में ठोस परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं।

01/2025-26

मोरिंगा: पोषक तत्वों से भरपूर एवं स्वास्थ्यवर्धक सब्जी

अंकिता (पीएच.डी.)
डॉ. संतोष कुमारी (वरिष्ठ वैज्ञानिक)
अंजलि कुमारी (पीएच. डी.)
शिवाली धीमान (पीएच.डी.), वाई एस परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन (हिमाचल प्रदेश) 173230

परिचय: मोरिंगा को एक जलवायु-सहिष्णु एवं बहुउद्देश्यीय फसल के रूप में बढ़ती हुई मान्यता प्राप्त हो रही है, जिसका सतत कृषि में महत्वपूर्ण योगदान है। इसकी तीव्र वृद्धि, अधिक जैव-द्रव्य उत्पादन तथा सीमांत मिट्टियों के प्रति अनुकूलन क्षमता इसे कम लागत एवं वर्षा आधारित कृषि प्रणालियों के लिए उपयुक्त बनाती है। यह पौधा कृषि वानिकी, जैविक खेती तथा मृदा संरक्षण में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है, जिससे मृदा स्वास्थ्य और पर्यावरणीय स्थिरता में सुधार होता है। मोरिंगा के बीज तेल निष्कर्षण और प्राकृतिक जल शुद्धिकरण में उपयोगी हैं, जबकि इसकी पत्ती के अर्क फसल उत्पादन में प्रभावी जैव-उत्तेजक के रूप में कार्य करते हैं। यह फसल मूल्य संवर्धन और लघु-स्तरीय उद्यमों के माध्यम से ग्रामीण आजीविका को भी सुदृढ़ बनाती है। इसके अतिरिक्त, मोरिंगा की पत्तियाँ प्रोटीन, आवश्यक अमीनो अम्लों, विटामिनों तथा खनिजों से भरपूर होती हैं, जो कुपोषण और पोषण असुरक्षा को कम करने में सहायक हैं।

मोरिंगा एक अत्यधिक व्यापक रूप से उगाया जाने वाला बहुउद्देशीय वृक्ष है। इसके अपरिपक्व फल, कोमल पत्तियाँ तथा फूल सामान्यतः भोजन पकाने में उपयोग किए जाते हैं। भारत में यह वृक्ष ड्रमस्टिक, सहजन अथवा सोहंजना के नाम से जाना जाता है तथा विभिन्न क्षेत्रों में इसके स्थानीय नाम प्रचलित हैं। पौधे का प्रत्येक भाग अपने विविध कार्यात्मक, औषधीय एवं न्यूट्रास्यूटिकल लाभों के लिए जाना जाता है। कोमल फलियों का मुख्य रूप से सब्जी के रूप में उपभोग किया जाता है, जबकि विभिन्न क्षेत्रों में इस वृक्ष का महत्वपूर्ण औषधीय उपयोग भी किया जाता है। यह एक पर्णपाती वृक्ष है जिसकी छाल सिल्वर-ग्रे रंग की होती है तथा यह 10-12 मीटर तक ऊँचा होता है। इसके उत्कृष्ट पोषणीय, औषधीय एवं औद्योगिक उपयोगों के कारण इसे "चमत्कारी वृक्ष", "अद्भुत वृक्ष" अथवा "बहुउद्देशीय वृक्ष" कहा जाता है। गर्म एवं शुष्क जलवायु के प्रति इसकी उत्कृष्ट अनुकूलन क्षमता, विशेषकर उत्तर-पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों, मध्य भारत तथा प्रायद्वीपीय भारत के शुष्क क्षेत्रों में, इसके महत्व को और अधिक बढ़ाती है। मोरिंगा को विश्वभर में एक पोषक तत्वों से भरपूर "सुपरफूड" के रूप में मान्यता प्राप्त है।

मोरिंगा के पोषणीय गुण-मोरिंगा वृक्ष का प्रत्येक भाग कैल्शियम, फास्फोरस, मैंगनीज एवं जिंक जैसे आवश्यक खनिजों का मूल्यवान स्रोत है, जबकि इसकी पत्तियाँ एवं फूल मानव एवं पशुधन दोनों के लिए आयरन की दृष्टि से अत्यंत उपयोगी माने जाते हैं। इसकी पत्तियाँ, तना, फल, फूल तथा फलियाँ अत्यधिक पौष्टिक सब्जियों के रूप में व्यापक रूप से उपयोग की जाती हैं।

* मोरिंगा की पत्तियों में मटर की तुलना में अधिक प्रोटीन तथा पालक की तुलना में अधिक आयरन पाया जाता है। इसके बीजों से प्राप्त तेल में ओलिक, पामिटिक, लिनोलिक, पामिटोलेइक एवं स्टीयरिक फैटी एसिड प्रचुर मात्रा में होते हैं। पत्तियाँ कैल्शियम एवं पोटैशियम से भरपूर होती हैं, जबकि बीज एवं दाने ताँबे का अच्छा स्रोत हैं।

* पत्तियाँ एवं बीज दोनों ही विटामिन ग्र एवं C के उत्कृष्ट स्रोत हैं। फूलों में उच्च मात्रा में फिनोलिक यौगिक एवं फ्लेवोनॉइड्स पाए जाते हैं, जिसके कारण इन्हें शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट पूरक के रूप में अनुशंसित किया जाता है, जिनकी मात्रा पत्तियों से भी अधिक पाई जाती है, जो पौधे का सबसे अधिक व्यावसायीकृत भाग है।

* पोषक तत्वों की तुलना से यह स्पष्ट होता है कि पत्तियों में फलियों की तुलना में दो गुना से अधिक प्रोटीन तथा काफी अधिक कैल्शियम एवं आयरन पाया जाता है। पोटैशियम पत्तियों एवं फलियों दोनों में प्रचुर मात्रा में होता है, जबकि फलियों में पत्तियों की तुलना में चार गुना से अधिक फास्फोरस पाया जाता है।

मोरिंगा की पत्तियाँ

* मोरिंगा की पोषणीय कमी को दूर करने की क्षमता इसमें पाए जाने वाले विटामिन, खनिज एवं प्रोटीन के कारण है, जिनमें बीटा-कैरोटीन, आयरन, जिंक, विटामिन C तथा सभी आवश्यक अमीनो अम्ल शामिल हैं।

* यह पौधा मैक्रो एवं माइक्रो पोषक तत्वों तथा जैव-सक्रिय यौगिकों से भरपूर है, जो शरीर की सामान्य शारीरिक क्रियाओं को बनाए रखने, प्रतिरक्षा प्रणाली को सुदृढ़ करने तथा कुछ रोगों की रोकथाम में सहायक होते हैं।

* मोरिंगा को फाइटोकेमिकल्स का एक समृद्ध स्रोत भी माना जाता है, जिसके कारण यह कार्यात्मक एवं औषधीय खाद्य उत्पादों के लिए उपयुक्त है। इसमें विटामिन A, विटामिन C तथा दूध के समान प्रोटीन मात्रा पाई जाती है।

* इस पौधे में एल्कलॉइड्स, प्रोटीन, क्विनिन, सैपोनिन्स, फ्लेवोनॉइड्स, टैनिन्स, स्टेरॉयड्स, ग्लाइकोसाइड्स, स्थिर तेल एवं वसा जैसे विविध सक्रिय फाइटोघटक भी पाए जाते हैं।

मानव उपभोग में मोरिंगा

* मोरिंगा की कोमल युवा पत्तियाँ खाद्य होती हैं तथा इन्हें पालक की तरह पकाया जाता है या सूप एवं सलाद में मिलाया जाता है। ये प्रो-विटामिन A, विटामिन B एवं C, आवश्यक खनिजों तथा मेथियोनीन एवं सिस्टीन जैसे सल्फर युक्त अमीनो अम्लों का उत्कृष्ट स्रोत हैं।

* अपरिपक्व हरी फलियाँ स्वादिष्ट होती हैं तथा इन्हें उबालकर हरी सेम की तरह खाया जाता है। इन्हें तब तोड़ना सर्वोत्तम होता है जब ये आसानी से टूट जाएँ और रेशेदार न हों।

* बीजों का सेवन पीले होने से पहले हरे अवस्था में करने की सिफारिश की जाती है। इसके अतिरिक्त, जड़ों को सिरके में पकाकर तीखी चटनी के रूप में भी उपयोग किया जाता है।

* शुष्क मौसम के अंत में, जब अन्य पत्तेदार सब्जियाँ उपलब्ध नहीं होतीं, तब कोमल अंकुर एवं युवा पत्तियों का उपयोग सब्जी, मसाले या सलाद के रूप में किया जाता है, ठीक धनिया पत्तियों की तरह।

* पत्तियों को अक्सर सुखाकर पाउडर बना लिया जाता है और ऑफ-सीजन में उपयोग हेतु संग्रहित किया जाता है। मोरिंगा पत्ती पाउडर एक प्राकृतिक आहार पूरक के रूप में उपयोग किया जाता है।

* छिले हुए बीज (कर्नेल) से लगभग 40% तेल प्राप्त होता है जिसे बेन ऑयल कहा जाता है। यह अत्यंत पौष्टिक होता है तथा इसकी फैटी एसिड संरचना जैतून के तेल के समान होती है।

मोरिंगा के औषधीय उपयोग

बीज: मोरिंगा बीजों के अर्क लिपिड पेरॉक्साइड को कम करके यकृत की रक्षा करने में सहायक होते हैं। फलियों के एथेनॉलिक अर्क से थायोकार्बामेट एवं आइसोथायोसायनेट ग्लाइकोसाइड्स जैसे उच्च रक्तचाप रोधी यौगिक प्राप्त हुए हैं। बीजों में लगभग 35-40% तेल पाया जाता है, जो अपने चिकित्सीय गुणों के लिए जाना जाता है। फलियों का उपयोग दस्त, यकृत एवं प्लीहा विकारों तथा जोड़ों के दर्द के उपचार में भी किया जाता है।

पत्तियां: ताज़ी पत्ती का रस एवं जलीय बीज अर्क ने स्यूडोमोनास एरुजिनोसा एवं स्टैफिलोकोकस ऑरियस के विरुद्ध अवरोधक प्रभाव दर्शाया है। पत्तियों का उपयोग घावों पर लेप के रूप में, सिरदर्द में कनपटियों पर मलने तथा बवासीर, ज्वर, गले में दर्द, ब्रोंकाइटिस, आँख एवं कान के संक्रमण तथा स्कर्वी के उपचार में किया जाता है। पत्ती रस को रक्त शर्करा को नियंत्रित करने एवं ग्रंथियों की सूजन को कम करने में सहायक माना जाता है। अर्क ने मवादयुक्त त्वचा संक्रमणों के विरुद्ध भी प्रबल जीवाणुरोधी क्रिया प्रदर्शित की है।

जड़ें: मोरिंगा की जड़ों में टेरिगोस्पर्मिन नामक सक्रिय एंटीबायोटिक पाया जाता है, जो जीवाणुरोधी एवं कवकरोधी गुण रखता है। परंपरागत रूप से इनका उपयोग हृदय उत्तेजक, अल्सररोधी एवं सूजनरोधी औषधि के रूप में किया जाता है।

फूल: फूल औषधीय रूप से उत्तेजक एवं कामोत्तेजक माने जाते हैं। इनका उपयोग सूजन, मांसपेशीय विकारों, हिस्टीरिया, ट्यूमर एवं प्लीहा वृद्धि के उपचार में किया जाता है। ये सीरम कोलेस्ट्रॉल, फॉस्फोलिपिड एवं ट्राइग्लिसराइड्स को कम करने तथा यकृत एवं हृदय की लिपिड प्रोफाइल में सुधार करने में सहायक होते हैं।

तना छाल: छाल से बनी औषधियाँ नेत्र रोगों में रगड़ एवं फफोले उत्पन्न करने वाले एजेंट के रूप में तथा उन्माद के उपचार में प्रयुक्त होती हैं। इसका उपयोग प्लीहा वृद्धि को रोकने, गर्दन में तपेदिक ग्रंथियों को कम करने, ट्यूमर नष्ट करने एवं अल्सर को भरने में किया जाता है। जड़ छाल का रस कान दर्द में कान में डाला जाता है तथा दाँत के दर्द में दंत गुहाओं में लगाया जाता है, जिसमें क्षयरोगरोधी गतिविधि भी पाई गई है। तने के अर्क ऑक्सीडेटिव तनाव से उत्पन्न मोतियाबिंद के विरुद्ध भी सुरक्षा प्रदान करते हैं, क्योंकि ये लेंस की प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट प्रणाली को सुदृढ़ करते हैं।

सारांश: मोरिंगा को इसके असाधारण पोषणीय, औषधीय एवं कार्यात्मक गुणों के कारण एक अत्यंत मूल्यवान पौधा माना जा सकता है। पौधे के लगभग सभी भाग पत्तियाँ, फलियाँ, फूल, बीज एवं छाल प्रोटीन, विटामिन, खनिज, अमीनो अम्ल तथा जैव-सक्रिय यौगिकों के समृद्ध स्रोत हैं। एंटीऑक्सीडेंट, फिनोलिक एवं सूजनरोधी घटकों की उपस्थिति इसे विभिन्न स्वास्थ्य विकारों के प्रबंधन में उपयोगी बनाती है। इसका न्यूट्रास्यूटिकल महत्व विशेष रूप से विकासशील देशों में कुपोषण एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने में सहायक है। स्वास्थ्य लाभों के अतिरिक्त, मोरिंगा में जीवाणुरोधी, मधुमेहरोधी, हृदय-संरक्षक एवं यकृत-संरक्षक गुण भी पाए जाते हैं। यह पौधा पारंपरिक औषधीय प्रणालियों तथा आधुनिक औषधि विज्ञान में भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों एवं सीमांत भूमि में उगने की इसकी क्षमता इसके कृषि महत्व को और बढ़ाती है। इसके अतिरिक्त, सब्जी, औषधीय संसाधन एवं औद्योगिक कच्चे माल के रूप में इसके बहुउद्देशीय उपयोग इसे खाद्य सुरक्षा में भी योगदानकर्ता बनाते हैं। यह पर्यावरण-अनुकूल फसल सतत कृषि प्रणालियों को समर्थन प्रदान करती है। समग्र रूप से, मोरिंगा एक "चमत्कारी वृक्ष" के रूप में पोषण सुधार, स्वास्थ्य संवर्धन एवं सतत विकास की अपार संभावनाएँ रखता है।

✍ **सृष्टि** पीएच.डी. शोधार्थी, सब्जी विज्ञान विभाग, बागवानी महाविद्यालय, डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन, (हिमाचल प्रदेश)

सब्जी उत्पादन के लिए ड्रोन तकनीक

सारांश-सटीक कृषि के तीव्र विकास ने आधुनिक कृषि पद्धतियों को बदल दिया है, और ड्रोन तकनीक सबसे आशाजनक नवाचारों में से एक बनकर उभरी है। सब्जी उत्पादन में, ड्रोन किसानों को फसल की निगरानी, रोग का पता लगाने, पोषक तत्व प्रबंधन, सिंचाई मूल्यांकन और सटीक कीटनाशक प्रयोग के लिए कुशल उपकरण प्रदान करते हैं। उच्च-रिज़ॉल्यूशन वाली हवाई छवियों और वास्तविक समय के क्षेत्र डेटा को कैप्चर करके, ड्रोन सूचित निर्णय लेने में सक्षम बनाते हैं, इनपुट लागत को कम करते हैं, पर्यावरणीय प्रभाव को कम करते हैं और फसल उत्पादकता को बढ़ाते हैं। चूंकि सब्जी की खेती में गहन प्रबंधन और समय पर हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है, इसलिए ड्रोन तकनीक को एकीकृत करने से टिकाऊ कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देते हुए उत्पादन क्षमता में उल्लेखनीय सुधार हो सकता है। यह लेख सब्जी उत्पादन में ड्रोन तकनीक के अनुप्रयोगों, लाभों, चुनौतियों और भविष्य की संभावनाओं का पता लगाता है।

परिचय-सब्जी की खेती पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने, खेती से आय बढ़ाने और कृषि अर्थव्यवस्था को सहारा देने में अहम भूमिका निभाती है। हालाँकि, सब्जी की फसलें मौसम में बदलाव, कीटों के हमले, बीमारियों और पोषक तत्वों की कमी के प्रति बहुत संवेदनशील होती हैं। फसल की निगरानी और प्रबंधन के पारंपरिक तरीकों में अक्सर काफी मेहनत, समय और पैसे की ज़रूरत होती है, जिससे खेत की समस्याओं पर तुरंत प्रतिक्रिया देना मुश्किल हो जाता है।

प्रिसिजन एग्रीकल्चर (सटीक खेती) के आने से ऐसी नई तकनीकें आई हैं जिनसे खेत-खास (साइट-स्पेसिफिक) फसल प्रबंधन संभव हो गया है। इन तकनीकों में, अनमैन्ड एरियल व्हीकल्स (UAVs), जिन्हें आमतौर पर ड्रोन कहा जाता है, ने खेत की जानकारी तेज़ी से इकट्ठा करने और बहुत सटीकता के साथ कृषि कार्य करने की अपनी क्षमता के कारण काफी ध्यान आकर्षित किया है। एडवांस्ड कैमरे, मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर, थर्मल इमेजिंग सिस्टम और [illegible] तकनीक से लैस ड्रोन सटीक, समय पर और डेटा-आधारित समाधान प्रदान करके सब्जी की खेती में क्रांति ला रहे हैं।

सब्जी उत्पादन में ड्रोन का इस्तेमाल

1. **फसल की निगरानी**- ड्रोन किसानों को सब्जी के खेतों का ऊपर से पूरा नज़ारा दिखाते हैं, जिससे फसल के बढ़ने और विकास पर लगातार नज़र रखी जा सकती है। हाई-रिज़ॉल्यूशन वाली तस्वीरें फसल के असमान विकास, खराब अंकुरण, पोषक तत्वों की कमी, पानी की कमी और विकास में गड़बड़ी जैसी समस्याओं को गंभीर होने से पहले ही पहचानने में मदद करती हैं।

2. **कीटों और बीमारियों का जल्दी पता लगाना**- सब्जी की फसलें कीटों और बीमारियों के प्रति बहुत संवेदनशील होती हैं, जो तेज़ी से फैल सकती हैं। ड्रोन पर लगे मल्टीस्पेक्ट्रल और थर्मल सेंसर पौधों में दिखाई देने वाले लक्षणों से पहले ही उनमें होने वाले सूक्ष्म शारीरिक बदलावों का पता लगा सकते हैं। जल्दी पता चलने से किसान समय पर रोकथाम के उपाय कर सकते हैं, जिससे पैदावार का नुकसान कम होता है और कीटनाशकों का इस्तेमाल भी कम होता है।

3. **पोषक तत्वों का सटीक प्रबंधन**-खेतों में पोषक तत्वों की कमी अक्सर असमान रूप से होती है। ड्रोन से तैयार किए गए वेजिटेशन इंडेक्स, जैसे कि नॉर्मलाइज़्ड डिफरेंस वेजिटेशन इंडेक्स (NDVI), फसल की मज़बूती का आकलन करने और पोषक तत्वों की कमी वाले क्षेत्रों की पहचान करने में मदद करते हैं। यह जानकारी खास जगहों पर खाद डालने में मदद करती है, जिससे पोषक तत्वों के इस्तेमाल की क्षमता बेहतर होती है और अनावश्यक खाद का इस्तेमाल कम होता है।

4. **कीटनाशकों का सटीक छिड़काव**- आधुनिक कृषि ड्रोन रसायनों की कम से कम बर्बादी के साथ लक्षित क्षेत्रों में समान रूप से कीटनाशकों का छिड़काव कर सकते हैं। छिड़काव के पारंपरिक तरीकों की तुलना में, ड्रोन से छिड़काव करने पर मज़दूरों की ज़रूरत कम होती है, ऑपरेटर का खतरनाक रसायनों से संपर्क कम होता है, और छिड़काव की क्षमता बेहतर होती है, खासकर उन खेतों में जहाँ पहुँचना मुश्किल हो या जहाँ पानी भरा हो।

5. **सिंचाई प्रबंधन**- थर्मल इमेजिंग की मदद से ड्रोन सब्जी के खेतों में नमी के अंतर का पता लगा सकते हैं। किसान पानी की कमी या ज़्यादा नमी वाले क्षेत्रों की पहचान कर सकते हैं और उसी के अनुसार सिंचाई का समय तय कर सकते हैं। पानी का कुशल प्रबंधन संसाधनों को बचाता है और साथ ही फसल की सेहत और उत्पादकता में सुधार करता है।

6. **पैदावार का अनुमान**- ड्रोन से ली गई तस्वीरों और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस-आधारित विश्लेषण से फसल के बायोमास, पौधों की संख्या, कैनोपी कवरेज (पौधों के फैलाव) और संभावित पैदावार का अनुमान लगाया जा सकता है। पैदावार का सटीक अनुमान किसानों को कटाई के समय, भंडारण, परिवहन और बाज़ार में आपूर्ति की योजना बनाने में मदद करता है।

7. **खरपतवार की पहचान**- उन्नत इमेज एनालिसिस तकनीकों की मदद से ड्रोन खरपतवार और सब्जी की फसलों के बीच अंतर कर सकते हैं। इससे खास जगहों पर खरपतवार नाशक दवा डालने या यांत्रिक तरीके से खरपतवार हटाने में आसानी होती है, जिससे उत्पादन लागत कम होती है और पर्यावरण प्रदूषण भी कम होता है।

ड्रोन टेक्नोलॉजी के फ़ायदे

सब्जी उगाने वालों के लिए ड्रोन अपनाने के कई फ़ायदे हैं-

* खेती की बड़ी जगहों की तेज़ी से निगरानी।
* कीड़ों, बीमारियों और पोषक तत्वों की कमी का जल्दी पता लगाना।
* मज़दूरी और काम-काज की लागत में कमी।
* खाद और कीटनाशक के इस्तेमाल में बेहतर सटीकता।
* पानी के इस्तेमाल की बेहतर क्षमता।
* फ़सल की ज़्यादा पैदावार और बेहतर क्वालिटी।
* सही मात्रा में इनपुट के इस्तेमाल से पर्यावरण प्रदूषण में कमी।
* डिजिटल डेटा का इस्तेमाल करके खेत का रिकॉर्ड रखने और फ़ैसले लेने में सुधार।

चुनौतियां

फ़ायदों के बावजूद, कई रुकावटें सब्जी की खेती में ड्रोन को बड़े पैमाने पर अपनाने में बाधा डालती हैं-

* शुरुआत में ज़्यादा निवेश और रखरखाव का खर्च।
* किसानों में तकनीकी जानकारी की कमी।
* बैटरी लाइफ़ और काम करने की रेंज की सीमाएं।
* मौसम की स्थिति का ड्रोन की उड़ानों पर असर।
* ड्रोन के इस्तेमाल से जुड़े नियम-कानून।
* ग्रामीण इलाकों में कुशल सर्विस देने वालों तक सीमित पहुँच।

किसानों को ट्रेनिंग, आर्थिक मदद, तकनीकी तरक्की और सरकार की सहयोगी नीतियों के ज़रिए इन चुनौतियों का समाधान करने से ड्रोन-आधारित खेती को तेज़ी से अपनाया जा सकेगा।

निष्कर्ष-ड्रोन टेक्नोलॉजी सटीक, समय पर और डेटा-आधारित खेत प्रबंधन को संभव बनाकर आधुनिक सब्जी उत्पादन के लिए एक क्रांतिकारी उपकरण के रूप में उभरी है। फ़सल की निगरानी, कीड़ों और बीमारियों का पता लगाने, पोषक तत्वों के प्रबंधन, सिंचाई की योजना बनाने, सटीक छिड़काव और पैदावार का अनुमान लगाने में इसके इस्तेमाल से उत्पादन क्षमता में काफ़ी सुधार होता है, साथ ही मज़दूरी, इनपुट लागत और पर्यावरण पर पड़ने वाले असर में भी कमी आती है। हालाँकि लागत, तकनीकी विशेषज्ञता और नियमों से जुड़ी चुनौतियां अभी भी बनी हुई हैं, लेकिन लगातार तकनीकी तरक्की और बढ़ती जागरूकता से इसे बड़े पैमाने पर अपनाए जाने की उम्मीद है। सटीक खेती के तरीकों के साथ ड्रोन टेक्नोलॉजी को जोड़ने से सब्जी की उत्पादकता बढ़ाने, संसाधनों के संरक्षण को सुनिश्चित करने और टिकाऊ कृषि विकास में योगदान देने की अपार संभावनाएं हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

डॉ. ममता गोचर शोधार्थी, आनुवंशिक संसाधन एवं कृषि-प्रौद्योगिकी प्रभाग, भारतीय समवेत ओषध संस्थान, जम्मू (जम्मू ओर कश्मीर)

डॉ. राजेन्द्र गोचर सहायक आचार्य (सस्य विज्ञान), कृषि अनुसंधान उपकेन्द्र, खानपुर (कृषि विश्वविद्यालय, कोटा)

कपिल कुमार नागर तकनीकि सहायक, कृषि अनुसंधान उपकेन्द्र, खानपुर (कृषि विश्वविद्यालय, कोटा)

कालमेघ की वैज्ञानिक खेती : कम लागत में औषधीय फसल से लाखों की कमाई

भूमिका-भारत में औषधीय पौधों की खेती का चलन तेजी से बढ़ रहा है। किसानों का रुझान अब ऐसी फसलों की ओर बढ़ रहा है, जिनकी बाजार में लगातार मांग बनी रहती है और जिनसे कम समय में अच्छा मुनाफा कमाया जा सके। ऐसी ही एक महत्वपूर्ण औषधीय फसल है कालमेघ (एन्ड्रोग्राफिस पेनीकुलेटा) जोकि एकेन्थेसी कुल से संबंधित एक महत्वपूर्ण आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक, एलोपैथी तथा देशी चिकित्सा पद्धति में व्यापक उपयोग किया जाने वाला औषधीय पौधा है। इसको कल्पनाथ, करियातु हरा चिरायता तथा उड़िया में भुईनिम्बा भी कहते है। यह उत्तर प्रदेश से असम तक, मध्यप्रदेश, जम्मू, तमिलनाडु केरल तथा उड़ीसा आदि स्थानों में मैदानी भागों में विस्तृत रूप से वितरित है। इसकी गुणवत्ता एवं विश्व स्तर पर मांग को देखते हुए इसकी खेती का प्रसार करने की आवश्यकता है। इसके तने, पत्ती, पुष्पक्रम आदि सम्पूर्ण भागों का दवा में प्रयोग होता है। यह कफ पित्तशामक, यकृत उत्तेजक, लीवर के रोगों में प्रयुक्त, अग्निमंदता दूर करके यकृत वृद्धि कम करने वाला, कब्ज व कृमि रोगों में लाभकारी, पित्तसारक व रेचक औषधि है। तेज बुखार में भी लाभकारी है। अपने ज्वरधन रक्त शोधक गुण के कारण मलेरिया जन्य यकृत, प्लीहा वृद्धि तथा अल्कोहलिक व न्यूट्रीशनल सिरोसिस में प्रयुक्त होता है। ज्वर के बाद की दुर्बलता दूर करता है। डायबिटीज में भी लाभकारी है।

महत्वपूर्ण रसायनीक तत्व -इस पौधे में कई प्रकार के कड़वे औषधीय तत्व पाए जाते हैं, जिनमें एन्ड्रोग्राफोलाइड सबसे प्रमुख माना जाता है। इसके अलावा एन्ड्रोग्राफिन, पेनीकुलीन और फ्लेवोन जैसे तत्व भी इसमें मौजूद रहते हैं। यही कारण है कि दवा कंपनियां इसकी बड़ी मात्रा में खरीदी करती हैं।

जलवायु-कालमेघ की खेती गर्म और आर्द्र जलवायु में बेहतर होती है। यह फसल सालाना वर्षा 500 से 1400 मिमी तक होती हो। 5 डिग्री सेल्सियस से 45 डिग्री सेल्सियस तक का तापमान इसके लिए उपयुक्त माना जाता है। उतरी भारत प्रमुख रूपसे मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, बिहार, राजस्थान के कई हिस्सों में इसकी खेती खरीफ जुलाई से नवंबर तक सफलतापूर्वक की जा रही है। दक्षिण भारत (पश्चिम बंगाल, और उड़ीसा) क्षेत्र में इस तरह की जलवायु अवस्था मध्य अक्टुबर से अन्त फरवरी या मार्च के प्रथम सप्ताह तक होती है।

मिट्टी -कालमेघ की खेती के लिए मध्यम उर्वरता एवं अच्छी जल निकासी वाली बलुई दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त मानी जाती है। मिट्टी का पीएच मान 6 से 8 के बीच होना चाहिए। जलभराव वाली भूमि में इसकी खेती करने से पौधों को नुकसान हो सकता है।

खेत की तैयारी-इसकी खेती वर्षा ऋतु में की जाती है। खेत तैयार करने के लिए गर्मियों में गहरी जुताई करनी चाहिए ताकि मिट्टी भुरभुरी बन सके। अंतिम जुताई से पहले प्रति हेक्टेयर

लगभग 10 टन गोबर की सड़ी खाद खेत में मिला देनी चाहिए। तथा पाटा लगाकर भूमि को समतल कर देते हैं।

प्रवर्धन-कालमेघ का बीज छोटा होता है। तथा 5-6 महीने सुषुप्तावस्था में रहता है। इसके बीजों को नर्सरी में उगाते हैं। एक हेक्टेयर कालमेघ उगाने हेतु 10 X 2 मीटर नाप की तीन क्यारियों की आवश्यकता होती है। इस क्यारियों को अच्छी तरह मई में गुड़ाई करके भुरभुरी व समतल बनाते हैं। जीवांश पदार्थ अथवा सड़ी गोबर की खाद का प्रयोग स्वस्थ नर्सरी उगाने हेतु क्यारियों में करना चाहिए। मई के तीसरे सप्ताह में 250 से 300 ग्राम बीज जिसका अंकुरण 70-80 प्रतिशत हो को क्यारी की सतह पर मिट्टी मिलाकर छिड़क देना चाहिए। बीजों को हल्की मिट्टी से एक मुलायम परत से ढक देना चाहिए। क्यारियों को उपयुक्त मल्व से ढ़ककर, क्यारी की आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करते रहना याहिए। जब बीज अंकुरित होकर पौधे निकल आये (6-7 दिन) तुरन्त मल्व को हटा देना चाहिए। यदि संभव हो तो सीडलिंग को छाया में मई-जून में उगाना चाहिए क्योंकि उस समय काफी गर्मी होती है।

रोपण-अच्छी तरह से तैयार की हुई क्यारियों में जून के दूसरे पखवारे से जुलाई तक वर्षानुसार (एक महीने की पौध) पौध का रोपण करते है। भूमि की उर्वरता के अनुसार पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30-60 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 30-45 से.मी. रखते है। साधारणतया 30X30 सेमी. दूरी भी रख सकते है। रोपाई के एक दिन पहले क्यारियों की सिंचाई कर देना अच्छा रहता है। रोपाई दोपहर के बाद करना चाहिए। तथा पौध पूर्णरूपेण स्थापित हो जाये इसके लिये रोपण बाद अवश्य सिंचाई करनी चाहिये।

सीधी बुवाई -सीधे खेत में बीज बुवाई करके भी कालमेघ की खेती की जाती है। जून के अंतिम सप्ताह या जुलाई के पहले सप्ताह में इसकी बुवाई करना अच्छा माना जाता है। लाइन से लाइन की दूरी लगभग 30 cm और पौधे से पौधे की दूरी 10-15 cm रखनी चाहिए। बीज काफी छोटे होते हैं, इसलिए इन्हें अधिक गहराई में नहीं बोना चाहिए। अच्छे अंकुरण के लिए बीजों में मिट्टी या रेत मिलाकर बुवाई करना फायदेमंद रहता है।

खाद तथा उर्वरक- कालमेघ को कम तथा मध्य उर्वकता वाली भूमियों में उगाया जा सकता है। यदि उपलब्ध हो तो 10-15 टन सड़ी हुई गोबर की खाद को प्रयोग किया जा सकता है। साधरणतया इसको 80 किलो नत्रजन तथा 40 किलो फास्फोरस प्रति हेक्टेयर देने की आवश्यकता होती है। इसके शाकीय वृद्धि अच्छी होती है तथा उपज बढ़ जाती है। नत्रजन की मात्रा दो भागों में करके 30-45 दिन के अंतर पर डालना चाहिए। करीब 3-4 टन गोबर की खाद का प्रयोग नर्सरी में कर दिया जाता है। कम पोटाश वाली भूमि में 30 किग्रा. प्रति हेक्टयर पोटाश दिया जा सकता है।

सिंचाई और खरपतवार नियंत्रण-कालमेघ की फसल में ज्यादा सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। वर्षा के अनुसार सिंचाई की जा सकती है। रोपाई के लगभग 30 से 40 दिन बाद खेत में निराई गुड़ाई अवश्य करनी चाहिए ताकि खरपतवार नियंत्रण हो सके और पौधों की बढ़वार अच्छी रहे।

रोग और कीट से बचाव-फसल में पौध गलन की समस्या से बचने के लिए बीज उपचार जरूरी है। जैविक खेती करने वाले किसान नीम खली और जैविक कीटनाशकों का उपयोग करके भी रोग और कीट नियंत्रण कर सकते हैं।

दूसरी फसलों के साथ भी कर सकते हैं खेती-कालमेघ को कई वृक्ष आधारित खेती प्रणालियों में अंतरवर्तीय फसल के रूप में लगाया जा सकता है। नीलगिरी, आंवला, पॉपलर और अन्य वृक्षों के बीच इसकी खेती करके किसान अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं।

कटाई-अधिकतम शाक उपज प्राप्त करने हेतु 120-130 दिन बाद जब पौधों लाभग 50 प्रतिशत फूल रह जाए ओर पत्तियाँ गिरना प्रारम्भ हों तो कटाई कर देनी चाहिए। यदि एकवर्षीय रूप में फसल को जून-जुलाई में उगाया गया हो तो उसकी कटाई अकटूबर में जब फूल आना प्रारम्भ होने तब करनी चाहिए। ऐसे स्थान जहाँ इस फसल को बेकार की भूमि में, मार्जिनल भूमि पर लगाना हो उसकी दो कटाई एक सितम्बर में तथा दूसरी नवम्बर-दिसम्बर में ली जा सकती है। इसके लिए कृषि क्रियाओं का उचित प्रबन्ध आवश्यक है। जाड़े के मध्य फसल सुषुप्तावस्था में रहती है। फूल निकलने के समय पत्तियों में ऐंड्रोग्रफेलाइट की मात्रा अधिक होती है तथा यह पौधों के सम्पूर्ण भागों में पाया जाता हैं। इसलिए सम्पूर्ण पौधे के ऊपरी भाग को काट कर छाया में सुखाना चाहिए।

पैदावार-अच्छी देखरेख और वैज्ञानिक तरीके से खेती करने पर किसान एक एकड़ से लगभग 2.0 से 3.0 टन तक सूखी शाखाएं प्राप्त कर सकते हैं। इसके अलावा 50-70 ग्राम बीज उत्पादन भी अच्छा मिलता है। बाजार में सूखी सामग्री का भाव 50 से 100 रुपये प्रति किलो तक मिल जाता है। वहीं बीज की कीमत कई बार 500 से 2000 रुपये प्रति किलो तक पहुंच जाती है।

आय-व्यय-वैज्ञानिक तरीके से खेती करने पर कीसनों 15000-20000 रुपये प्रति एकड़ व्यय ओर 100000 - 120000 प्रति एकड़ शुद्ध लाभ प्राप्त हो सकते है।

किसानों को कालमेघ की खेती के लाभ

* औषधीय कंपनियों में लगातार मांग * कम लागत में अच्छी आय * सूखा सहन करने की क्षमता * कम सिंचाई में सफल खेती * अंतरवर्तीय फसल के रूप में उपयोगी * जैविक खेती के लिए उपयुक्त

श्री गणेशाय नमः
श्री सॉवलिया सेठ

किसान कृषि सेवा केन्द्र

Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com
7692967419 9109726855

हमारी सेवाएँ:-

सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौप, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर, कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।

कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते हैं।

उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।

स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company

कृषि दर्शन®
खेत-खलिहान का राजा

1988

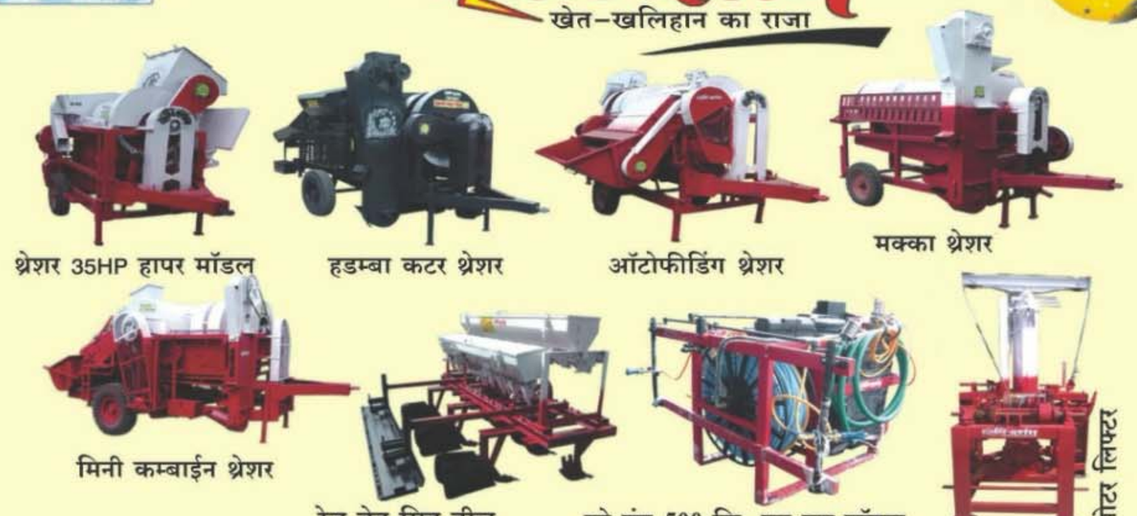

सुदर्शन इण्डस्ट्रीज
विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882
वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2025-27

R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

मध्य भारत कृषक भारती

अगस्त 2026

अगस्त माह में किसानों के लिए एडवाइजरी

धान

- रोपाई के 20-25 दिन बाद यूरिया की दूसरी टॉप ड्रेसिंग करें।
- खेत में पानी 2-5 से.मी. की गहराई तक रखें, जलनिकास की व्यवस्था करें।
- तना छेदक की निगरानी करें, लक्षण दिखाई देने पर नियंत्रण करें।

सोयाबीन

- बोआई के 25-30 दिन बाद निराई-गुड़ाई करें व खरपतवार नियंत्रण करें।
- पीली मोजेक वायरस व तना मक्खी पर नज़र रखें।
- आवश्यकता अनुसार जैविक या रासायनिक कीटनाशकों का छिड़काव करें।

मक्का

- बुवाई के 20-25 दिन बाद यूरिया की टॉप ड्रेसिंग करें।
- फॉल आर्मी वर्मी कीटों की निगरानी करें, जरूरत पड़ने पर नियंत्रण करें।
- जल जमाव से बचें, निकास की अच्छा प्रबंध करें।

कपास

- गुलाबी सुंडी की निगरानी करें, फेरोमोन ट्रेप लगाएँ।
- 60-65 दिन पर टॉपिंग करें (फूल आने के बाद)।
- संतुलित उर्वरक व सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रयोग करें।

सब्जियाँ

- टमाटर, बैंगन, मिर्च में फल छेदक एवं रोगों की निगरानी करें।
- लौकी, ककड़ी, करेला में रोगग्रस्त पत्तियाँ हटाएँ।
- जैविक कीटनाशकों का उपयोग करें, सुरक्षित उत्पादन पाएँ।

मृदा एवं उर्वरक प्रबंधन

- हरी खाद (ढैचा/सन) की बुवाई करें जिससे मृदा की उर्वरता बढ़े।
- गोबर की खाद/कम्पोस्ट का प्रयोग करें।
- मृदा परीक्षण कराकर संतुलित उर्वरक का प्रयोग करें।

पशुपालन

- पशुओं को स्वच्छ व ठंडे स्थान पर रखें।
- हरे चारे के साथ संतुलित आहार दें।
- खुरपका-मुंपका (FMD) से बचाव के लिए टीकाकरण कराएँ।

मौसम पूर्वानुमान (अगस्त)

- अधिकांश क्षेत्रों में सामान्य से अधिक वर्षा की संभावना।
- कहीं-कहीं भारी वर्षा हो सकती है, जल जमाव से बचें।
- खेतों में जलनिकास की समुचित व्यवस्था रखें।

महत्वपूर्ण सुझाव

- कीटनाशकों का छिड़काव सुबह या शाम करें।
- फसल अवशेष न जलाएँ, जैविक खाद के रूप में उपयोग करें।
- सूक्ष्म सिंचाई (ड्रिप/स्प्रिंकलर) अपनाएँ, जल की बचत करें।
- कृषि विज्ञान केंद्र से संपर्क कर तकनीकी सलाह अवश्य लें।

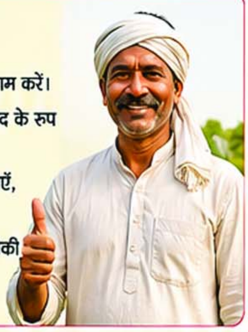

किसान हेल्पलाइन

कृषि संबंधी जानकारी के लिए हमसे जुड़ें

94251-01132

Kisaan Helpline +91-7415538151

www.krishakbharti.in

bhartikrishak75@gmail.com

मिट्टी की खुशहाली, किसान की समृद्धि – यही है हमारा संकल्प

कृषक एकता – समृद्ध भारत की गारंटी

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक राजू सिंह गुर्जर द्वारा कंचन ऑफसेट, चिंतामणि शास्त्री की गली, सात भाई की गोठ, लक्कडखाना, ग्वालियर, म.प्र.-474001 से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास, दीनदयाल नगर, ग्वालियर, म.प्र.-474005 से प्रकाशित। संपादक : राजू सिंह गुर्जर (मोबा. 9425101132, 0751-4070802)